॥राम॥

॥ रामकथा ॥

मोरारिबापू

मानस-रामदेवपीर

रामदेवरा (राजस्थान)

धन्य भरत जय राम गोसाईं। कहत देव हरषत बरिआईं।।
करुनामय रघुनाथ गोसाँई। बेगि पाइअहिं पीर पराई।।

सत्य प्रेम करुणा

।। रामकथा ।।

मानस–रामदेवपीर

मोरारिबापू

रामदेवरा (राजस्थान)

दिनांक : ५-११-२०१६ से १३-११-२०१६

कथा-क्रमांक : ८०२

प्रकाशन :

अक्टूबर, २०१८

प्रकाशक

श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,

तलगाजरडा (गुजरात)

www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट

© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक

नीतिन वडगामा

nitin.vadgama@yahoo.com

रामकथा पुस्तक प्राप्ति संपर्क–सूत्र :

ramkathabook@gmail.com

+91 704 534 2969 (only sms)

ग्राफिक्स

स्वर एनिम्स

प्रेम–पियाला

रामदेवपीर बाबा की पावन तीर्थभूमि रामदेवरा (राजस्थान) में दिनांक ५–११–२०१६ से १३–११–२०१६ दरमियान मोरारिबापू की रामकथा 'मानस–रामदेवपीर' सम्पन्न हुई।

बापू ने 'रामदेवपीर' शब्द में निहित 'राम' 'देव' और 'पीर' शब्दों के विभिन्न कोशगत अर्थ का विवरण किया। साथ ही बापू ने ऐसा सूत्रपात भी किया कि राम है सत्य, देव है प्रेम और पीर है करुणा। एवम् आख़िर में ऐसा सूत्रात्मक निवेदन भी किया कि रामदेवपीर ने रामरूप में सेवा की, देवरूप में सुमिरन किया और पीररूप में परम का साक्षात्कार किया।

रामदेवपीर बाबा ने जो परचें पूरे और समाधि के समय उन्होंने जो चौबीस फ़रमान दिये उसके बारे में बापू ने कहा कि जो वास्तविक है और आज की इक्कीसवीं सदी में जो प्रेक्टिकल लगे उसकी चर्चा मैं करूंगा। केवल स्थूल चमत्कार में मेरी रुचि नहीं है। रोज सुबह में सूरज निकले ये मेरे लिए चमत्कार है। रोज फूल खिलता है वो बहुत बड़ा परचा है। नदी कल–कल बहती है, बहुत बड़ा परचा है। एक आदमी एक आदमी से प्यार करे, परचा है। तो श्रद्धाजगत कहते हैं उसकी भी महिमा है। महापुरुष क्या नहीं कर सकते? कुछ भी कर सकते हैं, अवश्य।

रामदेवपीर ने अंधे को आंखें दी; मरे को जीवित किया; पंगु को पैर दिये; गूंगे को जबान दी। यह सब परचें में आता है। यह वे कर ही सकते हैं, सवाल ही नहीं। तुम्हारे पैर न हो तो जयपूर की संस्था पैर दे सकती है, तो रामदेवपीर बाबा पैर न दे? एक विज्ञान कर सकता है, टेकनोलोजी कर सकती है। तो बाबा तो पीर है। मुझे लगता है, आज छः सौ साल बाद यह अर्थ करना चाहिए कि जो मरे–मरे थे उन सब को रामदेवपीर ने होंसला भर दिया।

पीर के गुण–लक्षण रेखांकित करते हुए बापू का कहना हुआ कि जैसे शरीर में पंचतत्त्व होते हैं, वैसे पीर बनता है पांच विशेष तत्त्वों से। एक, जहां कोई परदा न हो वो पीर। जहां कपट नहीं, फ़रेब नहीं, छल नहीं, दंभ–पाखंड नहीं वो पीर। दूसरा, जहां प्याला है वो पीर। यह प्याला ओर कोई नहीं, प्रेम का प्याला है। तीसरा, जहां परचा है वो पीर। परचा का मतलब है, जो पूर्ण रूप से जगत के सामने प्रगट हो जाए वो पीर। चौथा, अनुभव करते–करते अंत:करण प्रमाण मिल जाय और कोई व्यक्ति पामर नहीं, परम लगे उसे पीर समझना। पांचवां, कोई पद–प्रतिष्ठा मिलने के बाद भी जो असंग रहे वो पीर।

बापू ने पीर की अर्थछाया विस्तृत करते हुए कहा कि जो परम साधना करता है और जो हमारे लिए त्याग करता है वो पीर है। फिर कश्मीर, चीन, राजस्थान, कच्छ और गुजरात की बोर्डर हो, जहां–जहां मेरे देश के नौजवान अपना सब कुछ कुरबान करने के लिए खड़े हैं, वो मेरे लिए पीर हैं। पीरत्व का कोई गणवेश नहीं होता, पीरत्व एक अनुभूत जीवनशैली का नाम है।

'मानस–रामदेवपीर' रामकथा में व्यासपीठ से रामदेवपीर के चरित्र का दर्शन हुआ। साथ ही 'रामचरित मानस' अंतर्गत 'राम', 'देव' और 'पीर' के कौन–से अर्थ है उसकी तात्त्विक चर्चा भी हुई।

– नीतिन वडगामा

पीरत्व का कोई गणवेश नहीं होता, पीरत्व एक अनुभूत जीवनशैली का नाम है

धन्य भरत जय राम गोसाईं। कहत देव हरषत बरिआईं।।

करुनामय रघुनाथ गोसाँई। बेगि पाइअहिं पीर पराई।।

बाप! सब से पहले इस पावन तीर्थ भूमि को प्रणाम करते हुए, अभी-अभी जब मैं आया तो सब से पहले भगवान रामदेवजी बाबा की समाधि पर आ गया। मैंने दर्शन किया। उस समाधि को और सभी चेतनवंती समाधियों को व्यासपीठ से मेरा प्रणाम। कथा में उपस्थित सभी पूज्य संतगण, रामदेवरा समाधि के स्थान के उन्हीं के ही वंशज वर्तमान गादिपति आप और आपके सभी परिवारजनों को मेरा प्रणाम। आज की कथा में उपस्थित हमारे समाज के विधविध क्षेत्र के आदरणीय महानुभावों को आदर करता हूं। आप सभी मेरे श्रोता भाई-बहन और इस कथा के केवल, केवल और केवल निमित्तमात्र बने हमारे मदनभैया और उनके परिवारजन और विज्ञान के सद्उपयोग से पूरी दुनिया में सुनी जा रही इस रामकथा को अनगिनत श्रोता भाई-बहनों और सभी को व्यासपीठ से मेरा प्रणाम।

दीपावलि यद्यपि बीत गई। नया साल शुरू हो गया। आज पांचवां दिन, लाभपंचमी है। एडवान्स में तो मैंने दीपावली की शुभकामना कटरा से सब को दी थी। लेकिन फिर आप सभी को नये साल की आज लाभपंचमी के पावन दिन की सभी को बहुत-बहुत बधाई हो, शुभकामना हो। और ख़ास कर के जिस हवाई पट्टी पर उतरकर मैं यहां आया हूं उस हवाई पट्टी पर तेहनात मेरे देश के नौजवानों को लाभपंचमी की बहुत-बहुत शुभकामना देता हूं और प्रणाम करता हूं।

मैं सोच रहा था कि मैं यहां किस विषय पर बोलूं वो अभी निर्णय नहीं कर पा रहा हूं। कल पक्का हो जाएगा। अभी तो जो चौपाई मन में आई वो उठा ली है! लेकिन यहां बैठने के बाद मन कहता है, मेरे सद्गुरु भगवान मुझे शायद संकेत

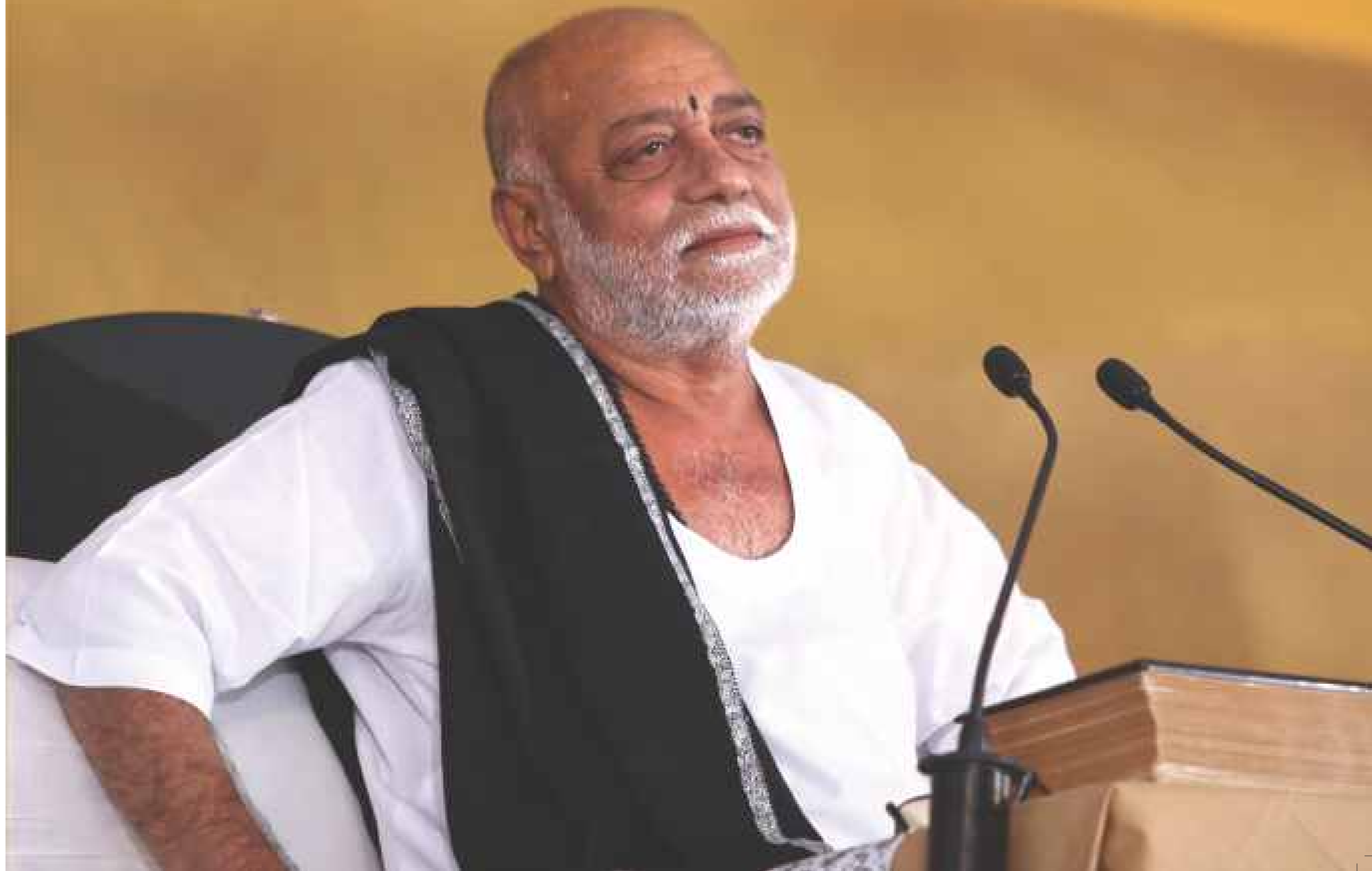

करत रहे हैं कि इस कथा में मैं 'मानस-रामदेवपीर' पर बोलूं। क्योंकि 'रामचरित मानस' में अनेक बार परब्रह्म परमात्मा भगवान राम का नाम आया है। यही 'रामचरित मानस' में बिलग-बिलग संदर्भ में अनेक बार 'देव' शब्द भी आया है। और कुल मिलाकर 'रामचरित मानस' में अठारह बार 'पीर' शब्द आया है। ऐसी दो पंक्तिओं को जोड़कर कल मैं आपके सामने रखूंगा। एक तो ओलरेडी ले ली जो स्मरण में आई। तो इस कथा का विषय रहेगा 'मानस-रामदेवपीर।' 'मानस' यानी 'रामचरित', मेरा हृदय; मेरे मानस में रामदेवपीर कौन है? और मेरे हृदय में रामदेवपीर कौन है? आपके हृदय में रामदेवपीर कौन है? उसकी मुझे चर्चा करनी है इस पावन भूमि पर।

यहां साडे छः शताब्दियां पहले जिसको श्रद्धाजगत भगवान द्वारिकाधीश का अवतार मानते हैं, ऐसे भगवान रामापीर की समाधि है। मेरी समझ में ये पूरा विश्व तीर्थ है। यद्यपि इस विश्व को हमनें पूरा बिगाड़ दिया है! तीर्थ को मलिन कर दिया है! वायु को प्रदूषित कर दिया! पृथ्वी को भी प्रदूषित की! जल को प्रदूषित किया! अग्नितत्त्व का दुरुपयोग कर के उसको प्रदूषित किया! आकाश को प्रदूषित किया! करीब-करीब चौबीसों तत्त्वों को हस्तक्षेप कर के हमनें प्रदूषित किया है! वर्ना मेरी समझ में, तलगाजरडा की समझ में पूरा विश्व तीर्थ है। लेकिन बाप! पूरा विश्व तो हमने देखा नहीं है, हृदय की अनुभूति के आधार पर कह रहा हूं। चंद्र, तारें, सूरज अनगिनत ये पूरा विश्व है मेरी दृष्टि में पूरा तीर्थ। लेकिन पृथ्वी पर तो हम घूमे हैं। जो हमें सब से ज्यादा निकट पड़े, जहां हम रह रहे हैं वो पृथ्वी तीर्थ है। पृथ्वी को गो यानी गाय कहा है शास्त्र में। गो मानी पृथ्वी; गो मानी इन्द्रिय। गाय को हम तीर्थ कहते हैं। पृथ्वी तीर्थ है। पूरा विश्व तीर्थ है। पृथ्वी पर जो भी है यद्यपि हमनें बिगाड़ा है जरूर! और निकट आए पृथ्वी पर हमारा भारत तीर्थ है। सारे जहां से अच्छा हिन्दुस्तान हमारा। इस तीर्थ में हम, आप घूमे हैं। भारत में भी कई प्रांत है। सब का अपना-अपना तीर्थत्व है अवश्य।

मैं आज राजस्थान में बोल रहा हूं इसलिए राजस्थान की सराहना करने का कोई उपक्रम नहीं है। लेकिन थोड़ा विशेष पक्षपात से कहूं तो राजस्थान धीर संतगण मीरां आदि, वीर महाराणा प्रताप आदि कई और पीर यानी रामदेवपीर। इसलिए राजस्थान मेरी दृष्टि में तीर्थ है। तीर्थ में भी रामदेवरा, जिस भूमि पर हम बैठे हैं बहुत निकट पड़ रहा है ये तीर्थ। और इससे भी निकट मैं बैठ रहा हूं 'रामचरित मानस' के निकट। और 'रामचरित मानस' का जन्म हुआ है संवत् सोलह सौ इकतीस की रामनवमी के दिन। जैसे राम का जन्म होता है रामनवमी के दिन, वैसे रामकथा का जन्म रामनवमी के दिन है। इसलिए मेरे तुलसी ने कहा है-

जेहि दिन राम जनम श्रुति गावहिं।
तीरथ सकल तहां चलि आवहिं।।

जहां रामकथा होती है वहां सब तीर्थ होते हैं। इसलिए रामदेवरा में नव दिन के लिए सब तीर्थ है। इस पावन तीर्थ में नव दिन के लिए कथा में बैठना हम सब के लिए लाभपंचमी का बड़ा लाभ है। 'को लाभः?' 'भागवतजी' में उद्धव के संवाद में आया 'को लाभः?' 'लाभौ भक्तिरुत्तमा।' उत्तम पुरुष की भक्ति के समान कोई लाभ नहीं है। और रामदेवपीर बाबा एक उत्तम पुरुष है, एक अवतार के रूप में श्रद्धा जगत उसकी आरती उतारे। तो लाभपंचमी का दिन आज का हमारे लिए बहुत शुभ है।

तो मेरे मन में कई समय से ऐसा चल रहा था, कभी समय मिले रामदेवरा में तो बाबा रामदेव की समाधि के पास नौ दिन रामकथा का अनुष्ठान करें। और आज इस साल लाभपंचमी के दिन ये बहुत समय का मनोरथ पूरा हुआ। हमारे मदनभैया ने ये बात सहर्ष की ये रामकथा तो मुझे ही मिलनी चाहिए। और आज रामदेवरा एक तीर्थ में हम परम लाभान्वित होने जा रहे हैं उसकी मुझे बहुत खुशी है। मैं छोटा था तो कभी-कभी गांव में कोई आये और रामदेवपीर का आख्यान सुनाये उस समय सुनता था। आजकल तो हमारे गुजरात में कई रामामंडल चलते हैं। रामदेवपीर की पूरी लीलाओं को पूरी रात बहुत श्रद्धा से भक्तिपूर्वक उसका दर्शन करते हैं। गुजरात के सौराष्ट्र के कालिदास पंडित बापा और मोहनदासबापू, जसदण एक ग्रंथ ले आये 'तुवरायण' आज गुजरात में रामदेवपीर बापा की कथाएं नव-नव दिन हमारे महापुरुष कहते हैं और उसके ग्रंथ भी प्रकाशित हुए हैं। एक ग्रंथ को तो मैंने शुभकामना दी है जिसमें चौपाई, छंद कर के पूरा चरित्र चित्रित किया है। रामदेवपीर बाबा के नवरात्र उत्सव मनाये

जाते हैं। इस भूमि पे कभी योग बने, वायक रामदेवजी भेजे तब जाना ऐसा मन में था और रामदेवपीर ने वायक भेजा और आज हम इस पीर की भूमि पर आ गये।

रामदेवपीर बाबा ने चौबीस परचे पूरे और समाधि के समय उसने चौबीस फ़रमान दिये। मेरी स्मृति में आये उसकी चर्चा आपके साथ करूंगा। जो वास्तविक है आज की इक्कीसवीं सदी में ये प्रेक्टिकल लगे। केवल स्थूल चमत्कार में मेरी रुचि नहीं है। मेरे लिए रोज सुबह में सूरज निकले ये चमत्कार है। रोज फूल खिलता है वो बहुत बड़ा परचा है। नदी कल-कल बहती है, बहुत बड़ा परचा है। एक आदमी एक आदमी से प्यार करे, परचा है। मानवता से एक दूसरे को गले लगाये, परचा है। तो श्रद्धाजगत कहते हैं उसकी भी महिमा है। महापुरुष क्या नहीं कर सकते? कुछ भी कर सकते हैं, अवश्य। मैं यहां आनेवाला था, बैठा था, एक भाई ने चिठ्ठी दी कि बापू, आप वहां जा रहे हैं तो लीलुडो घोडलो समझावजो। जिस घोड़े पर रामदेवपीर बाबा बिराजते वो लीलुडा घोड़ा है वो उनका नाम भी हो सकता है। लीला मानी हरा। और शब्दकोश में घोड़े का एक अर्थ है मन। इन्सान का मन अश्व है। मन चंचल है। घोड़े के जो-जो लक्षण है वो मन को लागू होता है। इस दुनिया में जिसका मन हराभरा पवित्र होगा उसके उपर रामापीर आ कर बैठेगा।

तो आज के संदर्भ में ये जो चौबीस परचें की बात है, मुझे अच्छी लगी। भजन में और उसकी वाणी में और चौबीस फ़रमान है वो तो सीधे-सादे सामान्य जनता भी समझ सके और जी सके ऐसे ये चौबीस फ़रमान। चौबीस फ़रमान चौबीस अवतार का एक-एक सूत्र हो ऐसा लगता है। विचारणीय है। छोटे-बड़े चमत्कार तो आज का विज्ञान भी कर रहा है। और इतनी महान ज्योति यहां उतरी जिसने अस्पृश्यता का निषेध कर दिया। जिसने वर्णभेद, धर्मभेद, अंधश्रद्धा का निषेध कर दिया। आपने कभी सोचा है, रामदेवजी बाबा अजमलराय के घर क्यों आये? अजमल राजा भक्ति करे। अजमल का अर्थ अज मानी अजन्मा ईश्वर जिसका कभी जन्म नहीं हुआ। मल का अर्थ है मैल, गंदगी। रामदेवजी किसके घर प्रगट होना चाहें? जिसके जीवन में मैल-गंदगी जनमन लेश की हो ऐसे पवित्र घर रामदेवजी प्रगट हो सकते हैं। द्वारिकाधीश के पूजारी ने तो केवल टालने के लिए कहा, ये दरिया में जाये वो भगवान का दर्शन कर सके। सिंधु में रहता है परमात्मा। तो पूजारी को महाराजा अजमलराय ने पूछा, मेरे से पहले कोई गया है? तो कहा, हां, एक पीपाजी गये हैं। टालने के लिए कहा। और आपने विश्वास से बात पकड़ ली। और आप कथा से परिचित है। जिसके जीवन में बुराई, गंदगी, कषाय, विकारों, दुरित का जन्म न हुआ हो ऐसे महान पुरुष के घर रामदेवपीर को जन्म लेने की इच्छा होती है। तो चौबीस परचें और चौबीस फ़रमान ये बड़ी प्यारी बात है। उसके जीवन की बातें है वो मैं कहूंगा। आप जानते हैं, जिसके जनम के क्या कारण है? फिर क्या-क्या हुआ? तो मन में था कि कभी रामदेव बाबा के स्थान में जा कर आज के संदर्भ में और 'मानस' के आधार पर चर्चा करेंगे। मेरा मूल तो 'रामचरित मानस' है। इसके आधार पर मुझे क्या लग रहा है? आप से मैं संवाद करूंगा।

करुनामय रघुनाथ गोसाँई।
बेगि पाइअहिं पीर पराई।।

शब्दकोश में, संस्कृत शब्दकोश में और गुजराती शब्दकोश में, राजस्थानी शब्दकोश में पीर के अर्थ दिये गए हैं। आज पहले दिन पीर मानी क्या? हिंदवो पीर-

लीलुडो घोडलो ने हाथमां छे तीर,
वाणियानी वहारे चड्या रामदेवपीर,
मारो हेलो सांभळो हो...हो...जी...

सुबह में कोई आपको 'हेलो' कहे तो कितना अच्छा लगता है! मारो हिंदवो पीर; तो सभ्यताओं का बहुत बड़ा संगम रामदेवजी बाबा ने किया है। एक बहुत बड़ा मेसेज दिया सेतु का, समन्वय का। तो पीर के कुछ अर्थ होते हैं। जब हम रामदेव बाबा को पीर कहते हैं तो उसके अर्थ समझना आवश्यक होगा। एक अर्थ होता है पीर मानी किनारो, तीर। इस दुनिया में पीर हम उसको कह सकते हैं जो हमारा किनारा बन जाय। हमें तारे, हमें डुबोये ना। हमें किनारे पर लगा दे; हमें धन्य कर दे। मैंने पूरे विश्व को तीर्थ कह के भूमिका बनाई। हमारे यहां पीर का एक अर्थ है तीर्थ। पीर मानी तीर्थ। जिस मंदिर में आप पीर को बिराजमान करो वो तीर्थ। जहां पीर बैठा है वो तीर्थ। और हमारे जीवन में तीर्थत्व आ जाय तो हम पीर बन जाय। पीर का एक अर्थ है नखशिख पवित्र व्यक्तित्व; जैसे महाराजा अजमल। आपकी दृष्टि में लगे कि ये व्यक्ति नखशिख पवित्र है तो आपके लिए

पीर है। नखशिख पवित्र व्यक्तित्व को हमारे यहां विद्वानों ने पीर कहा है। 'पीर' शब्द का एक अर्थ होता है साधु। - भगवद् गो मंडल। फिर वो किस धर्म का है, मतलब नहीं; साधु होना चाहिए। और साधु कौन? वो हम 'रामायण' में देख सकते हैं साधु कौन? पीर का एक अर्थ है उत्सव। जो व्यक्ति आठों प्रहर आनंद-उत्सव में रहता उसको पीर कहते हैं। जिसके जीवन में आप उदासीनता न देखो, निरंतर आठों पहर आनंद, जैसे गंगासती कहती है। इस्लाम धर्म में कई संत हुए हैं इन संतों को भी पीर का एक अर्थ होता है वली। इस्लाम धर्म का शब्द है। पीर मानी वली। पीर का एक अर्थ होता है ओलियो, फ़कीर। हमारे यहां भजनिक गाते हैं-

हद में चले सो ओलिया बेहद चले सो पीर।
हद अनहद दोनों चले उनका नाम फ़कीर।

पीर का एक अर्थ होता है बाप। मैं 'बाप' कहता हूं। तात, पिता, मारो बाप, लोको बोले छे। पीर का अर्थ है तात, बाप, पिता, मुझो पीर, मारो बाप! पीर का एक अर्थ है, हमको अच्छे मार्ग पर ले जा कर मार्गदर्शन करे, ऐसे मार्गदर्शक को, ऐसे उपदेशक को जो अच्छे मार्ग पर चल चुका हो ऐसे व्यक्ति को हमारे यहां पीर कहा जाता है। उपदेशक जो हमें गाईड करे। यहां कोई धर्म, वर्ण, कोम की चर्चा ही नहीं है। यहां केवल सार्वभौम सूत्रों की चर्चा है 'पीर' शब्द में। हम लोग छोटी-छोटी मान्यताओं के कारण मानवता चुक जाते हैं! और खबर नहीं, हमारी कट्टरता के कारण हम धर्म के सही रास्ते समझ नहीं पाते! 'रामचरित मानस' में जहां बार-बार उच्चारण हुआ है वहां 'पीर' शब्द का अर्थ है पीड़ा, पीड़। कौन पीड़? नरसिंह मेहता कहता है-

वैष्णवजन तो तेने कहीए जे पीड पराई जाणे रे।

वो पीर है, जो दूसरो की पीड़ा को समझे। दूसरे के दर्द को महसूस करे वो पीर है।

बेगि पाइअहिं पीर पराई।

परमात्मा राम जो दूसरों की पीड़ को जल्दी पहचान जाते हैं। 'हनुमानचालीसा' का आप पाठ करते हैं-

संकट कटै मिटै सब पीरा।

पीर के ओर बहुत से अर्थ मिलते हैं। लेकिन करुणा, दया, आर्द्रता, अनुकंपा, क्षमाभाव से जो भरपूर व्यक्ति हो उसे पीर कहते हैं। हमने कितने ही गुनाह किये हो लेकिन क्षमा कर दे। जिसका हृदय हमारे लिए द्रवीभूत रहे और करुणा से परिपूरित रहे उसको पीर कहते हैं। और मुझको बहुत बल मिलता है 'पीर' शब्द के द्वारा जो मैं पढ़ता हूं। जो आदमी सत के मारग पर चले; निरंतर सत। तो सत्पथ पर चलनेवाला पीर माना गया है। उर्दू अदब में प्रत्येक मोहब्बत करनेवाली व्यक्ति को पीर माना गया है। हरेक को मोहब्बत करे, कहते हैं आदमी पीर जैसा लग रहा है। चलता-फ़िरता पीराणा है। और पीर का अर्थ करुणा तो होता ही हैं। तो व्यासपीठ को बहुत बल मिलता है। पीर का तीनों अर्थ, पीर मानी सत्यपथ पर गमन, पीर मानी आर्द्रता, करुणा; पीर मानी परस्पर मोहब्ब।

तो 'रामचरित मानस' अंतर्गत पीर के कौन-कौन अर्थ है? देव के कौन-कौन अर्थ है? राम के कौन-कौन अर्थ है? इसकी 'रामचरित मानस' के आधार पर नव दिन रामदेव बाबा की समाधि के निकट बैठ कर उनके चरित्र का दर्शन करते-करते हम अपने जीवन में सत्यत्व का अनुभव करे इसलिए इस कथा का विषय मेरी व्यासपीठ चुन रही है 'मानस-रामदेवपीर।' रामदेववाली चौपाई कल मेरी स्मृति में आयेगी, बोलूंगा; आज आ नहीं रही है। आज एक पंक्ति से चला लेना, कल दो रोटी। यहां राजस्थान में रामदेवजी बाबा का एक शब्द 'रामरसोडा' है, प्यारा शब्द है। मेरी बिनती है, आप प्रसाद जरूर पाना क्योंकि अन्न बांटना मानी ब्रह्म बांटना। उपनिषदों ने अन्न को ब्रह्म कहा। इसलिए उपनिषद की भाषा में ये अन्नक्षेत्र नहीं, ब्रह्मक्षेत्र है। 'अन्नम् ब्रह्मेति व्यजानात्।' रामदेव बाबाजी ने क्या किया? आज इतने सालों के बाद इस परम को हम क्यों याद कर रहे हैं? कई लोग तो इतना रामदेव बाबा को याद करते हैं! और जिसको बड़े-बड़े धर्माचार्य कुबूल नहीं कर ले, बड़े-बड़े शास्त्रवेत्ता कुबूल न करे ऐसी चेतना को रामदेवपीर बाबा ने अपने गले लगाया, सब को कृतकृत्य किया, सब को दीक्षित किया। ये बहुत बड़ा काम किया। आखिरी व्यक्ति तक बाबा रामदेव गये। तो ये 'मानस-रामदेवपीर' लेकर अर्घ्य रूप में संवाद करेंगे। आज की एक पंक्ति-

करुनामय रघुनाथ गोसाँई।
बेगि पाइअहिं पीर पराई।।

तो पीर के कई अर्थ है। एक अर्थ है जो दूसरों के लिए सर्वस्व का त्याग करे। जिसमें अपना कोई हेतु न हो, स्वार्थ न हो। पीर का एक अर्थ होता है परम पुरुषार्थ। राम मानी परम परमार्थ और स्वर्ग के देवता के बारे में कहूं तो परम स्वार्थ, जो चालाक-स्वार्थी है। पीर जो परम साधना करता है, जो हमारे लिए त्याग करता है। फिर कश्मीर हो, चाईनीज़ बोर्डर हो, राजस्थान की बोर्डर हो, कच्छ और गुजरात की बोर्डर हो, जहां-जहां मेरे देश के नौजवान अपना सब कुछ कुरबान करने के लिए खड़े हैं, मेरे लिए वो पीर है। ये धीरजवान लोग पीर है। पीरत्व का कोई गणवेश नहीं होता, पीरत्व एक अनुभूत जीवनशैली का नाम है। पीर का एक अर्थ है संवेदना। कोई हमारे पर कुछ कर के हमारे अनगिनत लोगों को खत्म न कर दे इसी प्रकार की एक संवेदना प्रगट हुई। यहां इसी भूमि पर एक नया तीर्थ प्रगट हुआ जिसका नाम है पोखरण अणुतीर्थ; मेरा मतलब संवेदना के लिए है, किसी को मारने के लिए नहीं। कोई नासमझी करे और हजारों लोगों की वो हो जाय इसी संवेदना के लिए ये अणुतीर्थ खड़ा है। तो ये जो हमारी रक्षा कर रहे हैं, सर्वस्व का त्याग कर के बैठे हैं। पीर का कोई गणवेश नहीं होता। अखंड संयम का प्रतीक है पीर।

तो बाप! इस पावन तीर्थ में यहां समाधि है। मैं जीवन में पहली बार यहां आया। मनोरथ था। मुझे अच्छा लगा। लगता है कोई है यहां, कोई बैठा है। हमारी श्रद्धा होनी चाहिए। आज की थोड़ी भूमिका प्रारंभ में 'मानस-रामदेवपीर।' अब 'रामचरित मानस' का एक नियम है; वक्ता जिस सद्ग्रंथ की चर्चा करेगा उसका परिचय अपने श्रोता को प्रदान करे। परचा का एक अर्थ है परिचय करा देना। ब्रह्म का परिचय करा दे; पहुंचे हुए फ़कीरों का परिचय करा दे। पीरों, ओलिया, सच्चा स्वर्ग क्या है उसका परिचय करा दे। सच्चा सुख क्या है उसका परिचय करा दे। ये सबको परचा कहते हैं।

जेरुसलाम में दो धर्मस्थान आमने-सामने ईस्लाम और इसाईयों का और अपने-अपने अनुयायी तीर्थस्थान समझकर वहां जाये। वो अपने-अपने परचें की बात करे। वो अपने-अपने चमत्कार की बात करे। फिर एक-दूसरें में संघर्ष हो गया। एक बार एक ग्रूप के अनुयायी ने सामनेवाले को कहा, हमारा जो धर्मगुरु है, रात को दस बजे से सुबह पांच बजे तक स्वर्ग में जाता है। है कोई तुम्हारे पास स्वर्ग में दस से पांच सदेह स्वर्ग में जाय? सामनेवाले ने कहा, ये तो असंभव है। सामनेवाले को लगा, इसमें कोई गड़बड़ है। निर्णय करना चाहिए, ये कैसे होता है? तो उसने कहा, दस बजे कमरा बंद करता है और दूसरे दरवाजे से हम कई बार जाते हैं वो कमरे में होते ही नहीं! पांच बजे देखते हैं तो कमरे में होते हैं। सामनेवाला अनुयायी चतुर था। उसने योजना बनाई। रात को नव बजे पता न चले ऐसे वो छिप गया! रातभर देखा, ये कहां स्वर्ग में जाता है? और उसने देखा, कमरे में एक अलमारी थी लेकिन वो अलमारी नहीं थी। खोलो तो उसमें गुफ़ा थी। बराबर दस बजे धर्मगुरु उठा और उस गुफ़ा में गया। जो छिपकर बैठा था वो भी पीछे-पीछे गया उसको पता न लगे ऐसे। ये जो अंदर का रास्ता था पार कर के गया तो बगल में एक जंगल था। जंगल में कई बीमार, भूखे लोग पड़े थे और ये धर्मगुरु वहां पहुंचता है। वो सामान ले कर गया था। वो सब लोग प्रतीक्षा में थे। सब ने घेर लिया। भूखे को रोटी दी। मरीज़ को मलमपट्टी की; निर्वस्त्र को वस्त्र दिये; बच्चों को दूध पिलाये; ठिठुरते हुए को कंबल औढ़ाये और चार बजे तक गरीबों की सेवा करता रहा। और ये आदमी जो विरोधी था, देखता रहा! अब चार बजने को है। वो वापिस अपने कमरे में आता है। पानी पीने को जाता है और अलमारी का दरवाजा बंद करने को जाता है। जो देखने के लिए गया था वो बाहर आ के अपने माननेवाले को कहता है, हां, वो रात दस से सुबह पांच बजे तक स्वर्ग में जाता है। आज मुझे परचा दिखाई दिया! उसमें मुझे सही स्वर्ग दिखा दिया! इस रूप में जो स्वर्ग का परिचय करा दे। स्वर्ग कहां है? कोई दीनहीन, बेसहारा, उपेक्षित है उसकी सेवा करता है; करुणा से भर देता है; मोहब्बत करता है। सामनेवाले को मानना पड़ता है, सही में वो स्वर्ग में जाता है।

तो मेरे भाई-बहन, जो परिचय करा दे वो परचा। मेरी दृष्टि में ये परचा है। हां, कोई खुश्बू आये। लोबान की खुश्बू आये। मैं इस श्रद्धा का विरोधी नहीं हूं। इन्सानियत की खुश्बू का परिचय करा दे इससे बड़ा परचा क्या? हमारे लिए समर्पण करे उसे भी पीरत्व का दर्जा दिया है। तो ये है 'मानस-रामदेवपीर' की भूमिका। अब परिचय, परचा

नहीं। 'रामायण' पढ़ो तो ये हो जाय। परचा नहीं, परिचय। इस ग्रंथ से कौन विश्व में अनभिज्ञ है? विश्ववंद्य गांधीबापू ने कहा है, जिसे 'रामायण' और 'महाभारत' का परिचय नहीं है उसको हिन्दुस्तानी होने का अधिकार नहीं है। सब से पहले 'रामायण' इस धरती पर उतरा उसे आदि कवि वाल्मीकि ने संस्कृत में सर्जन किया आप जानते हैं लेकिन गोस्वामीजी ने सोचा कि सब लोग संस्कृत में नहीं समझ पायेंगे इसलिए कहते हैं कालान्तर में वाल्मीकि तुलसी हुए। उन्होंने संवत् सोलह सौ इकतीस में इसकी रचना की। मैं 'रामचरित मानस' की कथा कहूं इसीलिए किसी को लगे बड़ाई है पर बहुत अनुभव हो चुका ये क्या है। मैं पुन्य स्मरण करूं चित्रकूटवाले स्वामी रामभद्राचार्य, उसने ये बात कही थी तो हमारे कोई श्रोता ने चेनल पे सुनी थी तो श्रोता ने बताया तलगाजरडा में, उसने कहा, 'सर्वग्रंथान् परित्यज्य मानसम् शरणम् व्रज।' जैसे 'गीता' में कहा है, 'सर्वधर्मान् परित्यज्य', किसी को बड़ाई लगे लेकिन जिसको अनुभव है वो मानेगा। मैंने ये बात सुनी तो मेरे से रहा नहीं गया। मैंने कहा, जगद्गुरु को फोन लगाओ, मैं मेरी प्रसन्नता व्यक्त करूं। आपकी बात सुनी तो बड़ी प्रसन्नता हुई। तो उन्होंने कहा, मैं पूरा श्लोक सूना दूं-

सर्वग्रंथान् परित्यज्य मानसम् शरणम् व्रज।
मानसम् सर्व पापेभ्यो मोक्ष्यस्यामि मा शुचः।।

'मानस' तुझे सर्व पापों से मुक्त करेगा। छोड़िये सब ग्रंथ गड़बड़! आ जा 'मानस' की शरण में। विश्व का आखिरी उपाय है ये 'रामचरित मानस।' रामभद्राचार्य ये संस्कृत के बड़े विद्वान है।

'रामचरित मानस' में सात सोपान है। आप जानते हैं। मैं एक परंपरा को निभा रहा हूं। सात सोपानों में गोस्वामीजी ने इस परम शास्त्र को ग्रंथस्थ, संपादित किया। सात सोपानों में प्रथम सोपान के मंगलाचरण में लिखा-

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
मङ्गलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।

मंगलाचरण के प्रथम मंत्र में वाणी-विनायक की वंदना। दूसरे मंत्र में श्रद्धा और विश्वास के प्रतीक शिव-पार्वती की वंदना की। आगे के मंत्र में विश्वगुरु के रूप में भगवान महादेव की वंदना की। और सीताराम के गुणगानरूपी अरण्य में निरंतर विहार करनेवाले कवीश्वर वाल्मीकि और कपीश्वर हनुमानजी की वंदना की। जानकीजी वंदना, रामजी की वंदना करते-करते गोस्वामीजी ने अपने परम शास्त्र का हेतु बताया, 'स्वान्त:सुखाय तुलसी रघुनाथगाथा।' शत कोटि 'रामायण' है हमारे यहां। प्रत्येक व्यक्ति की एक-एक रामकथा है। 'रामचरित मानस' शत कोटि क्या इससे भी ज्यादा हो सकती है। इनमें से फिर मैं एक नई रामकथा कहने जा रहा हूं, मेरे अंत:करण के सुख के लिए। तुलसी ने इस ग्रंथ का हेतु बताया और बिल्कुल देहाती शब्दों में दोहा में, छंदों में, सोरठों में इसकी रचना की। और जगद्गुरु शंकराचार्य ने हमें पांच देवों की पूजा करने का आदेश दिया था उसीको स्थापित करते पांच सोरठें में तुलसी ने देहाती भाषा में, ग्राम्य वाणी में हमारी बोली में मंगलाचरण करते हुए पहले गणेश की स्तुति की, उसके बाद भगवान सूर्य की, उसके बाद भगवान विष्णु की, उसके बाद दुर्गा यानी माँ पार्वती की और भगवान शिव पांच देवों की वंदना की। जगद्गुरु आदि शंकराचार्य भगवान ने ये पांच वस्तु हमको सिखाई। तो तुलसीदासजी ने शांकर दृष्टिकोण को 'मानस' में रखते एक सेतु निर्मित किया, एक संगम किया।

हम सब को चाहिए गणेश की पूजा करें। अब हमारे पास इतना समय कहां जो हम गणेश की पूजा करे? गणेश की पूजा मानी विनय, विवेक; हम और आप विवेक, विनय से जीये ये रोज गणेश की पूजा है। दस घंटे आप गणेश की पूजा करो लेकिन एक-दूसरे के व्यवहार में तुम विनय और विवेक का उपयोग न करे तो खाक गणेशपूजा की? युवानों को कहूंगा, आप सूर्यपूजा करो, सूर्य को जल चढ़ाओ, सूर्य नमस्कार करो तो कसरत, योगा के लिए भी अच्छी बात है। लेकिन चलो, आपको समय नहीं है; धार्मिक बात से नहीं स्वीकारते; तो सूर्यपूजा का अर्थ है जहां तक हो, हम उजाले में जीने का संकल्प करें। प्रकाश में जीये, अंधेरे में नहीं, ये सूर्यपूजा है सूक्ष्मरूप में। फिर विष्णुपूजा; 'विष्णु सहस्र' का पाठ, वेदों का पुरुषसूक्त ये हम न कर पाये। आप करो तो अच्छी बात है लेकिन विष्णुपूजा मानी व्यापकता, विशालता; हृदय को विशाल रखो। हमारे विचार संकीर्ण न हो, डबरे न हो, आकाश की तरह विशाल हो। सब का स्वीकार ये विष्णुपूजा। दुर्गापूजा; नवरात्रि में दुर्गापूजा हम करे, वंदनीय है, प्रणम्य है। लेकिन न कर पाये तो दुर्गापूजा का मेरा अर्थ है 'रामचरित मानस' में कहा है, भवानी श्रद्धा है। हमारी श्रद्धा बनी रहे। अश्रद्धा नहीं और अंधश्रद्धा भी नहीं। श्रद्धा तो होनी चाहिए। लेकिन अंधश्रद्धा नहीं। दंभ और पाखंडवाली श्रद्धा नहीं, मौलिक श्रद्धा, जो जरूरी है। तो श्रद्धामय जीवन जीना ये रोज दुर्गापूजा है। और युवान भाई-बहनों, शंकर की पूजा; हम रोज शिव का अभिषेक करे ये अच्छी बात है। शिव का अर्थ है कल्याण। जितना हमसे हो पाये मन से, वचन से, कर्म से दूसरों का कल्याण, वो हो गया शिव अभिषेक। तो स्थूल और सूक्ष्म दोनों रूप में देखना चाहिए। पांच सोरठों में पांच देवों की बात कही। और फिर 'रामचरित मानस' का पहला प्रकरण शुरू होता है गुरुवंदना। पावन गुरु परंपरा का स्मरण करते हुए तुलसी ने कहा-

बंदउँ गुरु पद कंज कृपा सिंधु नररूप हरि।
महामोह तम पुंज जासु बचन रबि कर निकर।।

गुरु की वंदना की है। 'रामचरित मानस' का पहला प्रकरण गुरुमहिमा अथवा गुरुवंदना का लिखा है। जिसको गुरु की जरूरत नहीं वो सीधा ब्रह्मत्व की प्राप्ति कर ले तो किसी को आपत्ति नहीं होनी चाहिए लेकिन उस परमतत्त्व तक पहुंचना बड़ा मुश्किल है। इसलिए हमारे यहां प्रवाही परंपरा, गुरु परंपरा है। कोई मार्गदर्शक चाहिए। चतुर किसान जो होता है वो बीज बोने के बाद रोज एक बार खेत के चक्कर लगाते हैं। इसका मतलब है, गुरु हमारे भीतर के क्षेत्र में सूत्र या बीज बो देता है फिर उसकी ड्यूटी पूरी नहीं हो जाती। हमें पता न लगे ऐसे खेत में चक्कर लगाता है कि मैंने जहां-जहां बीज बोये हैं, सूत्रपात किया है, वहां मेरा दायित्व है कि मैं चेतना के तौर पर दिन में एक बार चक्कर लगाउं। ये है गुरुमहिमा।

तो हम जैसों को गुरु चाहिए। अवतारों ने भी गुरुओं को कुबूल किया है। गुरुपद को कुबूल किया है। हमारे स्वामी रामसुखदासजी महाराज और स्वामी शरणानंदजी ये सब मूर्धन्य महापुरुष तो कहा करते कि व्यक्ति को गुरु मानना ठीक नहीं और गुरु हमारे जैसी व्यक्ति है ऐसा मानना वो भी ठीक नहीं। गुरु हमारे जैसा नहीं है। वो नर रूप में होते हुए हरि है। ये कोई दूर की महिमावंत अवस्था है। ऐसी पावन परंपरा जीवन की हर मोड पर हमें सावधान करे। इसलिए 'मानस' में पहले गुरुवंदना की बात आई। तुलसी कहते हैं, गुरुचरणरज से मेरे नेत्रों को पावन कर के रामकथा वर्णन करने जा रहा हूं। जब आंखों को गुरुचरणरज से पवित्र कर दी तो मुझे पूरा जगत सीताराममय दिखने लगा। वंदनीय बन गया, कोई निंदनीय नहीं। क्योंकि गुरुकृपा से मेरी आंखों में एक विवेक आ गया।

सीय राममय सब जग जानी।
करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

पूरा जगत वंदनीय है। मैंने पहले ही कहा, पूरा विश्व प्रणम्य है। जब आंख ठीक हो जाय तो जगत वंदनीय है। तुलसी ने पूरे जगत को ब्रह्म समझ के वंदना की है। उसके बाद जिस कुल की ये कथा है महाराज दशरथजी की, रानीओं की, भरतजी की, लक्ष्मणजी की, शत्रुघ्नजी की और सब की वंदना करते-करते क्रम में हनुमानजी की वंदना करते हैं-

महाबीर बिनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।।

'रामचरित मानस' के क्रम में हनुमानजी की वंदना कर के आज की कथा को विराम देते हैं-

मंगल-मूरति मारुत-नंदन।
सकल अमंगल मूल-निकंदन।।
पवनतनय संतन-हितकारी।
हृदय बिराजत अवध-बिहारी।।

पीर जो परम साधना करता है, जो हमारे लिए त्याग करता है। फिर कश्मीर हो, चाईनीज़ बोर्डर हो, राजस्थान की बोर्डर हो, कच्छ और गुजरात की बोर्डर हो, जहां-जहां मेरे देश के नौजवान अपना सब कुछ कुरबान करने के लिए खड़े हैं, मेरे लिए वो पीर है। ये धीरजवान लोग पीर है। पीरत्व का कोई गणवेश नहीं होता, पीरत्व एक अनुभूत जीवनशैली का नाम है। पीर का कोई गणवेश नहीं होता। अखंड संयम का प्रतीक है पीर।

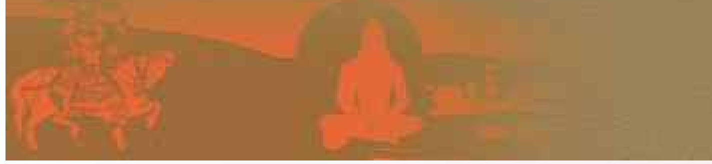

रामनाम स्वयं बीज है, जो हमें विकसित करता है

'मानस' का अर्थ होता है हृदय; 'मानस' का अर्थ मन भी होता है जिसका शब्द हम युज़ करते हैं मानसिकता। मैंने मन मना लिया। और यह एकमात्र 'मानस', 'रामचरित मानस।' विश्व में एकमात्र कोई 'मानस' ग्रंथ है तो वो है 'रामचरित मानस' यह न भूले। मेरे 'रामचरितमानस' में और गुरुकृपा से मेरे मानस में, मेरे हृदय में रामदेवपीर का क्या दर्शन है उसकी जो संतों से सुना, जो ग्रंथों से पढ़ा, जो भक्तों ने गाया; आखिरी व्यक्ति में एक छोटा-सा छोटा आदमी भी कभी रामदेवपीर बाबा की चर्चा करता है तो उनके मुख से सुनूं। सत्य जहां से मिले, ले लेना चाहिए।

मुझे बराबर याद है, तलगाजरडा मेरे गांव में मैं बैठा था। उस समय हमारे भीखाराम काका भी थे। तलगाजरडा में रामवाडी में जहां विश्वनाथ महादेव का मंदिर है; स्मशान स्थान है गांव का। साधुओं की समाधि भी हम वहां देते हैं। वहां एक दलित समाज वर्षों से सेवा कर रहा है। आज भी उसकी पत्नी, उसका बेटा, उसके बच्चे वहां सेवा करते हैं। वो दलित हमारे गांव का है। हम एक बार तलगाजरडा चित्रकूट में बैठे थे। भीखाराम काका ने उसको पूछा, तू तो रामदेवपीर बाबा को मानता है ना? बोले, हां बापू! तो तू बता, रामदेवजी बाबा की परंपरा में कुछ जो शब्द है; जैसे कि कोई उसको बीजपंथ कहते हैं; कोई महाधर्म कहते हैं; कोई उसको निजधर्म कहते हैं; कोई निजिया भी कहते हैं; कोई निजार भी कहते हैं। भीखाराम काका तो वैसे आनंद करते रहते थे। तो पूछा कि इनमें से निजार का मतलब क्या? एक सेवा करनेवाला सामान्यजन मेरे गांव का। जिसको मैं सामान्य नहीं मानता। वो अपने आपको सामान्य मानता है। उसने कहा, बापू, हमको तो और क्या पता लगे? लेकिन निजार का अर्थ है जिस पंथ में मूल व्यक्ति अथवा तो उसके आश्रित जिसका कभी भी संयम लड़खड़ाया न हो उसीका नाम है निजार। जिसका संयम भ्रष्ट न हुआ हो। यह शब्द तो मैं यूझ कर रहा हूं। उन्होंने तो बिलकुल देहाती भाषा में कहा, जो मैं यहां नहीं कह पाता।

तो छोटे से छोटा आदमी रामदेवपीर की परंपरा को जो समझा है; ऐसे कहलानेवाले छोटे-छोटे व्यक्तियों से, भक्तों से, शास्त्रों से, ग्रंथों से, अरस-परस की चर्चाओं से, जो-जो रामदेवपीर बाबा के बारे में मैंने सुना; मेरे मानस में जो

रामदेवपीर है, मेरे 'रामचरित मानस' में जो रामदेवपीर की परिभाषा प्राप्त होती है वो कभी मैं रामदेवरा में मेरी जिम्मेवारी से कहूंगा, ऐसा मेरा मनोरथ था। मेरे मन में होता है कि जो विशिष्ट महानुभाव, विशिष्ट चेतना संसार में आए उसके बारे में कहकर मेरी वाणी को पवित्र करूं। तो अब शब्द आये ही है तो मैं उसकी चर्चा करूं। रामदेवपीर बाबा की जो परंपरा है उसमें अभी-अभी जो कहा, निजार तो है ही; उसमें बीज भी है; उसको बीजमार्ग कहते हैं।

बीजमार्ग का क्या अर्थ? हमारे साधु-संत, हमारे महापुरुष यह सब बताते रहते हैं। बीजमंत्र का क्या अर्थ मेरे भाई-बहन? मेघवाळ समाज के रामदेवपीर बाबा के एक भक्त ने भी मुझे पूछा है कि बापू, हम प्रतीक्षा में थे कि यहां कब कथा हो? और कथा हो तब मुझे आप से पूछना था कि बीजमार्ग का अर्थ क्या है? आप तोड़-मरोड़कर इसका कुछ अर्थ करे तो इसका कोई मतलब नहीं। मैं इस विवाद में न जाउं। मेरा काम है संवाद करना। तुलसीदासजी ने बीजमंत्र का प्रयोग किया है। जिसको तुलसी महामंत्र भी कहते हैं और बीजमंत्र भी कहते हैं। 'रामचरित मानस' को तुलसी ने स्वयं बीज कह दिया। यह ('मानस') बीज है। अनादि ग्रंथों को देखो। ये तो क्या पता, मैं अर्थ करने बैठूं फिर कालांतर में कहे कि यह बापू ने अर्थ किया था। एक सिक्का लग जाता है। नहीं साहब! आधार चाहिए मूल का। आधार चाहिए गुरुवचन का। आधार चाहिए गंगा जैसी निष्कलंक परंपरा का।

रामदेवबाबा की परंपरा में रामदेवपीर भगवान को मैं 'भगवान' शब्द यूझ करता हूं, खास याद रखना। शायद मैंने किसी के मुंह से नहीं सुना है। मैं मानता हूं यह भगवान है। सामान्य आदमी को लोग भगवान कहते हैं तो ये भगवान है ही। क्या आपत्ति हो सकती है? भगवान रामदेव बाबा को हम बार बीज के धणी मानते हैं। बीज तो चौबीस है, बारह कहां है? एकम, दूज, तीज, शुक्ल पक्ष। वद एकम, वद बीज। दिखाई न दे तो इसका मतलब यह नहीं कि बीज मिट गई। बीज तो चौबीस है। लेकिन निष्कलंक परंपरा ने प्रकाशवाली बीज को ही पूजा है, अंधेरेवाली बीज को नहीं पूजा है। मुझे प्यारा पक्ष लग रहा है, प्रकाशवाली बीज को ही पूजो, अंधेरेवाली बीज को नहीं। बीज का अर्थ है जो रोज विकसित होता है। कारतक शुक्ल बीज, मागशर शुक्ल बीज; इसका मतलब है कि हररोज बढ़े। एक बीज खेत में बो दो वो हररोज बढ़ता है, अंकुरित होता है; एक वटवृक्ष होगा। और आपको पता होगा, है ही, मैं तो केवल स्मरण करवा रहा हूं और वो है कबीरसाहब ने पूरा ग्रंथ लिख डाला उसका नाम है 'बीजक।' गोस्वामीजी ने स्वयं 'रामचरित मानस' को बीज कहा है। तुलसी 'रामचरित मानस' में व्याख्या करते हैं-

बीज सकल व्रत धरम नेम के।

दुनिया में जितने व्रत है, जितने धर्म है, नियम है, उनका कोई बीज है तो 'रामचरित मानस' है। गोस्वामीजी को किसी ने पूछा, बीज क्या है? आपने तो 'रामचरित मानस' को बीज कह दिया! लेकिन 'रामचरित मानस' तो कितना बड़ा शास्त्र है? इनमें से सूक्ष्मतम बीज कौन है? 'विनयपत्रिका' में फिर कह दिया-

बीज मंत्र जपिये जो जपत महेस।

यह बीजमंत्र में लोग शंकर से शुरू करते हैं, लेकिन पूछो तो सही अनादि शास्त्र को कि शंकर का बीज कौन है? गोस्वामीजी कहते हैं, वो बीजमंत्र जिसको महेश जपता है वो बीजमंत्र है राम, वो बीजमंत्र है राम, वो बीजमंत्र है राम।

जथा भूमि सब बीजमय नखत निवास अकास।
रामनाम सब धरममय जानत तुलसीदास।।
-दोहावली रामायण

और कुछ न करो ना, रामदेवपीर, रामदेवपीर, रामदेवपीर, ऐसा बोलो तो वह राम बीजमंत्र है। रामतत्त्व बीज है। ऐसे-वैसे समझ न आए ऐसे मंत्रों में जाना नहीं। मुझे एक महात्मा कहते थे, बापू, बहुत मंत्र है मेरे पास, गुप्त है। मैंने कहा, रखो आपके पास! मेरे पास रामनाम है, जो बीज का भी बीज है। कोई भ्रमित करे तो भ्रमणा में मत जाना बाप! बीज उसको कहते हैं जो विकसित हो। हम तो बीज नाम पर कमजोर होते गये! विकसित तो हुए ही नहीं! साधना तो तेज लाती है, प्रकाश लाती है। बीज के बाद तीज, चौथ, पंचमी, षष्ठी; उजाला बढ़ता है। पूर्णिमा तक उजाला रहता है।

तो बाप! मेरे हृदय का रामदेवपीर क्या है? और अनादि शास्त्र 'मानस', उसमें रामदेवपीर क्या है, उसकी चर्चा करूं। आज दूसरा दिन है। बीज है आज। दूसरे दिन की कथा बीज ही हो गई ना आज! भले षष्ठी हो। कुछ ग्रंथों से,

कुछ संतों से बिलग-बिलग जगह से जो सुना था। सुनने के बाद लगता था कि एक बार रामदेवरा में जाकर मेरे मानस के जो रामदेव है वो गाउंगा। उसका आज दूसरा दिन है।

में तो प्रेम केरा पाट मंडाविया,
पाटे पधारो ए नकलंक दास।
ए जीवण भले ने जागिया,
में तो शुद्ध रे जाणीने तमने सेविया...

मुझे रामदेवपीरबाबा के बारे में बोलना था तो सावरकुंडलावाले गुणवंतबापू बहुत स्वाध्याय करते हैं, तो रामदेवपीर बाबा के भजन पे ये सब लिखते हैं। मैं उसका उपयोग करूंगा, जैसे जहां से मुझे सत्य मिला। तो यह प्रेम का पाट। इसलिए कथा को मैं प्रेमयज्ञ कहता हूं।

रामनाम स्वयं बीज है, जो मुझे और आपको विकसित करता है। भ्रमित अर्थों से बाहर आइये। अजवाळुं वधारे एनुं नाम धर्म। उजाला ओर करे। तो बीजमार्ग कहते हैं। बड़ा प्यारा शब्द है। बीज परंपरा, बीज मारग बड़ा प्यारा नाम है। उसकी बाबा रामदेवपीर की परंपरा में एक शब्द है 'निजधर्म।' मैं अपनी जिम्मेवारी से बोल रहा हूं। आपकी बाध्यता नहीं है। आप सुने वो भी बहुत है। महाधर्म क्या है? महाधर्म यानी रामकथा को पूछो-

परम धर्म श्रुति बिदित अहिंसा।
पर निंदा सम अघ न गरीसा।।

कागभुशुंडि ने गरुड को 'उत्तरकांड' में बताया कि हे वत्स, जगत में कोई महाधर्म है, परमधर्म है तो अहिंसा है। अहिंसा का अर्थ धर्म के नाम पर किसीका भी शोषण न करना। शोषण हिंसा है, पोषण अहिंसा है। तथाकथित लेबल के द्वारा किसी का शोषण न करना। मन, वचन, कर्म से किसी का धर्म के नाम पर शोषण न हो ऐसी अहिंसा महाधर्म है। पीरबाबा ने यही किया; तभी तो निष्कलंक कहलाये। एक शब्द है 'निजधर्म।' निज मानी अपना खुद का, जिसको संस्कृत में स्वधर्म कहे। पानी कहो कि जल कहो तत्त्वत: एक है। निजधर्म, स्वधर्म में रहना क्या मतलब? 'निजिया' शब्द भी आया। एक संत से मैंने उसका अर्थ सुना था। निजिया का अर्थ है न जीया। जीते जी मर गया। जीवित होकर जो जीवन की कोई आसक्ति में नहीं डूबा ऐसा भी अर्थ लगाया जा सकता है। जीवनमुक्त जिसको कहे। यह बड़ा प्यारा निष्कलंक प्रवाह है। मूल प्रवाह है उसी धारा में तो उसकी महिमा कौन गाये?

कल मैंने आप से कहा था तो यह चौपाई मुझे 'अयोध्याकांड' में प्राप्त हुई, जो आज मैंने जोड़ी है। दोनों पंक्तियों में 'रामदेवपीर' शब्द आ जाता है। 'मानस' के आधार से ज्यादा बल मिलता है। आइए, जो बीजरूप पंक्ति है उसको फिर एक बार गाये-

धन्य भरत जय राम गोसाईं।
कहत देव हरषत बरिआईं।
करुनामय रघुनाथ गोसाँई।
बेगि पाइअहिं पीर पराई।।

'मानस-रामदेवपीर', जिसका दर्शन इस कथा में हम कर रहे हैं। मैंने अभी हमारे सावरकुंडलावाले बापू को याद किया। उसने मुझे एक लिस्ट दिया। संस्कृत शब्दकोश की चर्चा मैं करूंगा। 'रामचरित मानस' तो हमारा हृदयकोश है। उसमें भी रामतत्त्व क्या है वो चर्चा हम बाद में करेंगे। लेकिन जो भाषा के साहित्यिक शब्दकोश में राम का क्या अर्थ है? शब्दकोश में राम के क्या-क्या अर्थ है, हम समझें। 'राम' का एक अर्थ है शब्दकोश में प्रेमी। प्रेमी को राम कहते हैं। कोई प्रेमी हो तो उसको जाहिर में प्रेमी-प्रेमी करो तो दुनिया टीका करेगी। यह तो विवेक नहीं है। प्रेमीजन को राम कहते हैं। अच्छा अर्थ है। मैं पहली बार देख रहा हूं। तुलसी ने तो महोर लगा दी है-

रामहि केवल प्रेमु पिआरा।
जानि लेउ जो जाननिहारा।।

आपकी क्या राय है? ये जो रामदेवपीर बाबा है वो प्रेमी होंगे कि नहीं? उनके हृदय में अनुकंपा, दया, करुणा, संवेदन न होती तो उस समय में इतना काम कौन करता? करुणा कर के आखिरी व्यक्ति को गले लगाया। रामदेवपीर भगवान का मेरा कुछ निरीक्षण है। मेरे लिए उपयोगी हुआ है। उसने कितना प्रेम किया इस संसार को? इसलिए राम है। राम प्रेमी का पर्याय है। और साहब! बड़े लोगों को सब आदर दे, बुलाये, आइए-आइए कहे लेकिन आखिरी व्यक्ति को जो प्रेम देता है वो राम है। उसने कितने कलह शांत किये! मेरा निरीक्षण है, जो रामदेवपीर बाबा ने चमत्कार किये, परचे दिये वो यह है कि कितने कलह शांत किये। उस जमाने में दीनों का उद्धार किया। यह सब से बड़ा परचा है। एक बिलग प्रकार का धार्मिक झूनून चारों ओर फैला हो और उसी में कमल की तरह रहकर जनोद्धार करना ये बहुत बड़ा परचा करना। जो भी आये कोम, वर्ण, धर्म, जात-पांत कोई भी भेद के बिना रामरसोडा खोल्या। ये सब परचा है। परचा मीन्स हमारी आंखो देखा साक्षात्कार। आज जहां भी कथा होती है, हजारों लोग सुनते हैं, लाईव टेलिकास्ट होता है, घर-घर में टी.वी. है, फिर भी लोग मंडप में आकर कथा सुनते हैं। रामरसोडे का प्रसाद लेते हैं। यह सब चमत्कारी है। यह कोई आदमी का काम नहीं। यह रामदेवपीर का ही काम है। हम क्या कर सकते हैं? यह चमत्कार नहीं तो और क्या है? राम का दूसरा अर्थ है आत्मा। यह बहुत बड़ा अध्यात्म अर्थ है। हम लोग कहते हैं, 'आत्माराम।' हम जिस मार्गी परंपरा के साधु है, हमारे यहां तो कई बापू के, साधु के नाम आत्माराम होते हैं, आत्माराम बापू। राम का तीसरा अर्थ बताया गया जीव। यह बड़ी प्यारी बात है। कभी-कभी हम आत्मा को राम मानते हैं लेकिन जीवात्मा को नहीं मानते! धिक्कारते हैं! जीवात्मा को भी यहां राम कहा। आत्माराम तक पहुंचने की सीढ़ी है जीवात्मा का दर्शन करो। यह दर्शन मैं पहली बार देख रहा हूं तो मुझे अच्छा लगता है। जीव को भी राम कहा।

राम का अर्थ है ताकत, बल, शक्ति। साहित्य के शब्दकोश ताकत को राम कहते हैं। जो बल विघटन न करे, संगठन करे वो बल। राम ताकत है। राम ने सेतु बांधा, तोड़ा नहीं। राम मानी संगठन, विघटन नहीं। तोड़े वो राम नहीं, जोड़े सो राम। यह भी अर्थ लग रहा है, रामनाम मानी ताकत, शक्ति, बल। दूसरा, शक्ति भी लिखा है। राम मानी शक्ति। कोटि-कोटि शक्ति राम है। फिर लिखा है हिंमत। राम मानी हिंमत, होंसला, साहस; हार जाना नहीं, हिंमत रखना यह राम का पर्याय है। उसके बाद अर्थ है उमंग-उत्साह। कोई हंसता रहता हो, उमंग में रहता हो, उत्साह में हो तो वो राम है। मुस्कुराता है वो राम है। खुद न हंसे, किसीको न हंसने दे वो हराम है! कई लोग है, न हंसे, न हंसने दे! न सुखी हो, न होने दे! राम है उमंग-उत्साह। कोई भी घटना बने हारे क्यों? जीवन में सिर्फ़ दु:ख ही नहीं। यदि दु:ख है तो सुख भी होना चाहिए। लेकिन हमारी तकलीफ़ क्या है, हम दु:ख को ही देखते हैं। सुख को आवकार नहीं देते। मैं एक दीपावली संदेश में बहुत बड़ा मौलिक और कुंआरा विचार पढ़ रहा था। सुख तुम्हारे आंगन में आवकार की प्रतीक्षा में खड़ा है। तुम आवकार दो बस, वो प्रतीक्षा कर रहा है। शालीन है। विवेकी है। बिना आवकार घर में कैसे जाए? यदि सापेक्ष है सुख-दु:ख तो दोनों दरवाजे पर खड़े हैं। आप भोजन की लाईन में खड़े रहोगे तो जो सरल आदमी होगा, विवेकी होगा तो वो अपने क्रम में जाएगा। लेकिन जो जरा तुफ़ानी होगा तो वो ऐसे-तैसे कर के घुस जाएगा! कथा में भी ऐसा होता है! यहां तो बहुत व्यवस्था है। और ऐसे ही बनाइए रखिएगा। दु:ख जरा लड़ाकु है। सीधा घुसने की करता है। और हम उसी में डूब जाते हैं और सुख बेचारा ऐसे ही खड़ा रह जाता है! हम उसको बुला नहीं पाते। केवल दु:ख ही है ऐसा मत सोचो। उमंग, उत्साह है।

पहुंचे किसी दर पे तो दस्तक ही नहीं दी।
आगाज़ के डर से कभी अंजाम के डर से।
छोड़ा न गया मुझ से अंधेरों को अकेला,
पैगाम तो आये थे कई सूरज के घर से।

कर्णपरक शे'र है। कर्ण को कृष्ण ने समझाया, कुंती ने समझाया, फलां ने समझाया कि तू पांडव पक्ष में आ जा। ये हो जाएगा। मैं सूर्य का बेटा, सूरज के घर से ओफर तो बहुत आई थी। लेकिन 'छोड़ा न गया मुझ से अंधेरों को अकेला।' यह धृतराष्ट्र का बेटा, अंधेरे का बेटा दुर्योधन को अकेला कैसे छोड़ सकूं? इस मतलब का शे'र है।

तो दु:ख जल्दी से आ जाते हैं और फिर हम उसीके घर्षण में रह जाते हैं। इसमें बेचारा जो सुख है वो द्वार पर ऐसे खटखटाये खड़ा रहता है। अब अगले साल मिलेंगे! घटनाएं घटती रहती है। लेकिन रामरूप में हम इन सूत्रों को उठाएंगे। परेशान नहीं कर पाएंगे। साहब! मैं हैरान हूं! राम का एक अर्थ होता है घोड़ा, अश्व। रामदेवपीर का घोड़ा। तो राम के पास राम ही होना चाहिए। राम के पास हराम नहीं हो सकता। यह जो लीलुडो घोड़ो कहेवाय बाबा रामदेव नो उसके बारे में भी मेरे निरीक्षण है।

बल बिबेक दम परहित घोरे।
छमा कृपा समता रजु जोरे।।

गोस्वामीजी घोड़े का दर्शन करवाते हैं 'लंकाकांड' में। रामदेव बाबा के घोड़े को देखता हूं तो जो घोड़े के सटीक अर्थ है वही होता है। घोड़े का एक अर्थ होता है ताकत। होर्सपावर हम कहते हैं। सब से बड़ी ताकत कौन? जो नाप निकाला है, होर्स के साथ निकाला गया है। होर्स पावर; मशीन कितने होर्स पावर का है? राजस्थान की भूमि ने दो ऐसे घोड़े दिये हैं। ग़ज़ब कर डाला! एक महाराणा प्रताप का चेतक और दूसरा हमारे रामदेवपीर बाबा का लीलुडा घोड़ा। कई घोड़े होंगे लेकिन मेरे दिमाग में अभी दो घोड़े हैं- एक वीर का, दूसरा पीर का। तीसरा मीरां का घोड़ा है। मीरां के पद में आता है, मैं मनरूपी अश्व पर सवार होकर द्वारिका जा रही हूं। मीरां के पास है अपने मन का अश्व। क्या कहना चाहती है मीरां? मैं अपने मन की गति से द्वारिका पहुंचना चाहती हूं। अब मुझे विलंब सह्य नहीं है। तो वहां मन को घोड़ा बना दिया।

राजस्थान तो ताकत की भूमि है, उत्साह की भूमि है, मन की भूमि है। यहां अकाल होता है, बारिश कम है। आज मुझे प्रश्न भी पूछा गया है कि बापू, आपने कहा, रामदेवपीर बाबा का घोड़ा लीला है, हराभरा रहता है, तो यहां क्यों सूखा है? यार! जमीन का सूखा है, तुम्हारा मन तो हराभरा है ना? मन हराभरा होना चाहिए। कई लोगों के पास कितना पड़ा है लेकिन मन सूखा है! मन हराभरा है; ऐसी है राजस्थान की धरती। इस धरती का साम्य भी देखिए, रामदेवपीर बाबा जो भगवन् है उसके पास घोड़ा है। वीरों की भूमि है। महाराणा प्रताप उसका भी चेतक नामक घोड़ा। रामदेवपीर बाबा के हाथ में भी भाला है। महाराणा प्रताप के हाथ में भी भाला है। यह वीरों की धरती है, पीरों की धरती है। और इसी धरती पर मीरां की धरती पर मीरां का ज़हर पीने के लिए साक्षात् कृष्ण आया था।

राम का एक अर्थ है हिरण्य, हिरण, मृग, हिरण पशु। भगवान राम 'रामचरित मानस' के 'अरण्यकांड' में जब मारीचवध करते हैं तब आप जानते हैं कि मारीच हिरण का रूप लेकर आता है। भगवान राम उसके पीछे मारीच को निर्वाण देने के लिए दौड़ते हैं। यहां राम का एक अर्थ हिरण बताया है। राम मानी हिरण। भगवान का दौड़ना लीला है। वो तो बैठे-बैठे संकल्पमात्र से मारीच का वध कर सकते थे। मारीच का मरना निश्चित था। फिर भी वो दौड़ा जा रहा है। मुड़-मुड़कर भगवान राम को देखता है। यह घटना जो यहां हिरणवाली बात राम के साथ जोडी गई तो स्वाभाविक मुझे राम की कथा स्मरण में आई। उसका अर्थ होता है भगवान मारीच के पीछे दौड़े तो मारीच के पीछे मारीच दौड़ा। फिर नरसिंह मेहता याद आता है, 'ब्रह्म लटकां करे ब्रह्म पासे।' राम ही राम के पीछे दौड़े, ओर कोई नहीं। बड़ा प्यारा अर्थ है, राम मानी हिरण। राम का एक ओर अर्थ लिखा है तमालपत्र। जो तमाल वृक्ष के पत्ते हैं उसको तमालपत्र कहते हैं। तमालपत्र को भी राम कहते हैं। और आखिरी अर्थ; यह तो कुछ-कुछ है; बाकी शब्दकोश में कई अर्थ है। आखिरी अर्थ है राम का अशोकवृक्ष। अशोक बिटप को भी राम कहते हैं। तो इससे बड़ा अच्छा अर्थ निकलता है। जानकीजी रावण के आश्रय में लंका में नहीं रही, अशोकवृक्ष की छाया में रही। इसका मतलब यह हो गया, अशोकवाटिका में सीताजी राम के आश्रय में बैठी, रावण के आश्रय में नहीं। यदि राम का अर्थ अशोकवृक्ष है तो यह संगति बैठ जाती है। सीता मानी भक्ति। वो राम आश्रित होती है, राम के आश्रय में जी सकती है, पलती है, फलती है, फूलती है। तो मेरे भाई-बहन, यहां कुछ राम के अर्थ साहित्यिक संदर्भ में आया है। फिर देव के कुछ अर्थ।

देव का एक अर्थ किया धर्म। प्यारा शब्द है। देव को शब्दकोश धर्म कहता है। देव का दूसरा अर्थ है आकाश। यह बहुत प्यारी बात है। उसीको देव समझना जो आकाश के समान विशाल हो, संकुचित न हो। रामदेवपीर हमारे ही पूजनीय है, हमारे ही देव है, ऐसा कहकर रामदेवपीर बाबा को छोटा मत करो। देव का अर्थ है आकाश। यह बहुत विशाल है। संप्रदायवालों ने क्या किया? अपने-अपने इष्ट को बस छोटा कर दिया! कबीरसाहब को माननेवाले कहे, बस हमारे ही कबीर, हमारे ही कबीर, तो कबीरसाहब छोटे हो गये! कबीरसाहब कभी एक पंथ के छोटे नहीं हो सकते, पूरे विश्व के होते हैं। कबीर आकाश का पर्याय है। भगवान महावीरस्वामी तो सब के हैं लेकिन जैनो ने उन्हें छोटा कर दिया! महावीरस्वामी तो पूरे आकाश में न समा सके इतना बड़ा तीर्थंकर है महापुरुष। बौद्धलोग कहे कि बुद्ध हमारे ही है तो बुद्ध छोटे हो जाएंगे। आकाश की तरह रहना। सनातन धर्म कभी यह नहीं कहेगा कि राम हमारे हैं। राम पूरे विश्व के हैं। कृष्ण सब के हैं। शिव सब के हैं। रामदेवपीर सब के हैं। हां, आप अपनी निजी आस्था में कहे कि मेरा राम, मेरा राम; मेरा कृष्ण, यह बात ओर है बाकी यह वैश्विक है। वैष्णव लोग कहे कि वल्लभ हमारे ही है तो वल्लभ छोटे हो जाएंगे। शंकराचार्यवाले कहे कि शंकराचार्य हमारे है तो शंकराचार्य छोटे हो जाएंगे। यह आकाश की तरह है। मुझे बड़ा प्यारा अर्थ लगता है, देव का अर्थ है आकाश।

देव का एक अर्थ है साधु। अच्छा लगता है। स्वर्गवाले देवता नहीं। वो तो बड़े चालाक है! सब देवता होशियार है! स्वर्गवाले देवता से मेरी बनती ही नहीं! साधु हो तो मेरी बने। इसलिए हमारे यहां साधु जाए तो ऐसे कहते हैं ना कि देव हो गये। भगवान राम के लिए 'रामचरित मानस' में कई बार 'देव' शब्द का प्रयोग हुआ है। कितनी बार देव कहा है तुलसी ने! अवतारों को देव कहा जाता है। तो देव का एक अर्थ है साधु। साधु देवताई होते हैं।

देव का एक अर्थ लिखा है मुनि। देव मानी मुनि। सर्व सामान्य अर्थ है मुनि का जो ज्यादा मौन रहे वो मुनि। ज्यादा मौन रहे। देव का एक अर्थ है कृष्ण। कृष्ण को देव कहा। रामदेवपीर बाबा कृष्ण के ही अवतार माने गये हैं। रामदेवपीर बाबा के यह शब्द पीर लागू होते हैं। एक अद्भुत धर्म की एक अद्भुत विचारधारा प्रस्तुत की। जो धर्म किसी को अस्पृश्य न समझे, सभी को गले लगे। देव मानी धर्म। रामदेवपीर बाबा को सिद्ध होता है। देव मानी आकाश, कोई संकीर्णता नहीं। रामदेवपीर हिन्दु-मुस्लिम सब के हैं। कोई अपनी ग्रंथियों से न माने तो कौन मनवाये? उसकी समाधि पर कोई भी जा सकता है। कोई प्रतिबंध नहीं। सब जा सकते हैं। वो एक ऐसे धर्म के रक्षक है, आकाश जैसे है। चुपचाप लेटे हैं, मुनि है। तेजोमय व्यक्ति को भी देव कहते हैं। आगे लिखा है, मेघ-बरषा; जो करुणा करते हैं उसको देव कहते हैं। इन्द्रदेव हम कहते हैं। उसी अर्थ में इन्द्र अच्छा है।

रामकथा के क्रम में गोस्वामीजी ने सब की वंदना की उसमें श्री हनुमानजी की वंदना आखिर में की थी। आगे बढ़ें उससे पूर्व मैं अपने देहाती भाईयों को और सभी को कहना चाहूंगा कि आपकी कोई भी धर्म में रुचि हो, आस्था हो, मुबारक। अपने धर्म में, अपने इष्टदेव में श्रद्धा रखिएगा लेकिन साथ-साथ हनुमानजी का आश्रय करोगे तो अपनी इष्टभक्ति में, इष्ट के अनुभव में आपको और बल मिलेगा क्योंकि हनुमान है प्राणतत्त्व। हनुमान कोई संप्रदाय के, कोई एक धर्म के, कोई एक कोम के, कोई आचार्य के, कोई एक ग्रंथ के नहीं है। हनुमानजी सब के हैं। वायु सब का है। तो हनुमानजी का आश्रय करना ताकि अपने भजन में बल मिलेगा। तो हनुमान है प्राणतत्त्व। बिलकुल बिनसांप्रदायिक श्री हनुमान महाराज। बहनलोग भी 'हनुमानचालीसा' का पाठ कर सकती है। कोई आपको समझाये कि बहनों से 'हनुमानचालीसा' का पाठ न हो, हनुमानजी की पूजा न हो, इन बातों में मत जाना। हनुमानजी हम सब के हैं। उसमें नर-नारी का भेद हो ही नहीं सकता। यह वीर भी है, पीर भी है। सब कुछ है हनुमानजी। इसलिए हनुमंत आश्रय करना चाहिए। तुलसी ने हनुमंत वंदना की है-

प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।।

हनुमानजी की जटिल-कठिन साधना में मत जाइए। 'हनुमानचालीसा' करो बस। कलियुग में यह पर्याप्त है। 'हनुमानचालीसा' का अनुष्ठान करते-करते कई साधकों ने बहुत कुछ अनुभव किये हैं। तो 'हनुमानचालीसा' करना। मैं कथाओं में कहता हूं, हररोज कम से कम ग्यारह बार

मुझे एक महात्मा कहते थे, बापू, बहुत मंत्र है मेरे पास, गुप्त है। मैंने कहा, रखो आपके पास! मेरे पास रामनाम है जो बीज का भी बीज है। कोई भ्रमित करे तो भ्रमणा में मत जाना बाप! बीज उसको कहते हैं जो विकसित हो। हम तो बीज नाम पर कमजोर होते गये! विकसित तो हुए ही नहीं! साधना तो तेज लाती है, प्रकाश लाती है। रामनाम स्वयं बीज है जो मुझे और आपको विकसित करता है। भ्रमित अर्थों से बाहर आइये।

'हनुमानचालीसा' का पाठ करे। एक-दो बार सुबह, कभी खेत में काम करते, दुकान पर, बाहरगांव जाते हो तो बस में, स्कूल जाए, कोलेज जाए, एक-दो बार फिर शाम को लौटते, रात को सोने से पहले। ग्यारह बार 'हनुमानचालीसा' का पाठ करे तो अच्छा रहेगा। वैसे तो सौ बार पाठ की महिमा है। सौ बार न कर पाए। व्यस्त है। कम से कम ग्यारह बार करे। मैं छुट दिये चलता हूं। ग्यारह बार न हो तो नौ बार करो। नौ बार न हो तो सात बार करो। सात बार भी न हो सके तो पांच बार पाठ करे। तीन बार करे, एक बार करे चलो। चौबीस कलाक में एक बार करे। फ़ायदा क्या होगा मुझे खबर नहीं, नुकसान नहीं होगा। फ़ायदे की हमें खबर नहीं, नुकसानी नहीं होगी बस! और जीवन में हानि न हो वो बड़ा लाभ है। वो है वो श्रद्धा वो विश्वास घटे ना। हानि न हो।

श्री हनुमानजी का आश्रय करो। सब से बड़ा काम तो यह है कि हनुमानजी को 'रामचरित मानस' सुनाओ जब आपको समय मिले। अपना दफ्तर संभालो, स्कूल संभालो, कोलेज संभालो, खेत संभालो, मजदूरी करते हो, मजदूरी करो; जो करते हो वो करो, सांसारिक जो दायित्व निभाते हो निभाओ लेकिन बीच में जो कुछ भी समय मिले तो हनुमानजी को 'रामचरित मानस' सुनाओ। यह सुनने के लिए हनुमानजी आज धरती पर बैठे हैं वर्ना सब स्वधाम गये वो भी चले जानेवाला था। हनुमानजी की कोई जटिल, कठिन, तांत्रिक साधना में मत जाइए। या तो 'हनुमानचालीसा' सुनाओ या तो उसको रामकथा की चौपाई सुनाओ क्योंकि कर्ण उसने अब रामकथा को अर्पण कर दिया है, सूर्यवंशी को समर्पित कर दिया है। ऐसे हैं हनुमंततत्त्व। उसकी वंदना बहनों-भाईओ कोई भी कर सकते हैं। कोई भी 'सुंदरकांड' का पाठ कर सकता है। कोई भी 'हनुमानचालीसा' का पाठ कर सकता है। कोई भी बहन-भाई मर्यादा संभाल के जो नियम है उसको निभाते हुए हनुमानजी की आरती कर सकती है। मास पारायण हनुमानजी को सुना सकते हैं। कोई प्रतिबंध नहीं है।

कल हमनें जो हनुमानजी की वंदना तक कथा पहुंची थी उसमें थोड़े आगे सब की वंदना करते-करते भगवान के सखा की तुलसी वंदना करते हैं विभीषण, सुग्रीव, अंगद आदि की। उसके बाद सीताजी की वंदना तुलसीदासजी ने की। 'मातृदेवो भव।' पहले माता की वंदना की। जानकीजी की वंदना की। सीता की वंदना की। नेत्र जिसके कमल जैसे हैं ऐसे राम की वंदना की। फिर कहा कि सीता-राम तत्त्वत: अभिन्न है। ऐसा कह कर सीताराम की संयुक्त वंदना की। उसके बाद क्रम में तुलसीदासजी रामनाम की वंदना का गायन करते हैं। तुलसी कहते हैं, प्रभु के कई नाम है लेकिन रामनाम, उसकी तोले कौन है?

नहिं कलि करम भगति बिबेकू।
राम नाम अवलंबन एकू।।

कलियुग में कर्म, भक्ति, ज्ञान यह कुछ काम में नहीं आएगा। केवल रामनाम का अवलंबन। रामनाम ही महिमावंत है। कहां तक भगवान राम के नाम की महिमा गाई जाए? स्वयं राम भी अपने नाम की बड़ाई नहीं कर सकते, ऐसा प्रभु का नाम। भाव से, अभाव से, आलस से, प्रमाद से कैसे भी परमात्मा के नाम का कोई आश्रय करेगा तो दशों दिशा में मंगल, मंगल, मंगल होगा। मैं आप सब को यही निवेदन करूं, जो कर सके तो साधन जरूर करे लेकिन यदि कुछ न कर सके तो नाम पर्याप्त है, नाम काफ़ी है।

तो बाप! कभी भी अपने मन में ऐसा मत सोचना कि हम तो देहात में रहते हैं, मज़दूरी करते हैं, कभी यज्ञ कर पाएंगे? हमारे पास कोई मंत्र नहीं, साधन नहीं, ऐसा कभी भी मत सोचो। प्रभु का नाम पर्याप्त है। उसके बाद आगे के प्रकरण में तुलसीदासजी ने जिस 'रामचरित मानस' का संपादन किया। बाप! इसकी रचना तो शिव ने की; शंकर ने की। 'रचि महेस निज मानस राखा। शिव ने उसकी रचना की। तुलसीदासजी ने सोलह सौ इकतीस रामनवमी के दिन इस परम ग्रंथ का प्रकाशन श्री अयोध्या से किया। चार घाट बनाए। एक घाट का नाम ज्ञानघाट जहां शिवजी पार्वती को कथा सुनाते हैं। दूसरे घाट का नाम उपासना का घाट जहां कागभुशुंडिजी गरुडजी को कथा सुनाते हैं। तीसरे घाट का नाम कर्म का घाट जहां याज्ञवल्क्यजी गंगा, यमुना और सरस्वती के तट पर भरद्वाजजी को कथा सुनाते हैं। और चौथा शरणागति का घाट जहां बैठकर गोस्वामीजी स्वयं अपने मन को रामकथा सुनाते हैं।

मानस-रामदेवपीर : ३

शील ही भगवान का आभूषण है

'मानस-रामदेवपीर', जिसकी हम इन दिनों में सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा कर रहे हैं, उसमें कुछ आगे बढ़ें। कथा में प्रवेश करे उससे पूर्व आज कार्तिक शुक्ल सप्तमी है। जिसने भजन और भोजन को प्रधानता दी ऐसे वीरपुर के जलारामबापा की जन्मजयंती है।

रामनाम में लीन है, देखत सब में राम।
ताके पद वंदन करूं, जय जय जय जलाराम।

बापा की चेतना को प्रणाम करते हुए आगे बढ़ें। मेरे पास रामदेवपीर बाबा के विषय में बहुत प्रश्न आये हैं। अभिप्राय भी आये हैं। बहुत बातें आई है। एक तो हमारे व्यासभाई ने कहा कि कल कहा, 'चारों जुग परताप तुम्हारा।' जलारामबापा के भजनों में भी जिस रचनाएं रची गई, उसमें सतयुग में भी उसकी उपस्थिति की बात है, त्रेता में भी है, तो आप क्या कहते हो? रामदेवबाबा भी चार युग में है?' बाप! संसार में जो परम है, जो हम से अधिक ऊंचाई को छू गये हैं और उस अवस्था में स्थिर है ऐसी किसी भी विभूतिओं का प्रभाव, प्रकाश, प्रताप चारों युग में होता है। भगवान राम जो 'रामचरित मानस' का केन्द्रीय चरित्र है वो तो परमात्मा है। भिन्न-भिन्न युग में अवतार लेते हैं। 'संभवामि युगेयुगे।' भगवान कृष्ण पूर्ण परमात्मा है, किन्तु कृष्ण तो विभु है, परमात्मा है लेकिन आप 'गीता' पढ़े तो पता चलता है, अर्जुन विभु नहीं, विभूति है। भगवान कृष्ण कहते हैं। यद्यपि वो विभु है ऐसा खुद नहीं चाहते। रामदेवपीर ने कभी नहीं कहा होगा कि मैं भगवान हूं। ये तो व्यासपीठ कह रही है। विभु कभी भी 'मैं कौन हूं', ऐसा नहीं बोलता लेकिन 'मेरे कौन है' ये कहता है। भगवान कृष्ण ने 'गीता' में कहा है, 'अर्जुन मेरी विभूति है।' तुलसी 'विनय' में कहते हैं, एक बार मैं सुनूं कि 'तुलसीदास मेरो।' मुझे एक बार आप कह दो, तुलसीदास मेरा है।

ये दुनिया तो 'मम' और 'अहम्' से जुड़ी हुई है। लेकिन मेरा हरि कहता है, ईश्वर मेरा कौन है? इसीलिए 'गीता' में भगवान कहते हैं, 'पांडवानां धनंजय:।' पांच पांडवों में से अर्जुन, तू मेरी विभूति है। इसीलिए परम जो होते हैं वो चारों युग में होते हैं। तो विभूतियां भी चारों युग में होती है। 'गीता' में कृष्ण कहते हैं, 'बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन।' तेरे-मेरे कितने जन्म बीत गए होंगे! युग-युगांतर के संबंध है। तो जो परम है, श्रेष्ठ है उसका प्रताप चारों ओर

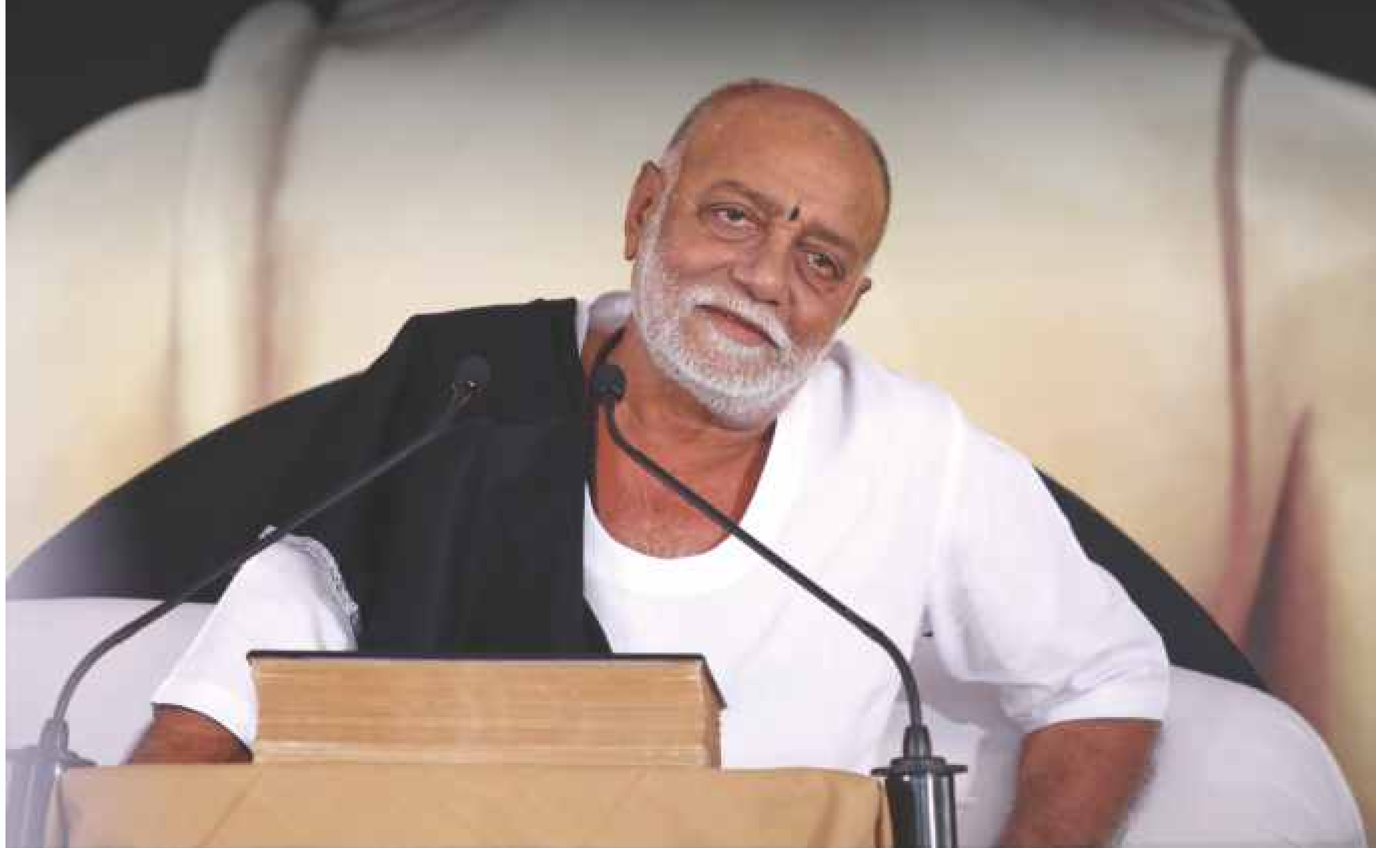

होता है। मुझे कोई आपत्ति नहीं है। रामदेवपीर जिस 'मानस' में है, मेरे मानस में है ऐसे रामदेवपीर की वंदना कर के मेरी वाणी को पवित्र कर रहा हूं तब राम सत्य का नाम है। मैं आपको पूछता हूं कि आप दिल पर हाथ रखकर पूछो, रामदेव बाबा का चरित्र पढ़कर; मुझे उनका चरित्र नहीं सुनाना है। कुछ सुनाउंगा प्रवाह चला तो। मुझे आपको उसका सार कहना है। आपकी आत्मा कभी भी ऐसा कहेगी कि रामदेव बाबा कभी झूठ बोले होंगे? नहीं। मेरी आत्मा तो ना कहती है। उसमें कभी असत्य नहीं आया होगा।

आज एक प्रश्न ये भी आया है, 'बापू, रामदेवपीर के हेले में कहा जाता है कि 'आंखे करुं आंधळो ने डीले काढुं कोढ।' बापू, क्या रामदेवपीर बाबा सही में ऐसा कर सकते हैं? लाखों लोगों में से ये भ्रम निकालकर आप आपकी तरह से इस बात को समझाओ। हमें ये समझ में नहीं आता।' बनिया जो यात्रा के लिए निकला था उसका सामान चोरी हो गया। बनिये का सामान तू कितने दिन खाएगा? बहुत संकेत है। बनिये का सामान? बनिये का सामान खाना बहुत मुश्किल है। ये बनिया बहुत अच्छा होगा जो यात्रा करने के लिए निकला है, धंधा करने के लिए नहीं! और बनिया यात्रा के लिए जाए; सामान देखकर चोर पीछे-पीछे जाए। सामान हो इसीलिए चोर आता ही है। सामान कम करो। चोर का कोई कसूर नहीं है। चोर क्या करेगा? सामान होगा तो आएगा ही। चोर कितने प्रकार के होते हैं। ओफ़िस में होते हैं; पाटनगर में होते हैं। खुद का साम्राज्य हो उसमें भी कितने चोर होते हैं! तो उसमें रामदेवपीर बाबा एक बनिये की सहाय करने आये हैं। आगे चोर और पीछे रामदेवपीर बाबा। फिर उसमें ऐसी पंक्ति आती है-

आंखे करुं आंधळो ने डीले काढुं कोढ,
दुनिया जाणे ए तो रामदेवपीरनो चोर,
मारो हेलो सांभळो....

हमारे गुजरात में दंताली है। वहां के स्वामी सच्चिदानंदजी मुझे कहे, बापू, मेरे आश्रम में जितनी भगवान की मूर्ति है, उनको कोई आभूषण नहीं है। कपड़े भी रंग से करे। भगवान को अभूषण पहनाए तो चोर आये ना? हमारे नगीनबापा तो कहते हैं, जिस भगवान के पास बहुत आभूषण हो वहां चोर को जाना ही चाहिए! आभूषण की क्या जरूरत है भगवान को? शील ही भगवान का आभूषण है। इतना ही नहीं बाप! माल-सामान होगा तो हमारे मन में भी चोर आयेंगे। उस चोर का नाम है भोग। क्योंकि तुलसी कहते हैं-

मम हृदय भवन प्रभु तोरा।
तहँ बसे आइ बहु चोरा।।

हमारे इस भवन में बहुत चोर रहते हैं। काम, क्रोध, लोभ इत्यादि। रामदेव भगवान उसके पीछे गये घोड़े को ले कर। वहां कहा, 'आंखे करुं आंधळो ने डीले काढुं कोढ।' कुष्ठरोग असाध्य है। किसी को अंधा कर देगा! ऐसा आक्रमक निर्णय कर सके? मैंने पहले दिन ही कहा, जो त्रेतायुग में घटना हुई है वो हुई है। राम भगवान त्रेतायुग में आए। आज हम कलियुग में है। दोनों के बीच काफ़ी फ़ासला है। उस काल में राम स्वयं शबरी के घर बैर खाने गये, केवट के पास गये, खुद देह धारण कर गये। लेकिन आज कलियुग में राम हमारे पास कैसे आये उसके अध्यात्म अर्थ खोजने पड़ेंगे और तुलसी ने खोजे हैं। आज त्रेतायुगवाले धनुर्धारी राम हमारे पास नहीं है पर तुलसी कहते हैं, नाम के रूप में हमारे पास है।

नाम गरीब अनेक नेवाजे।
लोक बेद बर बिरिद बिराजे।।

तो छः सौ साल पहले रामदेवपीर बाबा की काल गणना है। उनके चरित्र में भी काफ़ी सारा भेद है इसीलिए मैं उसमें जाना नहीं चाहता। ये मेरा काम नहीं है। फिर जितने भी भजन जो बाबा के लिए जिसने-जिसने लिखे या तो समकालीन होंगे वो तो महान होंगे ही। रामदेवपीर बाबा ने कहा, डील पर कुष्ठरोग निकालूं और आंखों से अंध बनाउं। आपको पता है, उपनिषद में संन्यासी का एक लक्षण है, अंधा होना, अपंग होना, बधिर होना, मूक होना। मैं तो इसका ऐसा अर्थ निकालता हूं, चोर, तुने अभी तक चोरी ही की होगी। लेकिन अब मैं तुझे चोर में से संन्यासी बनाता हूं। और रावण बना ऐसा संन्यासी नहीं, असल में संन्यासी कि किसी का मार्ग दिखे ही नहीं। एक दृष्टि बदली होगी मेरी दृष्टि से। मेरा रामदेवपीर ये है। किसी की आंखें फ़ोड़ न दे। ऐसा रामदेवपीर मुझे रास न आए। अवतार हमारी दृष्टि बदल देता है।

स्वामी रामतीर्थ बैठे थे। एक अंधजन वहां से गुज़रा। उसने रामतीर्थ से पूछा, 'ये रास्ता कहां जाता है?' एक बार पूछा तो जवाब न दिया; दूसरी बार, तीसरी बार पूछा पर उत्तर न मिला तो अंधा आगे चलने लगा। किसी तीसरे व्यक्ति ने क्रोध में साधु को कहा, 'तू कहां का साधु? समाज की रोटी खाकर इतनी भी सेवा नहीं करता?' तब

स्वामी ने कहा, 'मैं उसे रास्ता नहीं बता रहा हूं। मैं उसको आंख दे रहा हूं कि जिससे उसे समाज में किसी को पूछना न पड़े।' रामदेवपीर मेरी दृष्टि से जो लूटेरा है उसको अपना सब कुछ लूट जाए ऐसी दृष्टि देते हैं। साधु विवेक से जो आता है उसको बांट देते हैं; दृष्टि बदल देते हैं।

तेहिं करि बिमल बिबेक बिलोचन।
बरनउँ राम चरित भव मोचन।।

मेरे गोस्वामीजी गुरुवंदना में कहते हैं, मेरे गुरु की चरणरज ने मेरी आंखें बदल दी, मेरी दृष्टि बदल दी। तो मुझे जो पूछा है उसका ये उत्तर है। आप कुबूल न करो तो आपकी स्वतंत्रता। रामदेवपीर बाबा ने चोर को साधु बना दिया। वृत्ति के रूप में, वेश के रूप में नहीं। लूटनेवाला, लुटानेवाला बन गया। अवतार तो यही करता है। 'दिव्यं ददामि ते चक्षु।' भगवान कृष्ण अर्जुन को कहते हैं, ये नेत्र तो तेरे अंधे हैं। इस चक्षु से तू कुछ भी नहीं देख सकता क्योंकि ये आंखें ममता से भरी हुई है और ममता मनुष्य को अंधा बना देती है। मैं तेरे सामने हूं, दिव्यचक्षु तुझे दूं, मेरा दिव्यरूप देख। साधु अंधा है। साधु बधिर है। भला-बुरा सब का सुन लीजिए। साधु को किसी के अभिप्राय पे साधना नहीं करनी चाहिए। लोगों के अभिप्राय बदलते हैं। जब तक आप सामनेवाले को अनुकूल रहोगे तब तक तुम्हें अच्छा मानेंगे। आप प्रतिकूल बनोगे तो फिर बुरे लगोगे!

एक बार भगवान बुद्ध बैठे हैं। उनके नज़दीक परम शिष्य जो उनका चचेरा भाई भी था आनंद वो सेवा में खड़ा था। एक व्यक्ति आया और गालियां बोलने लगा। बुद्ध को कहा, तू तो पाखंडी है, फ़रेबी है, चोर है। पता नहीं, दुनियाभर की गालियां दी! बुद्ध ऐसे ही बैठे रहे। ये घटना मुझे बहुत प्रेरणा देती है। आपको भी प्रेरणा दे सकती है। थककर गाली देनेवाला चला गया तब आनंद से रहा नहीं गया। प्रणाम कर के बोला, 'भगवान, संसार के व्यवहार से आप मेरे भाई लगते हो लेकिन आप मेरे बुद्धपुरुष है, मेरा सब कुछ हो। हमारी सीमा होती है। आप तो सब सह लेते हो लेकिन हम सब कैसे सहे? हमें एक ईशारा कर दो तो हम काम पूरा कर दे।' तभी बुद्ध मुस्कुराए और कहा, 'आनंद, आज मुझे दो प्रकार का आश्चर्य हुआ है। वो आदमी हमारे संबंध में कुछ नहीं कह रहा था तो फिर उसके लिए इतनी चिंता की क्या जरूरत? जो हमारे संबंधित न हो उसमें बधिर हो जाओ। और मेरे पास रहता तू इतना क्रोध कर गया? बुद्ध ने कहा, तेरे में क्रोध नहीं है, तू स्वयं क्रोध है! ये दूसरा आश्चर्य है। कबीरसाहब कहते हैं, 'भला बुरा सब का सुनिए।' कहलाना बहुत सरल है लेकिन साधुता को पकाना बहुत मुश्किल। गोरख कहते हैं, 'मरो जोगी, मरना तो मीठा है। मरना अमृत है। मृत्यु सद्गुरु है।' 'भगवद्गीता' में कृष्ण कहते हैं, 'मृत्यु मैं हूं।' 'राम राम' बोलो तो जीवन। 'मरा मरा' बोलो तो मृत्यु। दोनों राम है। शंकर 'राम राम' बोलते हैं। वाल्मीकि 'मरा मरा' बोलते हैं। दोनों में उल्टा-सूल्टा 'राम' ही है। 'साधु' शब्द जिसको लग जाए वो धन्य हो जाएंगे। भजन कर के जो साधुता प्राप्त करे वो तीनों भुवन को पवित्र कर देता है। उद्धव कहते हैं, वज्रांगनाओं के मुख में से हरिनाम निकलता है वो तीनों भुवन को पवित्र कर देता है। इसीलिए 'विनयपत्रिका' में गोस्वामीजी कहते हैं-

कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो।
श्री रघुनाथ-कृपालु-कृपातें संत-सुभाव गहौंगो।।

मेरे देह के कारण मेरी जितनी भी चिंता है, सुख और दुःख को समबुद्धि होकर, 'सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।' आप पेन्ट पहनकर भी साधु हो सकते हो, हाफ पेन्ट पहनकर भी हो सकते हो। एक दिगंबर, श्वेतांबर, पीतांबर, काषाय वस्त्र, सफेद वस्त्र में कोई भी साधु हो सकते हैं। ज्ञान में अवस्था होती है। भजन में भूमिका होती है। ज्ञान में सात प्रकार की अवस्था है। साधु भूमिका का आदमी है। सुख और दुःख को समबुद्धि से वो सेवता है। साधु स्वभाव होना बहुत कठिन है। ऐसे ही साधु हुए हैं, जहां धूप-धूम्र हुआ है, आज भी वहां खुश्बू आती है। कबीर कहते हैं, 'भला-बुरा सब का सुनिये, चुप हो जाना।'

मैं बोलूं, आप सुनो ये सत्संग है। लेकिन हमारे प्रज्ञाचक्षु स्वामी शरणानंदजी कहते हैं, मौन सत्संग ही है। और कुछ दिन पहले थोड़े भाईयों के साथ मेरी व्यासपीठ चर्चा कर रही थी तब मैंने कहा, मुक्त सत्संग। जिसमें कोई विषय निश्चित्त न हो, पांच लोग बैठे हो, सब बोल सके उसमें, वो मुक्त सत्संग। स्वामी रामसुखदासजी एक पंक्ति में सत्संग की व्याख्या करते हैं कि कोई सच बोले उसका स्वीकार करना ये भी सत्संग है। और एक बात कहते हैं जो मुझे प्रिय है, धर्म के लिए धन की जरूरत नहीं, आपके मन की जरूरत है। धर्म आपके धन पर नहीं, मन पर आधारित है।

परम सद्गुरु आपको मिल गया हो फिर भी आप सत्य का स्वीकार न करो तो आप सत्संग नहीं कर रहे हो। चित्रकूट में कभी-कभी इतनी भीड़ होती है कि मैं खुद कहता हूं कि आप जाओ लेकिन जाते ही नहीं! मेरी बात नहीं मानते! ये आपका सत्संग नहीं है। आप अपने को कितनी ही कथा सुननेवाले क्यों न मानो? आप सत्य कुबूल

करो। हम ज़ाहिर न करे फिर भी उतारे पे मिलने आ जाते हो! तो व्यासपीठ की कौन-सी बात मानी आपने? आप ऐसा मानो कि हमने बहुत कथा सुनी इसीलिए हमारा हक है! हम जाए तो सत्य के पास भी हमारा सत्संग नहीं होता क्योंकि सत्य कुबूल नहीं करते। मैं जहां जाउं वहां मैं चाहूं कि स्थानीय जनता मुझे मिले। मैं रामदेवरा आया हूं तो राजस्थान की जनता जो कभी भी मेरी व्यासपीठ तक नहीं पहुंच सकती वे मेरे पास आते हैं। आंसू के साथ कहते हैं, बापू, पंद्रह साल से टी.वी. पर देखते हैं, आज इतने नजदीक से देख रहे हैं! मैं इसीलिए हूं। मुझे इस धरती पे रहना है इसीलिए। आप तो कहां मेरी बात मानते हो? और कहते हो, बापू की कथा में गये थे! सोचिए, खूब सोचिए। हमारे परब की जगह है सौराष्ट्र में जो रामदेवपीर को माननेवाली जगह है, उसमें सेवादासबापू महंत थे। मेरे पर बहुत स्नेह रखते थे। बहुत अच्छे भजन गाते थे। हमारे अतीत की परंपरा के थे। वो भजन गाए तो हमारे गांवलोग कहे, आज आपने भजन गाया तो मज़ा आ गया! रामसुखदासजी कहते हैं, सत्य का स्वीकार यानी सत्संग।

'रामचरित मानस' का पाठ करते हो तो सोचो, इसमें लिखा है, 'आग्या सम न सुसाहिब सेवा।' गुरु की सेवा क्या? उसकी आज्ञा में रहना बस। वो तो मानने में हम खुश नहीं। खेर! छोड़ो, अपनी-अपनी बात है! बीच में मैं स्वच्छता अभियान करता हूं। मौन सत्संग, मुक्त सत्संग। वाद तो परमात्मा की विभूति है। उसके रूप में सत्संग विवाद नहीं, स्पर्धा नहीं है। अपनी बात को सही कहने, तमोगुण से प्रेरित बात नहीं; जहां से सत्य आये उसे स्वीकारना, संवाद करना ये सत्संग है। ये हो रहा है वो संवाद है। सुननेलायक हम सुनें, देखनेलायक हम देखें। आपने पूछा इसीलिए मैं इसमें गया।

मेरे मानस में रामदेवपीर ऐसे लगते हैं जो किसी को अंधा न करे, दृष्टि बदल दे। रामदेवपीर किसी के शरीर पे कोढ़ कर दूं ऐसा न बोल सके। जिसने ये रचना की होगी उसको सार समझाना होगा किन्तु हम केवल शब्द पकड़कर बैठ जाते हैं! शब्द की सीमा है। शब्द बहुत फ़रेबी है, धोखा देता है। अब तो विज्ञान ने भी अच्छा काम किया है। परब की जगह तो कुष्ठरोगियों की सेवा में लगी थी। बाप! हमारे जामनगर के पद्मश्री आचार्यसाहब ने भी सेवा की। गांधीबापू अपने हाथ से रक्तपितवालों की सेवा करते थे सेवाग्राम में। रामदेव बाबा तो कुष्ठरोग ठीक करे। कुष्ठ माने महारोग और दिल का महारोग है प्रेम। तुम्हारे हृदय में इतना प्रेम भर दूं कि कोई उपचार ही न हो। तुम्हें भक्ति से भर दूं। तुम्हारे दिल को प्रेम से परिपूर्ण कर दूं। हम गाते हैं-

क्या रोग लगा बैठे, दिल हम को भूला बैठे।
हम दिल को भूला बैठे, क्या रोग लगा बैठे।

शरीर का कुष्ठरोग नहीं, दिल का रोग है; प्रभुप्रीत का रोग है। और एक बात ये भी समझो कि जो परम से जुड़ता है, उसको पीड़ा बहुत मिलती है। ये पीड़ा कितनें सुखों से दिव्य होती है। एक शे'र है-

बदनाम हमें होना था हर हाल में सनम।
अच्छा हुआ कि नाम तेरे साथ जुड़ गया।

कृष्णनाम से रिश्ता जुड़ गया; परम के साथ संबंध जुड़ गया। रामदेवबाबा का स्वभाव मैं जानता हूं। गुरुकृपा से उनमें इतनी आक्रमकता न आ सके। शब्द का भले ही उपयोग किया हो, ईरादा दूसरा होगा।

मोहब्बत से ही तेरी नज़रें नज़ारा छिन लेती है।
वो रास्ता कब देखती है, वो रास्ता छिन लेती है।
-परवाज़साहब

कृष्णमूर्ति कहते हैं, बुद्धपुरुष तो मार्गमुक्त मार्ग दिखाते हैं। 'पाथलेस पाथ'; कोई मारग नहीं। इसीलिए समाज में साधुओं में हम मार्गी साधु है, जिसका मुझे गौरव है। न लेफ्टिस्ट, न राईटिस्ट। बुद्ध का मध्यम मार्ग है। न उपर का मार्ग, न नीचे का मार्ग है। मार्गी याने जो मार्ग पर चलता है। नहीं, नहीं, ये आधी व्याख्या है। मनोरथ उठा है तो कहता हूं, कभी योग बना तो एक बार मैं 'मानस-मार्गी' पर बोलूंगा। मनोरथ पूरा हो न हो, अल्लाह जाने! इस जन्म में नहीं तो दूसरे जन्म में करेंगे। भगवान राम वनपथ पे चल रहे हैं इसको विषय बनाकर मेरी व्यासपीठ मुखर हो सकती है। मार्ग पे चले वो मार्गी नहीं, वो जहां चले वहां मार्ग बन जाए उसका नाम मार्गी। उसके उपर से कबीर का पद गुजराती में आया-

ई रे मारग मारे जोवा रे,
ई रे मारग मारे जोवा रे...

'मानस-मारग' पर कथा हुई है, 'मार्गी' पर नहीं हुई। मुझे लोग पूछते हैं, आप ऐसे बोलते हो, कब करोगे? अरे यार! तू भी मेरे साथ आया कर ना जन्मोजन्म! यहां मुक्ति किसे चाहिए? स्वर्ग तो पूरी कल्पना है। किसने देखा है स्वर्ग? स्वर्ग पोखरण में है। स्वर्ग रामदेवरा में है। स्वर्ग आज रामदेवपीर बाबा की समाधि के पास है। कौन स्वर्ग है, मेरा अल्लाह जाने! खयाल अच्छा है, गालिबसाहब ने कहा, हकीकत मेरा परवरदिगार जाने! बहुत अच्छा शब्द है 'मार्गी।' तो कहने का अर्थ है बाप! रामदेवबाबा के लिए जो कहा गया, क्रूरता है उसमें। साधु क्रूर नहीं हो सकता। वो कठोर होगा तो अपने पर होगा। समाज पे वो कठोर नहीं हो सकता। डोक्टरसाहब ने पूछा, 'रामदेवबाबा चारो युग में है?' जो महत् है, परम है, श्रेष्ठ है, जो वरिष्ठ है, विशिष्ट है उसका चारों युग में प्रभाव होता है। विशेष प्रभाव विशेष युग में होता है। लेकिन सामान्य प्रभाव चारों युग में होता है। कृष्ण का प्रभाव चारों युग में, लेकिन द्वापर में विशेष। राम का प्रभाव चारों युग में लेकिन त्रेता में विशेष। भगवान राम के नाम का प्रभाव चारों युग में लेकिन कलियुग में विशेष। राम का अर्थ है सत्य। 'रामो विग्रहवान धर्म। साधु सत्य पराक्रम।'

तो राम का अर्थ है सत्य। देव का अर्थ है प्रेम। और पीर का अर्थ है करुणा। स्वर्गवाले स्वार्थी देवता यानी प्रेम नहीं। देव यानी प्रेम। इसीलिए हम कहते हैं, 'प्रेमदेवो भव।' जैसे उपनिषद कहता है, 'मातृदेवो भव।' 'पितृदेवो भव।' 'आचार्यदेवो भव।' 'गुरुदेवो भव।' वैसे ही 'प्रेमदेवो भव।' और पीर का अर्थ है करुणा। दूसरों के दुःख देख के दुःख का अहसास हो वो करुणा। तो सत्य, प्रेम और करुणा राम-देव-पीर। सत्य, प्रेम और करुणा ये तीनों तत्त्व चारों युग में है। कृष्ण तो 'गीता' में कहते हैं, मेरा तो अंत नहीं, मेरी विभूति का भी अंत नहीं होता। युग-युगान्तर तक उसका प्रभाव होता है।

'बापू, आपने कल 'बीजमंत्र जपिये सदा, जो जपत महेस।' कहा और उसमें लिखा भी 'विलंब ना कीजिए, कीजिए उपदेश।' तो बापू, उपदेश कहां से लाये?' शंकर के पास से। 'कासी मुकुति हेतु उपदेसु।' ओर किसी के पास मत जाओ, त्रिभुवन गुरु के पास जाओ। राममंत्र लेने का, बीजमंत्र लेने का भी एक घराना है, त्रिभुवन महादेव।

महामंत्र जो जपत महेसु।
कासी मुकुति हेतु उपदेसु।।

आप कह रहे हो, ये मंत्र कहां से ले? उपदेश-महामंत्र का उपदेश सिर्फ़ शिव के पास से ही लेना या तो आपके जो गुरु हो उसको शिवरूप मानो। जितने भी तंत्रग्रंथ आए उसमें गुरु को शिव कहा है। और हम भी 'गुरुर्ब्रह्मा, गुरुर्विष्णु, गुरुर्देवो महेश्वर।' कहते हैं। बीजमंत्र का उपदेश त्रिभुवन गुरु, विश्वनाथ महादेव के पास से लेना। वो 'ॐ नमः शिवाय' नहीं देंगे। आपकी निष्ठा रामनाम में होगी तो 'राम' बीजमंत्र देंगे। आपकी निष्ठा कृष्ण में होगी तो बीजमंत्र 'कृष्ण' देंगे। आपकी निष्ठा दुर्गा में होगी तो कोई मातृमंत्र बीजमंत्र में देंगे। किन्तु ये मंत्र दिया जाता है त्रिभुवन गुरु के घर से।

'बापू, मैं उज्जैन के पास के गांव का युवान फ्लावर हूं। टी.वी. पर तो आपको मैं सुनता ही हूं किन्तु कथामंडप में आने का ये दूसरा मौका है।' अपना अहोभाव लिख रहा है। 'बापू, ठाकुर रामकृष्ण कहते थे, निर्जन में व्याकुल होकर माँ को प्रार्थना करनी चाहिए। माँ वो प्रार्थना जरूर सुनती है। तो ये प्रार्थना कैसे करनी चाहिए, उस पर प्रकाश डालें।' ठाकुर रामकृष्ण ने कहा था, निर्जन में यानी एकांत में जहां भीड़भाड़ न हो वहां जाकर प्रभु को पुकारा जाए। व्याकुलता बाहर से नहीं आती, अंदर से आती है। और व्याकुलता तब आती है जब प्रीत प्रगाढ़ बने। कभी-कभी मुझको लगता है, साधु को व्याकुलता कालि की कृपा से ही आती है। वो कृपा करती है।

प्रश्न अच्छा है। गांव का फ्लावर है। और आप जिस पीड़ा से पूछ रहे हो वो व्याकुलता की एक झलक है। मधुसूदन सरस्वती ने कहा है, प्रेम आगे है, प्रेम अंत में भी है। बीच में चार प्रकार की भूमिका आती है। एक भूमिका है व्याकुलता। प्रेम आदि है, अंत भी है। पहला सूत्र है, 'परिणीता।' परिणीता के कई अर्थ है। सरस्वती महाराज का अर्थ है शायद पूर्णता का अहसास। जो आदमी प्रेममार्ग पर चलता है उसको धीरे-धीरे पूर्णता का अहसास होता है। कभी-कभी लोग नहीं कहते कि द्वारिकाधीश के दर्शन कर के मैं भर गया! बुद्धपुरुषों के पास हम क्यों जाते हैं? हमें उसकी एक झलक मिले। कोई कारण नहीं, कुछ लेना न देना, न सुनना। सिर्फ़ गये और देखे बुद्धपुरुष को तभी परिणीत अवस्था शुरू हो जाती है। बुद्ध के पास कितने

हमारे गुजरात में दंताली है। वहां के स्वामी सच्चिदानंदजी मुझे कहे, बापू, मेरे आश्रम में जितनी भगवान की मूर्ति है, उनको कोई आभूषण नहीं है। कपड़ें भी रंग से करे। भगवान को अभूषण पहनाए तो चोर आये ना? हमारे नगीनबापा तो कहते हैं, जिस भगवान के पास बहुत आभूषण हो वहां चोर को जाना ही चाहिए! आभूषण की क्या जरूरत है भगवान को? शील ही भगवान का आभूषण है। इतना ही नहीं बाप! माल-सामान होगा तो हमारे मन में भी चोर आयेंगे। उस चोर का नाम है भोग।

लोग जाते थे! बुद्ध तो चालीस साल तक एक शब्द भी न बोले, लोग परिणीता अवस्था प्राप्त कर लेते थे।

देखे और दीवाना कर दे शायद उसको जादू आये।

साखों को तुम क्या छू आये, कांटों से भी खुश्बू आये।

बुद्धपुरुष के चरणस्पर्श का क्या अर्थ है? चरणस्पर्श का अर्थ है आपके आसपास निंदक हो, कांटे हो उसमें से भी आपको प्रेरणा मिले। कबीर तो कहते हैं, ऐसे निंदक को नज़दीक में रखो। नज़दीक पहुंचते-पहुंचते साधक भर जाता है। लेकिन जल्दी फोटो खींचवा लूं, सेल्फी ले लूं! आप ईरादा ले के गये तो गये! परिणीता अवस्था आती है चाहमुक्त चित्त में। 'न मोक्षस्याकांक्षा'; गुरु, तुने देने में कुछ शेष नहीं रखा है। अब मांग-मांगकर तेरी इज़्ज़त न जाने दूं! कबीर कहते हैं, 'पूरा पाया।' 'मानस'कार कहते हैं, 'पायो परम विश्राम।' परम के सिवा परम कुछ भी नहीं दे सकता।

द्वितीय है, नित्ययोग। भक्ति करनेवाले को भीतर से लगता है कि वो मेरे पास से गया नहीं। दिखता नहीं है। मेरे पास थे तब चरणस्पर्श करता था। मैं उसे खिलाता था, पिलाता था। अब मेरे पास स्थूलरूप में नहीं है लेकिन विशेषरूप में भीतर में उसके योग का विशेष अनुभव होता है। 'नित्ययोग' फिल्म की पंक्ति मुझे बहुत प्यारी है। ओशो का साधक अर्जुन गाया करता-

जिन्हें हम भूलना चाहे, वो अक्सर याद आते हैं।

बुरा हो इस महोब्बत का, वो क्यों कर याद आते हैं?

●

वो अब हमें याद आने लगे हैं,

जिसको भुलाने में जमाने लगे हैं।

-खुमार बाराबंकवी

नित्ययोग; इसीलिए तो वृंदावनवासी आज भी कहते हैं, हमारा कृष्ण वृंदावन छोड़कर एक कदम भी कहीं नहीं गया। ज्ञान में नित्ययोग है पर टिकाउ नहीं है। प्रेम में नित्ययोग शाश्वत है। प्रेम का अहसास नित्य है। हमारा बुद्धपुरुष हम से दूर कहां है? चैतसिक अनुसंधान रहता है। आप अच्छा खाओ तो आपको गुरु याद आये कि ये चीज़ उसे बहुत प्यारी लगती है। आप अच्छा सुनो तो गुरु की याद आये कि ये उसे बहुत पसंद है। हर हाल में गुरु को पकड़ रखना है। नित्ययोग। चित्रकूटवासी कहते हैं, राम चित्रकूट छोड़कर एक कदम भी नहीं गये। रावण को मारा ये सब उनकी लीला है। बाकी हमारा ठाकुर चित्रकूट छोड़कर कहीं गया ही नहीं। जो बुद्धपुरुष के चरणों में परिपूर्ण आश्रित है, उसीमें बुद्धपुरुष का नित्ययोग है। और बुद्धपुरुष हमारे खेत में रोज चक्कर लगाता है कि मेरा साधक कैसा है? मैंने बीजमंत्र दिया वो पकड़ा कि नहीं?

एक तो हमें पूर्णता का अहसास होता है। और दूसरा नित्ययोग। नित्ययोग होते हुए भी तीसरा पडाव है व्याकुलता। 'अखियां हरिदर्शन की प्यासी।' तृप्ति नहीं मिलती आंखों को उसे देखे बिना। वैष्णवों में, प्रेमीओ में, भक्तों में संयोग-वियोग में से वियोग की ही पसंदगी होती है। गौरांग महाप्रभुजी ने व्याकुलता मांग ली, 'हे प्रभु, मैं व्याकुल रहूं और इस व्याकुलता के कारण 'हरि बोल, हरि बोल' पुकारता रहूं।' जिसको चार प्रकार के भक्तों में से आर्त भक्त कहा है। जिज्ञासु भक्त तो ज्ञानी होता है। और पूछने के बाद वो ज्ञानी हो जाए तो वो ज्ञानीभक्त हो गया। अर्थार्थी हमारे जैसा अर्थ से भक्त होता है। चौथा पडाव है मौन। कुछ न बोलना। मैं शोध-शोधकर थक गया हूं। मैं अपनी बात करता हूं कि कृष्ण की बिदाई के बाद कहीं भी राधा का निवेदन मिले। क्यों न बोली राधा?

दूसरी बीज है, मागसर सुद बीज। हर तिथि की विद्वान लोग व्याख्या करते हैं। अयोध्या के राम हो या रणुजा के राम; उनका आश्रय करेंगे वो अभय बनेंगे। मार्गशीर्ष मास में सीता-राम के विवाह हुए। एक अवलोकन है, जो भक्ति से भेंट करवाता है वो साधक अहंकार से मुक्त हो जाएगा। भक्ति उसके कंठ में माला पहनाएगी और उसका एकत्व सिद्ध होगा।

तीसरी पोष शुक्ल बीज। पोष का अर्थ है, पोषण। व्यासपीठ का अवलोकन है, जो रामदेव बाबा का आश्रय करेगा उसका शोषण नहीं, पोषण होगा, अभिवृद्धि होगी। मैं गांवों में जाता हूं। बहुत रामामंडल चलते हैं। उनके भजन, सत्संग होते हैं। उनका पोषण होता है। 'योगक्षेमं वहाम्यहम्।' ये तीसरा अवलोकन है। रामदेवबाबा का आश्रय करे और आपके पास मांगने आये कि अन्नक्षेत्र है और गेहूं कम हो गए हैं, तो समझना, उसका आश्रय कमजोर होगा वर्ना रामदेवपीर ही ट्रक भेज दे गेहूं का। पोषण करे वो पीर। मेरी आंखों ने देखा है, छोटे-छोटे आदमी रामदेवपीर बाबा का धूप कर के भजन करे और उनकी पुष्टि हो रही है। महा शुक्ल बीज, उसको माधमास भी कहते हैं। 'महामास' शब्द का उपयोग करो तो भीतर। चौथी बीज है वो बाहर की बीज नहीं है। अंदर के अंत:करण में प्रगट हुई 'आकाशबीज' है, जिससे भीतर प्रकाश हो।

राम है सत्य, देव है प्रेम और पीर है करुणा

मेरी व्यासपीठ की ओर से सभी को गोपाष्टमी की बधाई हो। कल के सायंकालीन हास्य के दो घंटे के कार्यक्रम के लिए मैं मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। खुश रहो बाप! दूसरी बात, अभी जो 'मानस-प्रेम', उसको सार रूप में संपादित किया गया। उस ग्रंथ का विमोचन हुआ, उसका मैं स्वागत करता हूं। मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं।

रोज मेरे पास रामदेवपीर की जिज्ञासा के रूप में कई बातें आती है, 'बापू, ऐसा माना जाता है कि रामदेवजी तो भगवान कृष्ण के ही अवतार है। रामदेवजी के बड़े भाई अजमलजी के बड़े पुत्र वीरमदेव को बलराम के अवतार मानते हैं। तीसरी बात, इसमें दो राय है, रामदेव बाबा की धर्मपत्नी नेतलदे, वो रुक्ष्मणी का अवतार मानते हैं? उलीबाई को मीरां का अवतार मानते हैं?' प्रभु रामदेव महाराजजी के समय में जो-जो आए, उनके साथ सांसारिक रिश्तों से जो जुड़े, भक्ति से जुड़े, किसी न किसी रूप से जुड़े इन सभी चेतनाओं के बारे में ऐसा कहा जाता है। ये अपनी-अपनी श्रद्धा का विषय है। रामदेवपीर बाबा तो एक अवतार है ही लेकिन ये कभी मत भूलना मेरे भाई-बहन कि ईश्वर के अंश के रूप में हम सब भी ईश्वर के अंशावतार है। वी आर ओल अंशावतार।

'ईस्वर अंस जीव अविनासी।'-'मानस।' और 'गीता' कहती है, 'ममैवांशो जीवलोके जीवभूत: सनातन:।' ये जीव मेरा अंश है। तो हम सब उस अंशी के अंश है। इसलिए हम सब अवतार है। गुरूर मत करना, घमंड मत करना, अहंकार मत करना। अहोभाव लेना कि हम भी हमारे अंशी के अवतार है। हम में से कोई चार अंश के अवतार है। कोई पांच अंश के अवतार है। तो कोई सात के, कोई नव, दस, ग्यारह, बारह, तेरह होते-होते राम-कृष्ण तक हम जाते हैं तो फिर हमने उसको पूर्णावतार कह दिया। तो सब अंशावतार है। क्यों अपनेआप को छोटे मानते हो? क्यों अपनेआप को निम्न समझते हो? हमारे 'मानस' में तो रावण को भी अवतार कह दिया। तो हम सब अंशरूप में उसी के हैं। हम सब सागर नहीं है तो बुंद तो हैं। हम सूरज तो नहीं है लेकिन एक छोटा-सा दीपक तो है। तो हम सब अंश के रूप में अवतार है। तो इस महान तत्त्व जब अवतरण होता है, उत्तीर्ण होता है तो उसके साथ जुड़नेवाले भी हमारी अपनी-अपनी श्रद्धादृष्टि में ये रुक्ष्मणी का अवतार है, ये मीरां का अवतार है, ये बलरामजी का अवतार है, ये भाव उठना स्वाभाविक है। और इस श्रद्धा

का मैं सन्मान करता हूं। 'मानस' में तो लिखा है ये पूरा विश्व मेरा बनाया हुआ है।

सब मम प्रिय सब मम उपजाये।

ये पूरा मैंने बनाया है। ये सब मेरे प्रिय है। ये सब मेरे प्रेम के पात्र है। तो पूज्य बाबा के साथ जो-जो चेतनायें जुड़ी पंद्रहवीं सदी में तो उसे आप आपनी श्रद्धा से कह सकते हैं।

ग्रंथों में तो यहां तक आया कि रामदेव बाबा का जो घोड़ा है वो गरुड है। जब कृष्ण अजमलजी के घर पुत्र के रूप में प्रगट होने का वादा कर चुके तो फिर गरुड ने भी कहा कि आप जा रहे हैं विष्णु के रूप में, द्वारिकाधीशजी के रूप में तो फिर वो बोले कि मैं भी तुम्हें इस रूप में बुलाउंगा। ऐसी कथा है। और महान चरित्र जब अवतरित होता है तो उसके इर्द-गिर्द में बहुत अभिप्राय आने लगते हैं। और फिर एक-एक अभिप्राय का एक-एक नया संप्रदाय बनने लगता है! ये शाखायें, प्रशाखायें बनती है। और फिर ये एक-दूसरे से घर्षण करती है! और ये घर्षण के कारण फूल नहीं खिलते हैं, आग जलती है! एक संघर्ष पैदा हो जाता है। मूल में तो ब्रह्म है। परमात्मा ही मूल में है। और ये मूल उल्टा होता है। उर्ध्वमूल है। उसकी शाखायें अधः-नीचे है। महाराज अजमलजी के यहां संतान नहीं था। और अजमलजी पांडुवंशीय है। ये चंद्रवंश है। राघवराम सूर्यवंशी है और ये रामदेवरा के रामदेव बाबा चंद्रवंशी है। इसलिए उसमें बीज पूजी जाती है। चंद्र का अंश पूजा गया। और रघुकुल में पूरा सूरज पूजा गया। क्योंकि ये दुनिया में दो ही तो वंश है, सोम और सूर्य।

तो अजमलजी निःसंतान थे। और एक समय ऐसा माना जाता कि निःसंतान को मुक्ति नहीं मिलती। ये बातें अच्छी है अवश्य, लेकिन कुछ बातें आउट ओफ डेट होती है। आज किसी के घर संतान न हो तो तुम्हें जरा भी अपने दिल को कोसने की जरूरत नहीं कि मेरी मुक्ति नहीं होगी। तुम राम भजो, मुक्ति तुम्हारी मुठ्ठी में आ जाएगी। और किसी के घर कई संतान थी लेकिन फिर भी वो दुर्गति के भोग बने हैं! इतिहास तलाशो। हर वस्तु में संशोधन होना चाहिए। और शास्त्र में तो खास होना चाहिए। हमारे देश के बंधारण में भी संशोधन की मांग उठी है। कानून को रीफर किया जाए देश-काल के अनुसार। मेरे कहने का मतलब मेरे भाई-बहन कि संतान न हो तो दुर्गति हो जाये ऐसा नहीं। दशरथजी को भी तो ऐसा लगा था।

एक बार भुपति मन मोहि।
भई ग्लानि मोरे सुत नाहीं।।

यदि पुत्र नहीं है, संतान नहीं है तो रोना नहीं। कलियुग है। आज इक्कीसवीं सदी में हम जी रहे हैं। तुलसी कहते हैं कि तुम्हारे पास संतान नहीं तो मुक्ति नहीं होगी ऐसा मत सोचो। तुम जाओ अपने गुरु के द्वार। जाओ किसी बुद्धपुरुष के द्वार। जाओ कोई पहुंचे हुए फ़कीर के पास, कोई पीर के पास। और फिर उसका निर्णय कुबूल करो। आपकी इच्छा के अनुकूल परिणाम आये तो ईश्वर कृपा और आपकी इच्छा के अनुकूल परिणाम न आये तो ईश्वर इच्छा। हल्के-फुल्के हो जाओगे। तुम्हारा हर बोज खतम हो जाएगा।

तो दशरथजी गुरु के घर गये और उन्होंने कहा कि आप यदि यज्ञ करो तो आपको पुत्र की प्राप्ति होगी। ये कथा 'मानस' की तो आप जानते हैं। यहां राजा अजमलजी निःसंतान है, पीड़ा है। राजवंश है, पांडववंश है, चंद्रवंश है; बड़ा उज्ज्वल वंश है। उसमें भी दो भेद है, मैं उसमें न जाउं। और कहते हैं, राजा अजमल सौराष्ट्र गए। रामदेवपीर के प्रागट्य में सौराष्ट्र का हिस्सा है। काठियावाड का वरदान है। मेरा द्वारिकाधीश उतरा है। अजमल राजा द्वारिका जाते हैं। भगवान द्वारिकाधीश की झांकी करते हैं। अद्‌भुत है! द्वारिकाधीश मानी द्वारिकाधीश! मंदिर में पूजारी खड़ा है और अजमलराय चाहते हैं कि द्वारिकाधीश मेरे साथ बात करे यदि वो भगवान है तो। और वहां तो चरित्र में लिखा है कि मूर्ति तो बोलती नहीं और अजमलराय उसको बुलाना चाहते हैं कि जवाब दो, मैं वहां से आया हूं। तेरा नाम सुनकर आया हूं द्वारिकाधीश। अब मूर्ति कहां बोलेगी? फिर तो ऐसी भी कथा आती है कि अजमलजी को गुस्सा आया और फिर बहुत खरी-खोटी सुनाई! और एक समय तो ऐसा आया कि अजमलजी को इतना गुस्सा आ गया कि उसको मारूं! थाल में जो लड्डु थे वो उठाकर मारूं! आस्थावान आदमी जब प्रहार करेगा तो वो प्रहार शस्त्र का नहीं होगा, प्रसाद का ही होगा।

ओशो कहा करते थे कि काशी विश्वनाथ के दर्शन के लिए आप जाये तो कितनी सांकरी गलियां है! हमनें तीर्थों को गंदा बहुत किया! तीर्थ स्वयं तो पवित्र बहुत होता है लेकिन हमने उपर से अस्वच्छ बहुत कर दिया! रामदेवरा में आया हूं तो पूरी जनता को मैं प्रार्थना करूं कि यहां की अंतरात्मा तो पवित्र है ही लेकिन उपर की स्वच्छता को अस्वच्छ मत करना। तीर्थ को स्वच्छ बनाये रखो। ये बाबा की लोग मन्नत बहुत मानते हैं। देश में स्वच्छता अभियान चल रहा है। और मैं तो वैसे भी पचपन साल से स्वच्छता अभियान चला रहा हूं। केवल बाहर नहीं, इन्सान के मन की स्वच्छता का अभियान चला रहा हूं कि हमारा मन स्वच्छ हो। हमारे सभी तीर्थों के अगल-बगल में भी स्वच्छता होनी बहुत जरूरी है। मुझे ये रामदेवपीर बाबा क्यों प्रिय है? क्योंकि ये रामदेवजी बाबा ने कोई एक तथाकथित धर्म की बात नहीं की, मानव धर्म की बात की है। अंधे को आंख देना ये कोई परचे की बात नहीं है। आज का विज्ञान ये कर सकता है।

महापुरुषों का संघर्ष भी मीठा होता है। यहां अजमलरायजी ने भी लड्डु मारे द्वारिकाधीश के चेहरे पर! पूजारी से कहते हैं कि ये बोलता क्यों नहीं? पूजारी ने कहा, मैं पंद्रह साल से पूजा करता हूं। ये मेरे से नहीं बोले तो तेरे से क्या खाक बोले! पर ये पूजारी भी मेरी दृष्टि से कम श्रद्धावाला नहीं था। द्वारिकाधीश परमात्मा है और ये अजमल राजा जिज्ञासु बनकर वहीं आया है और ये पूजारी गुरु के रूप में खड़ा है जो परम की प्राप्ति कराने में मदद करते हैं। तो पूजारी समझा रहे हैं कि रायजी, ये मूर्ति नहीं बोलेगी। यहां तो सिर्फ़ मूर्ति है। असली भगवान तो समुद्र में निवास करते हैं। तो तो समंदर में जाना पड़ेगा? बोले, हां। अब तो यहां विश्वास की कसौटी है। अजमलजी पूजारी से पूछते हैं कि आज से पहले किसी ने समंदर में जा के दर्शन किए हैं? यदि कोई हो तो मैं हिंमत करूं। पूजारी ने कहा, पीपाभगत ने समंदर में जा के दर्शन किए हैं। तो पूजारीजी, मुझे बताओ कि समंदर के किस तट से पीपाजी कूदे थे? यहां पूजारी को मैं गुरु की भूमिका में रख रहा हूं। क्योंकि ये पूजारी केवल क्रियाकांडवाला नहीं रहा होगा। ये पूजारी विश्वासु होगा। ये पूजारी अपनी पूजा और मंदिर को एक तरफ़ रख के अजमलजी को उस घाट तक ले गया। गुरु कौन है? जहां तक उसकी पहुंच होती है वो साधक के साथ-साथ चलता है। आज भी द्वारिका में कई लोग कहते हैं कि अजमलजी यहां से सागर में कूदे थे। जो हो।

समंदर के तट पर अजमल राजा आये। पूजारी ने कहा कि यहां से पीपाजी गये थे और दर्शन कर के निकले थे। अजमलजी ने कहा, आप मेरे साथ चलो। तो पूजारी मना करता है। वो छटक गया! यद्यपि वो गुरु है लेकिन कभी-कभी दूर से आये हुए की श्रद्धा कुछ ओर होती है। बोले, महाराज, मेरे चलने से कुछ नहीं होगा। आपको खुद को जाना पड़ेगा। तो साहब! विश्वास क्या नहीं कर सकता? कुंभकार के निंभाडे में बिल्ली के बच्चे यदि जीवित निकल सकते हैं; 'महाभारत' के रणांगण में वो टीटोडी के अंडे भी यदि जीवित रह सकते हैं; और लाल अग्निरूप खंभे में से प्रह्लाद का विश्वास नरसंग प्रगट कर सकता है तो विश्वास क्या नहीं कर सकता? विश्वास व्यक्तिगत होता है; आम नहीं होता, खास होता है। कोई आज भी वो ही विश्वास में जीये तो हो भी सकता है। लेकिन वो विश्वास कहां से लाये? सवाल भरोसे का है। और कहते हैं कि अजमलजी का भरोसा और कूद पड़े सिंधु में! अजमलजी के बारे में ये सत्य है; असत्य मैं नहीं कह सकता। लेकिन छः सौ साल बीत गये हैं। संशोधन जरूरी है। समंदर दो प्रकार के होते हैं। एक समंदर से तो हम परिचित है जो पृथ्वी के पोने भाग को रोके रखा है। शास्त्रों में समंदर की सात की संख्या है वो तो सप्तसिंधु है, वो तो स्थूल है। लेकिन अध्यात्म जगत के दो समंदर है जिसमें एक का नाम है भवसिंधु और दूसरे समंदर का नाम है भावसिंधु। वो सत्य को मैं नकार नहीं रहा हूं। किसी की श्रद्धा को तोड़ना मेरा काम नहीं है। अजमलजी तो ये समंदर में गये ही गये हैं लेकिन इसको आज छः सौ साल के बाद किस रूप में उजागर करें? तो हम यदि भावसिंधु में कूदेंगे। भाव यानी प्रेम, समर्पण। भावसिंधु में विश्वास रखकर कूदेंगे; भवसागर में नहीं, भावसागर में कूदेंगे तो हरिदर्शन अवश्य मिलेगा।

धर्म के नाम पर समाज को छलना बहुत आसान है। क्योंकि साधन खुबसूरत है धर्म! लेकिन आज छः सौ साल के बाद भगवान रामापीर के प्रति हम हमारा विश्वास लेकर उनके चरणों के प्रीत के समंदर में, भाव के समंदर में द्वारिकाधीश के चरणों के भक्तिसिंधु में यदि हम छलांग लगायेंगे तो द्वारिकाधीश दर्शन क्यों नहीं देंगे? अजमलराय समुद्र में कूदते हैं। ठाकुरजी के दर्शन किये साहब! विश्वास का मुलक बिलग होता है साहब! नारद, सनकादि स्तुति कर रहे हैं। ठाकुरजी शेषशैया पर विराजमान है। लक्ष्मीजी चरण संवाहन कर रही है। रूबरू दर्शन लिये। अजमलजी के विश्वास का सत्य है ये। आज हम भावसिंधु में डूबे तो हम भी ऐसा दर्शन कर सकते हैं। साहस चाहिए। और इस प्रभु की झांकी करते-करते अजमलराय भावसमाधि में डूब जाते हैं। फिर जो-जो अवस्थायें आती है, तुरीया, स्वप्न, सुषुप्ति आदि सभी अवस्थाओं को पार करते-करते एक महाभाव में डूब जाते हैं। और कहते हैं कि इस भाव में एक सुंदर नगर

में वो प्रवेश करते हैं। अट्टालिकायें है। ध्वज फ़हर रहा है। रंगोलियां लगाई है। घंटनाद हो रहा है। आरती उतर रही है। और अजमलजी पूछते हैं कि ये कौन नगर है? ये मूल द्वारिका है, जो समंदर में है। ये द्वारिकाधीश प्रभु है जो पूर्णावतार है। उनके प्रासाद की ओर अजमलजी जाते हैं और फिर राजाधीराज द्वारिकेश उसके दर्शन करते हैं।

भरोसा ओर बढ़ा। ठाकुरजी को अजमलजी पूछते हैं, आपने सिर पर पट्टी क्यों बांधी है? बोले, एक भगत ने प्रहार किया था। कौन भगत? एक आया वो, वो बहुत गुस्से में था। मैंने जवाब नहीं दिया तो उसने मुझे लड्डु मारा! तो मैंने ये पट्टी बांधी। लड्डु? वो तो मैंने मारा था! अतिशय कोमल है ठाकुरजी। भक्त का मधुर भाव उनको घायल कर देता है। ये लड्डु का प्रहार मानी मधुर भाव। ये छोटी-सी मधुर चोट हरि को अच्छी लगी। अब तो भरोसा और दृढ़ हो गया। अजमलजी कहते हैं, ठाकुरजी, मैं तो संसारी जीव हूं। मैं तो आपके द्वार आया था। बोले, मांगो अजमलजी, आपकी कोई कामना है? अजमलजी बोले, यहां पहुंचने के बाद कोई कामना करना तो ठीक नहीं लेकिन संसारी हूं, नि:संतान हूं। राजस्थान छोड़कर सौराष्ट्र आया हूं तेरे दर्शन करने के लिए। मंदिर के पूजारी की मेहरबानी कि तेरा असली ठिकाना बताया।

'रामचरित मानस' का मनु और शतरूपा का प्रसंग उठाओ। दोनों जैसे पेरेलल चल रहे हैं। तो प्रभु ने कहा कि इसमें कौन बड़ी बात है? आपके घर पुत्र होगा। दो पुत्र होंगे। जो मनु बोले वो ही अजमलजी से बुलवाया गया। महाराज, मेरे घर आपके समान बेटा हो। तो 'मानस' में जो बात आयी वो ही रामदेव चरित्र में भी आया। अच्छा लगता है। भगवान द्वारिकाधीश ने कहा कि मेरे समान तो कोई नहीं, मैं ही हूं। अद्वितीय हूं, द्वितीय कोई नहीं है। अब आपने भरोसा रखकर समंदर में छलांग लगाई और आप यहां तक पहुंचे है तो चलो, राजस्थान में भाद्र शुक्ल बीज के दिन मैं तेरे घर आउंगा। लेकिन मेरे पहले एक पुत्र आयेगा वीरमदेवजी। वरदान मिल गया है। बोले, महाराज, हम संसारी है। आप आओ तो हम कैसे पहचाने? कुछ निशानियां प्रदत्त की। ऐसा हो, ऐसा हो तो मानना कि मैं आया।

संत लोग तो नौ-नौ दिन इस पर बोलते हैं! कितना विस्तार से कहते होंगे लेकिन मैं केवल सार के रूप में आपके सामने रख रहा हूं। भावसमाधि से जब वो जागे तो वो ही समंदर का तट जो उपर की द्वारिका है। दौड़कर वो गये द्वारिकाधीश के मंदिर में। पूजारीजी वहीं थे और कहा, भगवन्, आपके अनंत उपकार। पूजारी ने कहा कि आप जीवित वापस आये? उसने कहा, वापस क्या, जनम-जनम का फल लेकर मैं आया हूं। कोई मानने को तैयार नहीं! अजमलजी को देखने के लिए पूरी द्वारामती इकठ्ठी हुई है। अब अजमलजी को जल्दी है कि मैं जल्दी राजस्थान जाउं। अजमलजी लौटते हैं और परिवारजनों को कहते हैं लेकिन कोई मानने को तैयार नहीं। विश्वास व्यक्तिगत होता है। और फिर तो जोग, लगन, ग्रह, वार, तिथि ये सब हुआ और कथा कहती है कि भाद्र शुक्ल द्वितीया है और बाबा रामदेवजी प्रगट होते हैं; अवतार धारण करते हैं। जो निशानियां कही गई थी वो सब सबूत मिले। पहले वीरमदेवजी और बाद में बाबा रामदेवजी प्रगटे।

तो बाप! 'मानस-रामदेवपीर', जिसकी हम चर्चा कर रहे हैं। सत्य, प्रेम और करुणा ये तो योग बन गया कि अचानक यहां लिख दिया गया। राम है सत्य, देव है प्रेम और पीर है करुणा। सत्य अचल होता है, प्रेम चल और अचल दोनों होता है। और करुणा सदैव चलित होती है। ये तीनों की आंतरिक अवस्था है। राम सत्य है; कोटि-कोटि हिमालय की तरह अचल है। सत्य उसे कहते हैं जो हिले ना, डुले ना। रामदेवपीर में जो 'राम' शब्दब्रह्म है वो सत्य का प्रतीक है। अचलता लिये हुए है। इसलिए शास्त्रीय बोली में सत्य को त्रिकाल अबाधित माना है; चलित न हो। तो मेरे श्रावक भाई-बहन, आप इन बातों को चुन लो ऐसा मैं नहीं कहूंगा लेकिन सुनो जरूर। रामदेवपीर बाबा अचल है; समाधि है। फिर है देव, ये चल और अचल दोनों होता है। प्रेम स्थिर भी होता है और चलित भी होता है। आप कहेंगे, कैसे? लेकिन कभी-कभी प्रेम की जो आठ-आठ अवस्थायें बताई है इसमें प्रेम कभी-कभी आदमी को स्तंभित कर देता है; जडवत् कर देता है; अचल बना देता है। और कभी-कभी प्रेम चलित होता है। ये दोनों लक्षण प्रेम के है। पीर यानी करुणा। करुणा सदैव चलित होती है; बंधियार नहीं होती; प्रवाहमान होती है; गतिमान होती है। इसी रूप में 'मानस' में और मेरे हृदय में मैं रामदेवपीर को अवलोक रहा हूं।

तो मेरे भाई-बहन, सुनना एक कला है, विज्ञान है। हमारी दशा क्या हुई है कि समाज के इन्द्रों ने हमारे कवच-कुंडल छीन लिए हैं! 'महाभारत' की कथा में कर्ण

के कवच-कुंडल छिन लिए गये। और समाज के इन्द्रों ने, प्रलोभनों ने बिलग-बिलग किसी न किसी रूप में हमारा श्रवण विज्ञान छिन लिया! सुनना एक परम भक्ति है, यदि सुनना आ जाये। व्यासपीठ क्या बोले ये तो श्रवण विज्ञान से पकड़ा जाएगा। बाकी तो लोग अपने ढंग से सुनते हैं! अब तुलसीदासजी के बारे में कितनी आलोचना होती है! विरोध होता है! और अब तुलसी तो है नहीं। चार सौ पचास या पांच सौ से करीब साल हुए। और यहां तक आनंद की बात है कि रामदेवबाबा पहले हैं, तुलसी बाद में आते हैं। उसको छ: सौ साल करीब। और तुलसी सोलह सौ में आये और ये पंद्रह सौ में आये। सुनना यदि समझ में न आया तो गलती हो जाएगी। इसमें वक्ता का दोष नहीं है। हमारा श्रवण कुंडल किसी-किसी प्रलोभनों ने छिन लिया है! कवि बहुत संवेदनशील होता है। तुलसी के बारे में भी यही है कि लोगों ने ठीक से श्रवण नहीं किया। रामदेवजी बाबा के उसमें भी यही है कि उसने जो चौबीस फ़रमान किये हैं उसको सुननेवालों ने अपने श्रवण विज्ञान का ठीक से उपयोग नहीं किया तो उसको चमत्कारों और परचों में खपा दिया! परम लोग नाशवंत वस्तु नहीं बोलते, शाश्वत वस्तु बोलते हैं। हर काल में उसकी पवित्रता बरकरार रहती है। अब तुलसी की ये एक चौपाई है-

साहस अनृत चपलता माया।
भय अबिबेक असौच अदाया।।

मंदोदरी जब रावण को समझाने लगी कि आप वैर छोड़ दो, तब रावण ने कहा कि स्त्री में आठ अवगुण होते हैं, ऐसा लोग कहते हैं। इसीलिए तू ऐसी बातें करती है। तेरे पति के सामने देख कि मैं कौन हूं? तो इस पंक्ति को लेकर बहुत धुलाई होती है तुलसी की! अब गोस्वामीजी तो नहीं है। जो-जो रामकथा कहते हैं उसकी आ बनती है! इसका क्या अर्थ? ये चौपाई निकाल देनी चाहिए! पर ये तुलसी को अधिकार है, मोरारिबापू को नहीं! उसका अर्थ समझो यार! किस रूप में कहा गया है? यहां नारी की निंदा नहीं है। बाप! शास्त्रकार, कवि, मनीषी, पहुंचा हुआ महापुरुष कभी किसी की निंदा नहीं कर सकता। और वो निंदा करे तो वो पहुंचा नहीं है। नारी दो है-

नारी भगति सुनहु तुम्ह दोऊ।

एक नारी का नाम है माया। दूसरी का नाम है भक्ति। जहां-जहां निंदा नहीं, निदान करने की बात आई वहां मायारूपी नारी की चर्चा है, भक्तिरूपी नारी की चर्चा नहीं है। ये 'मानस' स्पष्ट करता है लेकिन ये हम पढ़ते नहीं और आरोप लगा देते हैं! रामदेवजी बाबा के चरित्र में जो-जो महिलायें पात्र आई, उद्धार किया इस महापुरुष ने। स्त्री सम्मान किया। लेकिन कुछ लोग जिसे कोई न कोइ चूक ही निकालनी है तो उससे तो अल्लाह बचाये! उसको कौन समझाये? मायारूपी नारी जो है उसके लिए चार अवगुण है लेकिन भक्तिरूपी नारी के लिए यही चार चीज अवगुण नहीं है बल्कि आभूषण है। एक, साहस ये स्त्रियों का अवगुण है ये रावण बोला। मायावी नारी जो ठीक से जीवन नहीं जीती वो कभी न कभी गलत साहस कर लेती है ये अवगुण है लेकिन भक्तिस्वरूपा नारी का वो ही साहस सद्गुण है। भक्ति में साहस होना ही चाहिए। अजमलराय की भक्ति में साहस न होता तो समंदर में कूद नहीं पाता।

साहस; भक्ति में साहस शृंगार है। माया में साहस विकार है। ये दोनों रूप समझ लेना चाहिए। आलोचना का, निंदा का प्रश्न नहीं उठेगा। नरसिंह ने साहस किया। प्रह्लाद ने साहस किया। अरे छोड़ो यार! विभीषण ने साहस किया। लंका का साम्राज्य एक झटके में छोड़कर वो निकल पड़ा। संग करना हो तो राम का ही। दूसरा, अनृत; अनृत मानी जो नृत नहीं है, असत्य। मायारूपी स्त्री झूठ बोलेगी। लेकिन भक्तिरूपी नारी यदि झूठ बोले तो वो भी उसका आभूषण है। राम से जो डरेगा पक्का समझ लो, हराम से वो नहीं डरेगा। फिर हराम उसका धर्म बन जाएगा। राम तो आकाश है। और आकाश का कोई धर्म नहीं होता। राम पवन है। वायु का कोई मज़हब नहीं होता। राम अग्नि है। अग्नि न हिन्दु होती है, न मुसलमान होती है। चंचलता यानी चांचल्य। मायारूपी नारी में चंचलता अवगुण है। ये एक भटकाव है। माया शास्त्रीय बोली में व्यभिचारिणी है। भक्ति 'गीता' की बोली में अव्यभिचारिणी है। लेकिन नारी यदि भक्तिरूपा है, भावरूपा है तो वो ही चंचलता आभूषणरूप है। मीरां नाची ये नृत्य एक प्रकार का चांचल्य तो है। लेकिन मीरां का ये अवगुण नहीं है, भूषण है। माया; माया यानी परदा रखना। कपट, जहां कोई न कोई परदा डाला गया हो। जो स्पष्ट नहीं है। मायारूपी नारी के लिए कपट अवगुण है लेकिन भक्तिरूपी नारी के लिए कपट भी भूषण है। किस रूप में?

तुम्ह पावक महुँ करहु निवासा।
जौं लगी करौं निसाचर नासा।।

राम ने सीता को कहा कि आप भक्ति है। रावण आपका अपहरण करने के लिए आयेगा, मुझे ललित नरलीला करनी है इसलिए आप अग्नि में समा जाओ और कपटी सीता बनकर बाहर आओ। भक्ति में छिपाना, कपट मानी किसी राज़ को छिपाये रखना। भय; मायारूपी नारी के लिए भय अवगुण है-

बिनु अवसर भय ते रह जोई।
जानेउ अधम नारीं जग सोई।।

अनसूयाजी बोली है, ऐसी मायावी नारी के लिए भय अवगुण है। लेकिन भक्तिरूपी नारी के लिए भय सद्‌गुण है। भक्ति करनेवाला अपने गुरु से थोड़ा डरेगा। गुरु डरायेगा नहीं। डरायेगा वो गुरु नहीं लेकिन अपने आप थोड़ा डर जाएगा कि कहीं मेरे से मेरे गुरु न चाहे ऐसा कोई काम न हो जाये! ऐसा डर जरूरी है कि श्रेष्ठों से थोड़ा डर रखना। अभय होने की बड़ी निशानी है। अविवेक; ये मायारूपी नारी का अवगुण है लेकिन भक्तिरूपी नारी का गुण है। मायारूपी स्त्री रसोई बनाये और जूठी करे वो अविवेक है लेकिन भक्तिरूपी स्त्री के लिए ये आभूषण है। शबरी यदि जूठे बैर राम को दे ये आभूषण है। असौच; असौच मानी अपवित्रता। क्योंकि शरीर की जो रचनायें है उसमें कुछ घटनायें तो ऐसी घटेगी। कुदरत की देन है। उसमें आप क्या करोगे? लेकिन भक्तिरूपी नारी के लिए असौच मानी मा सौच। असौच मानी चिंता न कर। भक्ति चिंता नहीं करती। अर्जुन को कहा गया कि 'सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।' अदाया; निर्दयता ये मायारूपी नारी का कठोरपन है, अवगुण है। अदाया मानी जिसके लिए कुछ भी अदेय न हो। भक्ति जो मांगे सो दे।

मेरी व्यासपीठ उसको श्रवण विज्ञान कहती है। इस ढंग से सुनने से सही मूल्यांकन होता है। बाकी या तो अधोभाव प्रगट होता है या अहोभाव प्रगट हो जाता है। मूल्यांकन होना चाहिए। ओशो का एक वाक्य है। वो कहते हैं कि बोलनेवाले ने तो क्या कहा वो वो जाने लेकिन मैंने अपने ढंग से सुना है। अर्थ हम अपना निकालते हैं। जब इस रूप में सम्यक् श्रवण होगा तो एक कथा भी आदमी की धन्यता के लिए काफ़ी बन जाती है। तो मेरे भाई-बहन, यहां रामदेवरा में जहां अंतरंग दृष्टि से कह रहा हूं, बाहर तो कलि प्रभाव है। बाकी जिस भूमि पर न आधि है, न व्याधि है, न उपाधि है, केवल रामदेवबाबा की समाधि है वहां भगवत्कथा का होना अपने आप में महिमावंत है।

तो अब जो समय बचा है उसमें कथा का कुछ क्रम ले लें। रामदेवबाबा के जन्म का तो वर्णन मैंने आपको कह दिया। अब मेरा जो राम है इस राम के जनम की बात मुझे आज संक्षेप में कहनी है। याज्ञवल्क्य महाराज के सन्मुख महर्षि भरद्वाजजी ने प्रयाग में जिज्ञासा की कि भगवन्, मुझे बताओ कि राम क्या है? वो मुस्कुराये। और वक्ता मुस्कुराहट से भरा होना चाहिए। ये मुझे अच्छा लगता है। शब्द बाद में आये, मुस्कुराहट पहले आई। भगवान राम के स्वभाव और शील की बात गोस्वामीजी करते हैं कि भगवान बोलने से पहले मुस्कुराते थे। मुस्कुराना पुण्य है और मुरझाना पाप है। हंसते रहो। याज्ञवल्क्यजी कहते हैं कि आपको राम की प्रभुता का परिचय तो है लेकिन मूढ़ की तरह प्रश्न पूछकर आप मेरे से राम के गूढ़ चरित्र सुनना चाहते हैं। आप जैसा प्रपन्न श्रोता मिल जाये तो मैं जरूर कथा सुनाउंगा। तीरथराज प्रयाग की कर्म की पीठ पर बैठकर याज्ञवल्क्यजी ने कथा का आरंभ किया। पूछी थी रामकथा और शुरु की शिवकथा। राम तक पहुंचना है तो शिव का अनादर न हो, ये सूत्र याद रखें। शिव है द्वार राम गर्भगृह का। शिव का अर्थ होता है कल्याण। कल्याणकारी विचारों से विश्राम की विचारधारा तक पहुंचना होता है।

तो पूरा शिवचरित्र सुनाया। भगवान शिव और सती कुंभजऋषि के आश्रम में कथा सुनने जाते हैं वो त्रेतायुग था उस समय। और तब रामलीला चल रही थी। उसमें दंडकारण्य में रावण सीता का हरण कर के चला गया और सीता के विरह में राम रो रहे हैं। ये प्रभु की ललित नरलीला चल रही थी तभी उसी समय शिव और सती कथा सुनकर कैलास जा रहे हैं। शिव सोचने लगे कि भगवान लीला कर रहे हैं। मैं उसकी कथा सुन के आया हूं। हृदय में भाव उमड़ा है। और सती तो दक्ष की बेटी है। दक्ष मानी बुद्धिमत्ता। बुद्धिमान की बेटी होने के कारण सती के मन में बुद्धि की ज्यादा मात्रा है। इसलिए तर्क-वितर्क कर रही है। जो पत्नी के वियोग में रो रहा है वो काहे का सच्चिदानंद हो सकता है? शिव समझ गये और कहने लगे कि देवी, जिसको मैंने सच्चिदानंद जानकर दूर से प्रणाम किया है ये मेरे इष्टदेव राम है। आपके मन में संदेह हो रहा है वो ठीक नहीं है। ये संशय विनाश तक ले जाएगा। कृपालु शिव ने बार-बार सती को समझाया लेकिन सती को उपदेश न लगा तब शिव ने कहा, देवी, अगर आपको यकीन नहीं होता तो आप जाइए और परीक्षा करिये। बुद्धि परीक्षा से राजी होती है और भक्ति परीक्षा नहीं करती, प्रतीक्षा करती है। अब यहां सती जाती है परीक्षा के लिए। और शिवजी यहां अकेले सोचते हैं कि अब मुझे लगता है कि दक्षकन्या का विधाता विपरीत बन चुका है। लेकिन शिव शिव है। उसने निर्णय किया कि-

होइहि सोइ जो राम रचि राखा।
को करि तर्क बढ़ावै साखा।।

मेरे राम ने जो निर्णय किया होगा वो ही होता होगा। मैं क्यों तर्क करूं? शिवजी हरिनाम लेने लगे। सती परीक्षा लेने गई। सीता का रूप लिया। पकड़ गई! समझ में आ गया कि ये ब्रह्म है। सती शिव के पास पहुंची और झूठ बोली कि मैंने कोई परीक्षा नहीं की है। शिव ने जब ध्यान में देखा तो शिव ने संकल्प कर लिया कि सीता तो मेरी माँ लगती है। जब सती का यह शरीर रहेगा तब तक हमारा पति-पत्नी का संबंध खतम! शिव कैलास पहुंचे। बाहर ही सहज आसन लगाकर बैठ गये और समाधि लग गई। सत्तासी हजार साल बीत गये। इतने सालों के बाद शिव समाधि से बहार आये तब 'राम-राम' बोलने लगे। सती सन्मुख गई। शिव सती को दुःख न लगे इसलिए कथा कहने लगे। उसी समय दक्ष प्रजापति यज्ञ करते हैं। और शिव को निमंत्रण नहीं देते। सती मानी नहीं। यज्ञ में गई और अग्नि में अपना देह जलाकर भस्म हो गई। बुद्धि जल गई और हिमालय की स्थिरता से श्रद्धारूपी पार्वती का जन्म हुआ। हिमाचल धन्य हो गया। बड़ा उत्सव हुआ। और हिमाचल की समृद्धि बढ़ती गई। बेटी बड़ी हुई। नारदजी आये। नामकरण किया है। उसके बाद उसे पति कैसा मिलेगा वो कहा। शंकर का संकेत किया। पार्वती ने तप किया। आकाशवाणी ने वरदान दिया कि तुम्हें शिव मिलेंगे। इस तरफ़ शिव जागे और परमात्मा ने वचन लिया कि तुम पार्वती से ब्याह करो। सनकादिक आये। परीक्षा ली। पक्का हो गया। शिव को फिर से समाधि लग गई। कामदेव आया। समाधि भंग की और कामदेव को जला दिया। और फिर भगवान शंकर और पार्वती के विवाह की कथा तुलसी 'मानस' में लिखते हैं।

याज्ञवल्क्य कहते हैं, हे भरद्वाज, ऐसे महादेव एक बार वेद-विदित वटवृक्ष के नीचे बैठे हैं और योग्य अवसर पा कर पार्वती चरणों में बैठती है और पूछती है कि रामतत्त्व क्या है? और भगवान शिव प्रसन्न होते हैं। शिव ने कथा का आरंभ किया। राम अवतार के पांच कारण बताये और राम अवतार में राम की कथा से पहले रावण के अवतार की कथा सुनाई। रावण के त्रास से पृथ्वी अकुला उठी और ब्रह्मा के पास जाकर प्रार्थना करने लगी। ब्रह्मा की अगवानी में मुनिकुल और पूरी पृथ्वी का प्रतिनिधित्व करती हुई गाय के रूप में धरती परमतत्त्व की स्तुति करते हैं। सब ने पुकार की। आकाशवाणी हुई कि मैं खुद अंशों के सहित अवतार धारण करूंगा। तुलसी ने भूमिका बनाई और फिर हमें अयोध्याधाम लिए चलते हैं, जहां राम का जन्म होता है। तुलसी रामजनम की कथा कहते हैं। सब प्रसन्न है क्योंकि हरि आने की बेला है। देवतागण प्रभु की गर्भस्तुति करते हैं। यहां कौशल्या के प्रासाद में प्रकाश हुआ और मेरे गोस्वामीजी लिखते हैं, त्रेतायुग, चैत्र मास, शुक्ल पक्ष, अभिजित नक्षत्र, नौमी तिथि, भोमवासर, लोगों का मध्याह्न में भोजन और विश्राम का काल। यहां स्तुतियां पूरी हुई और भगवान के प्रगट होने की बेला आई।

भए प्रकट कृपाला दिनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्‌भुत रूप बिचारी।।

प्रभु प्रगट हुए। माँ अद्‌भुत रूप देखकर स्तब्ध हो गई! माँ को ज्ञान हुआ कि ये ब्रह्म है। फिर माँ ब्रह्म को बालक बनाती है और रामजनम होता है। और शिशुरुदन सुनकर सभी दास-दासियां दौड़ आई! आया ब्रह्म और सब को हुआ भ्रम! सब आये। महाराज को बधाई दी गई। आप सब को रामदेवरा में रामजनम की बधाई हो।

राम है सत्य, देव है प्रेम और पीर है करुणा। सत्य अचल होता है। प्रेम चल और अचल दोनों होता है। और करुणा सदैव चलित होती है। ये तीनों की आंतरिक अवस्था है। राम सत्य है; कोटि-कोटि हिमालय की तरह अचल है। रामदेवपीर में जो 'राम' शब्दब्रह्म है वो सत्य का प्रतीक है। अचलता लिये हुए है। फिर है देव, ये चल और अचल दोनों होता है। प्रेम स्थिर भी होता है और चलित भी होता है। ये दोनों लक्षण प्रेम के है। पीर यानी करुणा। करुणा सदैव चलित होती है; बंधियार नहीं होती; प्रवाहमान होती है; गतिमान होती है।

पाप, पुण्य और प्रारब्ध भजन के विघ्न है

'मानस-रामदेवपीर', जो इस कथा का केन्द्रबिंदु है, जिसकी हम और आप मिलकर संवादी सूर में कुछ सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा कर रहे हैं। विषय प्रवेश हो इससे पूर्व सायंकाल इसी पंडाल में हम सब साथ मिलकर व्यासपीठ के सामने जो मंच है वहां रावण की 'रामायण' एक खंडकाव्य पर आधारित नाटक का दर्शन कर रहे थे। मैं अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। खुश रहो, बाप! खुश रहो। दूसरी खुशी की बात है कि हमारे सामने के सोफ़े पर बैठे थे वो आकर बता गये बापू, हमारे देश के माननीय प्रधानमंत्री मोदीजी जाहेरात कर रहे हैं कि आज बारह बजे के बाद पांच सौ की नोट, हजार की नोट बंद हो जाएगी! बहुत खुशी हुई। मैं सिर्फ़ इतना कहना चाहता हूं एक साधु के नाते सब से डिस्टन्स रखते, धर्म जरूर है, धर्म सनातन है लेकिन जिसका मैं गायन करता हूं वो 'मानस' का प्रेमाचार्य भरत धर्म को भी ठुकराता है। यह कोई नई बात नहीं। स्वयं कृष्ण कहते हैं, सभी धर्मो को छोड़ दे। और काम को भी ठुकराया। इवन मोक्ष को भी ठुकराया। मेरा क्षेत्र तो अध्यात्म है सत्य, प्रेम और करुणा का। फिर भी इस देश के एक नागरिक होने के नाते, इस देश के मतदाता होने के नाते सब से डिस्टन्स बनाए हुए मैं यह कहूंगा कि समग्र 'राष्ट्रहिताय' समग्र 'राष्ट्रसुखाय' जो-जो सद् निर्णय हो और जो-जो सद् प्रवृत्ति हो उसमें मेरी व्यासपीठ की प्रसन्नता है। और यह भी नोंध ली जाए मेरी व्यासपीठ अकेली नहीं है। उसके साथ मेरे हजारों फ्लावर्स जुड़े हुए हैं।

तो मैं बहुत प्रसन्नता व्यक्त करता हूं लेकिन साथ-साथ एक सूचन भी करना चाहता हूं कि सामान्य जन को नुकसान न हो। सामान्य आदमी को यह जानकारी जहां-जहां से मिले वहां निःशुल्क सेवा मिले क्योंकि पसीने के पैसे हैं। कल ही हम किसी संदर्भ में स्वच्छता अभियान और सर्जिकल स्ट्राईक की बातें कर रहे थे। फिर एक बार हमारे प्रधानमंत्री ने मौका देखकर सर्जिकल स्ट्राईक की और नए रूप में स्वच्छता अभियान किया। काले धन के बारे में स्तुत्य निर्णय है। फ़रेबीकांड जो खतरनाक ताकत को बल देता है उसके लिए स्तुत्य निर्णय है। फिर एक बार मैं बहुत क्लियर करना चाहता हूं क्योंकि मुझे खबर है, मेरा मेसेज सभी जगह पहुंचेगा। हम सब एक बार भाव से बोले, 'राष्ट्रदेवो भव।' यहां राष्ट्र से बड़ा कोई नहीं है। सब राष्ट्र के सेवक हैं लेकिन मेरी व्यासपीठ राष्ट्र तक सीमित नहीं है। इसलिए मध्य में एक सूत्र बोलना चाहूंगा। 'राष्ट्रदेवो भव' और 'विश्वदेवो भव।' 'राष्ट्रदेवो भव।' बहुत-बहुत धन्यवाद। मैं अपने निवेदन को आप भूल न जाए इसलिए फिर एक बार कहूं, सामान्य जन की पसीने की कमाई बेकार न जाए उसका बहुत ध्यान रखना।

बाप! 'मानस-रामदेवपीर', राजस्थान के इतिहासविदों ने, राजस्थान और गुजरात के भक्त अथवा श्रद्धा और विश्वास में जीनेवाले लोगों ने और इस्लाम विचारधारक लोगों ने रामदेवपीर बाबा को तीन रूप में देखा है। इसको अनदेखा न किया जाए। क्योंकि जब तक मैंने रामदेवपीर बाबा का अवलोकन किया है, तीन प्रकार के अवलोकन है। एक आस्थावान अवलोकन। एक इतिहासविदों का अवलोकन। और एक उस समय जो इस्लाम धर्म की परंपरा चल रही थी उसका अवलोकन। कहीं-कहीं इतिहासविद एक भी नहीं है कि रामदेवपीर बाबा का जन्म कहां हुआ है? आपको जान के हैरानी होगी कि जो ओथेन्टिक है इनमें कई मत है इनमें से एक मत है, बाबा का जन्म कश्मीर में हुआ! कोई-कोई तो दिल्ही में हुआ ऐसा भी कहते हैं। लेकिन लोगों का जो अवलोकन है, बहुत मात्रा में उसको प्रमाण माना गया है और उसका अवलोकन है कि उनका प्रागट्य राजस्थान में ही हुआ। मत बहुत होते हैं इसलिए हम उसमें न जाए। विवाद हमारा क्षेत्र

नहीं। लेकिन तीन प्रकार का अवलोकन जरूर है। आस्थाजगत उसको द्वारिकाधीश का अवतार मानते हैं। रामदेवपीर बाबा का चरित्र जब तक तलगाजरडी आंखों से देखता हूं तब पूर्व अवतारों जो है उसमें जो-जो घटनाएं बनी है वो रामदेवपीर बाबा में भी दिखाई दे यह एक स्वाभाविक है। आस्था जगत उसको कृष्णावतार कहते हैं। मैंने कल आपको कहा, अंश के रूप में हम सब अंशावतार है। रामदेवपीर बाबा तो सवाल ही नहीं।

त्रिचि में कथा करने गये। कावेरी के तट पर दानाभाई की कथा। हम मंदिर में दर्शन करने गये तो सौ-डेढ़ सौ आदमीओं के साथ महानुभाव चल रहे थे। हमें जिज्ञासा हुई, महानुभाव कौन पधारे हैं? कहे, अवतार हो चुका है। जय हो! जय हो! हमारे गुजरात में भी कई अवतार है। वो कहता है, दिल्ही की सरकार मैं चलाता हूं! लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं है। वो अपने आप को अवतार कहते हैं! रामदेवपीर बाबा तो अजमलजी वरदान ले के आया है, वो तो अवतार है उसको अवतार कहने में आपत्ति क्या है? जहां श्रद्धा है वहां कोई सवाल ही नहीं। अब देखो, कृष्ण के अवतार में जितनी घटना घटी करीब-करीब रामदेवजी के साथ भी वो ही घटना घटी। क्योंकि एक महानदी निकलती है तो कई प्रवाह जुड़ जाते हैं। आपको आश्चर्य होगा कि रामदेव बाबा ने जो चौबीस परचा दिया; और परचा को मैं परिचय कहता हूं। रामदेवपीर बाबा ने अपने फ़रमान में एक वाक्य कहा है। उन्होंने कहा, ओर परचा ठीक है लेकिन हमारी आंखों के सामने यह जो जगत बनाया है वो बड़ा परचा है। इसलिए मैं कहता हूं, सूरज दररोज निकलता है वही चमत्कार है। रामदेवपीर बाबा अंधश्रद्धावाले आदमी नहीं रहे हैं। उसने जो परचे दिखाए उसमें सब से पहले माँ को दिखाया। हम क्या कहते हैं, राम जन्मे नहीं, प्रगट हुए-

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्‌भुत रूप बिचारी।।

रामदेवपीर बाबा के जीवन में भी ऐसी बात मिलती है। उसका जनम नहीं हुआ, पलने में प्रगट हुए। अवतार ही अवतार को समझ सकता है। ओतार आवे ए न समजी शके! वीरमदेवजी सोए हुए थे। बगल में रामदेवपीरजी सो रहे थे। सीधे रामदेवपीर आ गए! अब निर्णय कौन करे, इसमें वीरमदेव कौन है? अब लोगों में एक भ्रांति भी आई कि भैरवा राक्षस का त्रास है। जैसे कोई बालक का जन्म होता था, पूतना आती थी। सब कृष्ण के साथ जुड़ती बातें है। पूतना सब बालक को मार देती थी। यहां भैरवा सब को मार देता था! भैरवा के डर से गांव के किसी घर में बच्चे का जन्म हुआ हो, मेरे घर में रहेगा तो भैरवा मार देगा उसी डर से कोई स्त्री भयभीत होकर अजमल के घर वीरमदेव के पास पलना में सुलाई गई हो यह भी हो सकता है। फिर माँ को बुलाई गई। यहां-वहां दो बालक कैसे? निर्णय नहीं कर पाए तो क्या है? माँ मीनल को पहला परचा, पहला परिचय करवाया कि मैं अवतार हूं। वो ये था कि दूध सामने चूल्हे पर उबलता है। यहां माँ दो बालक को माँ वीरमदेवजी और रामदेवजी को दूधपान करा रही है। वहां दूध उबल रहा है। रामदेवबाबा को हुआ, मेरी माँ को चिंता हो रही है। इसलिए दूध नीचे उतार दिया। फिर माँ ने निर्णय कर लिया, यह वीरमदेव, यह रामदेव। अपने बच्चे के बारे में माँ से ज्यादा कौन प्रमाणपत्र दे सकता है?

रामदेवजी बाबा छोटे थे तब गेंद से खेलते थे। यह कोई मेरी जेब से निकली बातें नहीं है, याद रखना। जैसे भगवान कृष्ण गेंद से खेलते थे। कृष्णावतार में कालि के मुख में से गेंद लाई गई। असर देखिए। कहते हैं, रामदेवजी बाबा गेंद से खेलते थे। गेंद लुड़कती-लुड़कती जंगल में चली गई। रामदेवपीर बाबा अपनी बाललीला करते हैं। गेंद लेने बहुत दूर चले गए। वहां एक आश्रम था। बालदेव जो रामदेवपीर के गुरु। वहां गए बालक रामदेव। मेरी गेंद यहां आई है। सिर हाथ रखा, अरे बालक, तू कहां से आया? श्रेष्ठ को सिद्ध करने के लिए साधन भी सामान्य खोजना पड़ता है। उसमें सच्चाई की परख करने मत जाना। भक्तिरूपी भाव हो तो अनृत भी भूषण हो जाए। बालदेव कहते हैं, तू यहां कहां आया? यहां भैरवा राक्षस का त्रास है। उसको मनुष्य की गंध आती है। तेरी गंध आते ही मार देगा! मैं आ गया हूं, नहीं जाउंगा। बाबा ने गुदड़ी में सुला दिया। रामदेव के जन्म की बातें बिलकुल मनु-शतरूपा की तरह आती है। 'माणस गंधाय, माणस खाउं!' भैरवा हा-हा करता आया! 'रामायण' की असर देखो, 'सुनि ताडका क्रोध।' जैसे विश्वामित्र ने कहा, ताडका आई, मारो! गुदड़ी हटाई। मानो वस्त्राहरण की असर आई। जो ओढ़ाया था वो निकाल दिया-

घोडले चढ़ीने पीरे भैरवाने मार्यो।
धरती बोली रे धम्मा रे धम्मा।
मारा हिंदवा पीरने जाजी रे खम्मा।

•

एक ही बान प्रान हरि लीन्हा।
दीन जानि तेही निज पद दीन्हा।।

बाबा के समय राक्षस था वो बहुत त्रास गुजारता था। साधु-संत को परेशान करता था। राम जैसी ही मानो रामदेवजी की प्रतिज्ञा। भैरव तीन प्रकार के होते हैं। उज्जैन और काशी का काल भैरव। उत्तरकाशी का भैरव। शांत भैरव।

निराकारमोंकार मूलंतुरीयं।
गिराग्यान गोतीतमीशं गिरीशं।।
करालं महाकाल कालं कृपालं।
गुणागार संसारपारं नतोऽहं।।

रामदेवपीर बाबा ने भैरवा को मारा उसका मतलब उसकी शरण में आये उसकी कालभीति को खतम कर देना। दूसरा है शांत भैरव उत्तरकाशी का। सब अवतार प्रवृत्त हुए हैं, सक्रिय हुए हैं। ब्रह्म जो तटस्थ-कूटस्थ बैठे रहे तो संसार का निर्वाह कैसे हो? इसलिए यहां थोड़ी देर शांत भैरव भी सक्रिय हुए। 'शिवसूत्र' में तीसरे भैरव की सूचना मिली। 'उद्यमो भैरव:।' गुरु कहता है, मैं सक्रिय होउगा तेरे लिए। और आश्रित, तुझे अब उद्यम करने की जरूरत नहीं। मैं अपनी स्वाभाविक शांति छोड़कर तेरे लिए प्रवृत्त हूंगा। यह भैरव की व्याख्या है। तो बाबा रामदेवपीर ने इतनी छोटी उम्र में राक्षस को मारा। घोड़े पर चढ़ना यानी मन पर काबू रखना। भैरवा को वही मार सकता है जिसके अपने मन पर लगाम कसी है-

बल बिबेक दम परहित घोरे।
छमा कृपा समता रजु जोरे।।

विवेकरूपी घोड़ा, इन्द्रियों पर लगाम है; संयम-नियम का तीर है हाथ में। इन्द्रियों पर संयम-नियम। ये सब क्यों? किस घोड़े पर चढ़ा है? दूसरों की कल्याण की यह सवारी है। छोटे से छोटे को स्थापित करने की यह सवारी है। हिन्दु-मुस्लिम का भेद मिटाने की यह सवारी है-

सौरज धीरज तेहि रथ चाका।
सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका।।

कोई काम न करना निष्क्रियता रूपी भैरवा। और हे आश्रित, तुझे कोई उद्यम करने की जरूरत नही है। उद्यम रूपी भैरव को खतम कर दूंगा क्योंकि तू मेरी शरण में आया है। तू मेरी जिम्मेवारी है। तो रामदेव बाबा ने माँ को पहला परचा दिया। यानी पहला परिचय 'अहम् ब्रह्मामि। तत्त्वमसि श्वेतकेतु।' यह परिचय है, पहचान है। दूसरा परिचय दिलीप, चिमन आपके कुल का परचा! दरजी को परचा। बाप! दरजी को बुलाया, मेरे रामदेव के लिए घोड़ा बना दे। एक किंमती वस्त्र दिया, इसमें से घोड़ा बना दे। यह कोई सामान्य नहीं है। रामदेवजी की माँ है। खिलौने का घोड़ा। आज भी समाधि के पास खिलौने का घोड़ा लोग रखते हैं। कपड़े के घोड़े चढ़ाते हैं। ठीक है? माँ ने दिया घोड़ा। वो घोड़ा रामदेवजी सहित उड़ा! माँ ने सोचा, यह दरजी ने कुछ जादूटोना किया है! घोड़े में कुछ मंत्र-तंत्र की विद्या डाली है। बुलाओ दरजी को। वो बेचारा माँ के पैर पकड़ के रामदेवजी की स्तुति करता है, हे बाबा, मेरा कोई कसूर नहीं है। आपने इस घोड़े को कैसे चेतन बना दिया ये पूरा परिवार, समाज मुझे दोषित कह रहे हैं! प्रगट हो, प्रगट हो, प्रगट हो। और फिर यह जो घोड़ा ले के अदृश्य हुए थे बाबा फिर प्रगट हुए। दरजी पैर पकड़कर पूछता है रामदेवजी को, मैंने माँ ने दिये हुए वस्त्र से घोड़ा बनाया। अच्छा हुआ आप मेरी अरजी सुनकर प्रगट हुए वर्ना यह सब मुझे मार देते! लेकिन दरजी ने पूछा, मैंने तो घोड़ा बना दिया इनमें मेरा क्या कसूर है? थोड़े समय के लिए मेरे पर आपत्ति आ गई। बोले, थोड़ा दोष है। माँ ने जो कपड़ा दिया था, तुने उपर-उपर रखा! ऐसे फ़रेब, धतिंग को मेरा रामदेवपीर टिकने नहीं देते! यह दूसरा परचा। उस सारथिया को ज़िंदा किया वो तीसरा परचा। खबर आई, वो मर गया। देखो, फिर कृष्ण असर आ रही है। मेरा सुदामा कहां है? मेरा मधुमंगल कहां है? जैसे कृष्ण ने कहा, वैसे रामदेव पूछते हैं, सारथिया कहां है? उसकी माँ को पूछो। माँ बहुत रोती है, मेरा बेटा मर गया! फिर कहते हैं, रामदेव पुकारते हैं, सो क्यों गया? मुझे खेलना है। खड़ा हो जा। और वो जीवित हो जाता है!

रामदेवबाबा ने अंधे को आंखें दी; मरे को जीवित किया; पंगु को पैर दिये; गूंगे को जबान दी। यह सब परचे में आता है। यह वो कर ही सकता है, सवाल ही नहीं। मैं फिर एक बार कहूं, तुम्हारे पैर न हो तो जयपुर की संस्था पैर दे सकती है; रामदेवपीर बाबा पैर न दे? सामान्य लोग कर सकते हैं यह करिश्मा। एक मशीन करता है। एक विज्ञान कर सकता है। टेक्नोलोजी कर सकती है। बाबा तो पीर है। मुझे लगता है, आज छ: सौ साल बाद यह अर्थ करना चाहिए कि जो मरे-मरे थे सब को रामदेव पीर ने होंसला भर दिया। जीओ, जीओ, प्रमादी मत रहो। जीवित करना, जैसे 'मानस' की चौपाई है-

मृतक जिआवनि गिरा सुहाई।

मरे हुए आदमी को सद्‌गुरु का वचन छू जाए, तो आदमी जीवित हो जाए। सारथिया हशे ने ए जीवता थशे। जे सेवक हशे, शरणागत हशे एने मरे-मरे जीवनमां नहीं रहेवा दे।

उसको खड़े कर देंगे। चौबीस परचे हैं। यह तो कम है। महापुरुष के लिए कम है लेकिन मैंने इनमें से दस-ग्यारह निकाले हैं।

तो रामदेवपीर बाबा को आस्था जगत अवतार कहते हैं। और है। द्वारिकाधीश पधारे। रामदेव बाबा को राजस्थान और गुजरात लोकदेवता कहते हैं। जिसमें भगवत् समाज और इतिहासविद दोनों सहमत है। रामदेवजी लोकदेवता है। सामान्य जन का यह देवता। बाबा को माननेवाले उनके घर में आप जाओ तो बाबा की छबि होगी। हर गांव में रामदेवजी का मंदिर होगा। रामरसोडा चलता होगा। यह लोकदेवता है। बड़ा प्यारा दर्शन है। जैसे भगवान शंकर को लोकनायक कहा है शास्त्रों ने। हर गांव में शंकर होता है। प्रिय शिव होता है। शिवभक्त के रूप में रावण कभी मरेगा नहीं। एक स्तोत्रकार और एक मनीषी के रूप में रावण कभी मरेगा नहीं। उसके जितने सिर काटोगे उतने नये स्तोत्र गायेगा यह। एक मुंह काट दो, दूसरा स्तोत्र निकालेगा। कितना काटोगे?

तीसरा अवलोकन विद्वानों का है वो है, इस्लामी विचार धारा में रामदेवपीर है। पांच पीर; मक्का के जो पांचों पीरों को अवलोकन में चमत्कार बताया रामदेव बाबा ने और यह पांचों पीरों ने बताया कि तू पीरों का पीर है। तू पांचों पीरों का पीर है। यह पीरों का पीर है। रामदेवजी बाबा के अवलोकन में बिलग-बिलग दृष्टिकोण से जो उसका स्वरूप प्रस्तुत किया जा रहा है, बड़ा अद्‌भुत है! नरसिंह मेहता को भी पांच सौ-छ: सौ साल हुए होंगे। रामदेवजी बाबा भी पांच सौ- छ: सौ साल। भाद्र शुक्ल दूज उसका जन्म है। और भाद्र शुक्ल एकादसी में समाधि ली। इसलिए आज भी रामदेवरा में भाद्र सुद दूज से एकादसी तक मेला लगता है। लाखों लोग आते हैं। इनमें भी अछूतों का उद्धार इस महापुरुष ने कैसा किया! अद्‌भुत किया! नरसिंह मेहता ने भी इतने सालों पहले दलितों के पास जा के भजन गाए। और डालीबाई कौन है? सगुणाबहन तो बहन है। और डालीबाई को बहन बनाया, एक दलित को। इतने साल पहले यह महापुरुष ने जो काम किया है! अछूतों का उद्धार किया। कथा तो ऐसी भी आती है, रामदेवजी बाबा ने समाधि तैयार करवाई वहां उसी समय डालीबाई आई और बोली, यह क्या बनाया है? कहे, रामदेवजी अब जानेवाले हैं। कहे, नहीं, यह आपने जो बनाया है वो रामदेवजी के योग्य नहीं, मेरे योग्य है, पहले मैं जाउंगी। उसमें जीवित समाधि ली। अछूतों का उद्धार रामदेवजी बाबा ने इस तरह किया। जो अछूतों का उद्धार हुआ वो श्रेष्ठों का अपमान नहीं करने लगे वर्ना क्या होता है कि एक अधम का उद्धार होता है फिर वो श्रेष्ठों का अपमान करने लगता है। एक प्रतिशोध जन्मता है। इस महापुरुष ने इतने साल पहले एक चित्तशुद्धि की मेरी दृष्टि से।

तो कुछ संवाद के सूर में भगवान रामदेव की सात्त्विक-तात्त्विक चर्चाएं करते हैं। कुछ जिज्ञासाएं। 'बापू, कल रात 'रामायण' में देखा। रामदेवपीर बाबा के समय में भैरवा आसुरीवृत्तिवाला था। वर्तमान समय में संसार 'रामायण' में आसुरी तत्त्व कौन-कौन है? और उसको खत्म करने के लिए कैसे राम की जरूरत है?' एक श्रोता ने पूछा है। हमारे जीवन की 'रामायण' में आसुरीतत्त्व है जो तुलसीदासजी ने 'विनयपत्रिका' में अंकित किया है-

मोह दसमौलि तद्‌भ्रात अहंकार,
पाकारिजित काम विश्रामहारी।।

मेरी और आपकी एक सांसारिक 'रामायण' है। उसमें आसुरीतत्त्व तुलसीदासजी बताते हैं, सब से बड़ा रावण है वो है मोह। रावण खराब नहीं है। रावण को जितना-जितना मिलता गया उसकी अपेक्षाएं बढ़ती गई। वैसे मूल में मोह खराब नहीं है लेकिन मोह की मात्रा बढ़ती जाए तब वो रावण बन जाता है। मोह यानी आकर्षण। किसी के प्रति आकर्षण होने लगे, आप मोहित हो जाते हैं। आसक्त हो जाते हैं। महाप्रभुजी की बोली में कृष्ण यानी आकर्षण करना। भगवान कृष्ण बहुत करते हैं आख़िर में बोलते हैं, 'अर्जुन, तेरा आकर्षण मुझ में है।' कृष्ण आकर्षण करता है। कर्षति, जो खिंचता है हम सब को लेकिन आख़िर में वह बढ़ता हुआ मोह नष्ट होना चाहिए। और वहां कृष्ण अर्जुन के मोह को नष्ट करने के लिए बाण का उपयोग नहीं करते, वाणी का उपयोग करते हैं। अर्जुन कहता है, 'नष्टोमोहः स्मृतिर्लब्धा।' 'विनयपत्रिका' में मेरे बाबाजी फ़रमाते हैं कि कुंभकर्ण अहंकार है। हमारे जीवन का बहुत बड़ा असुर है हमारे जीवन का अहंकार। पद का अहंकार, प्रतिष्ठा का अहंकार, रूप का अहंकार, विद्या का अहंकार, ऐश्वर्य का अहंकार, कीर्ति का अहंकार, ये हमारे जीवन का कुंभकर्ण है। कुंभकर्ण कभी न कभी मरेगा तो रामकृपा से ही लेकिन कम से कम वो सोया रहे तो भी अच्छा है। जैसे कुंभकर्ण सोया रहता है। जागा तो खतरा! मेघनाद काम है। सम्यक् काम बुरा नहीं है। भगवान राम तो काम है।

रामु काम सत कोटि सुभग तन।
दुर्गा कोटि अमित अरि मर्दन।।

काम बुरी चीज तो नहीं है। मैंने कई बार चर्चा की है, काम

को हमने देवता कहा है; क्रोध को हमने कभी देव नहीं कहा। लोभ को हमने देव नहीं कहा। लेकिन शास्त्रकारों ने काम को देव कहा है। वो सम्यक् हो। सब्जी में जितना नमक जरूरी है उतना ही चाहिए। जीवन में जितनी कामना जरूरी है उसका स्वागत है। काम तीन प्रकार से धीरे-धीरे बढ़ता है। जीवन का सत्य क्या है? काम का बढ़ना एक कारण है अनुकूलता। जीवन में सब प्रकार की अनुकूलता आने लगती है, काम बढ़ता है। प्रतिकूल स्थिति में आपको भूख लगे तो आपकी भूख चली जाएगी। आप खा नहीं सकोगे। आप चैन से सोते हैं लेकिन प्रतिकूल स्थिति आई तो आपकी नींद उड़ गई। अनुकूलता कामप्रेरक वस्तु है, जो बढ़ाता है। दूसरी कामप्रेरक वस्तु है आकर्षण। किसी रूप का आकर्षण, किसी की बोली का, कोई सौंदर्य। ज्यादा से ज्यादा निकट जाने में साधक को बाध्य करता है आकर्षण। जनक जैसे कहते हैं यद्यपि वहां तो राम है फिर भी बात तो यही आई। मेरा मन बैरागी था लेकिन आज इस बालक को देखकर इतना आकर्षण क्यों होता है?

सहज बिरागरूप मनु मोरा।
थकित होत जिमि चंद चकोरा।।

आपने कहा, इसमें कैसे राम की जरूरत है जो इससे बचाये। मेरा सीधा-सादा जवाब है; एक ही उपाय है, भजन। बस, भजन। ज्यादा व्याख्या करने को जी नहीं करता। साधक का भजन बढ़े, अहंकार की मात्रा घट जाएगी। भजन बढ़े तो आकर्षण रहेगा यह सिर्फ़ अरबों-खरबों सुंदर कृष्ण मोह; काम क्षीण होते जाएंगे। भजन चाहिए। कलियुग भजन का युग है बाप! श्रेष्ठ भजन है हरिनाम बस! लेकिन बात आई है तो मैं कहना चाहूंगा कि भजन की तीन बाधाएं है। भजन तो हम सब चाहते हैं। हमारे निम्बार्की में तो कहा गया है, हरिनाम आहार। साधु क्या खाता है? हरिनाम। नाम का भोजन करता है। हमारी गंगासती कहती है, जिसको भजन का आहार है।

साधक भाई-बहन, भजन के तीन विघ्न है। यह शास्त्रोक्त विघ्न नहीं है, अनुभवात्मक विघ्न है। भजन का एक विघ्न है पाप। आप किसी की हत्या करे और भजन करे वो पाप? नहीं, नहीं, नहीं, यह छोटा पाप है। हत्या मत करना। आप भजन करे और किसी के घर में चोरी करे यह छोटा पाप है। आप भजन करे और किसी के प्रति नजर बिगड़ जाए, छोटा पाप है। पाप है आप भजन करे और किसी की निंदा करे। पाप है भजन करनेवाला दूसरों से इर्ष्या करता है। पाप है भजन करनेवाला तेजोद्वेष में भर जाता है। साहब! एक रामनाम आदमी को परवाज़ दे देता है लेकिन क्यों हम उड़ान नहीं भर पाते? क्योंकि हम निंदा करे बिना नहीं रह पाते! किसी के प्रति ईर्ष्या न हो, द्वेष न हो, निंदा न करो तो साधक को किसी भी प्रकार की साधना करनी जरूरी नहीं है। खेलो अपनी मस्ती में। लेकिन मैंने इतनी कथा गुरुकृपा से की; लेकिन मेरी ईर्ष्या न जाए, निंदा न जाए, द्वेष न जाए तो भजनभंग है। यह मानसिक पाप है। छोड़े जा सकते हैं। आपका जटिल व्यसन है तो छोड़ना मुश्किल हो जाएगा। लेकिन भगवद्कथा सुनते-सुनते ईर्ष्या, निंदा छोड़ी जा सकती है। थोड़ा सिरीयस हो। हम छोड़ते हैं जब पीड़ा हो। अंगार पर पग पड़ा, तुरंत पीड़ा हुई तो हटा लिया। पीड़ा होने से आदमी हटने लगता है। अब क्या है, पेईनकिलर गोलियां दी गई कि पीड़ा ही न हो! हमको वाह-वाह की दवा दी गई! हमें पीड़ा महसूस ही नहीं होती! ग्लानि हो तो गौतम बुद्ध बन सकता है। रामदेवपीर क्यों पीर है? जिसको पीड़ा महसूस होती है। संवेदना से भरे हैं।

दूसरा विघ्न है पुण्य। पुण्य खराब नहीं है, पुण्य का अहंकार खराब है। मैं कोई रेकर्ड करने जाउं कि मैंने इतनी कथा की तो मेरे पुण्य का जो अहंकार है वो भजन का विघ्न है। आपने किसी को इतना दान दिया फिर आपको अहंकार आने लगे तो यह पुण्य का विघ्न है। पुण्य भजन का विघ्न बन जाता है। तीसरा विघ्न है, इसमें साधक का दोष कम है, साधु इसमें मजबूर है; और वह विघ्न है प्रारब्ध। कभी-कभी आदमी को ऐसे कुल में जन्म लेना पड़ता है वहां बेचारा भजन ठीक से नहीं कर पाता। कभी-कभी आपका संग ऐसा हो जाता है प्रारब्धवश। और यह प्रारब्ध भजन में विघ्न करता है तब उस समय भजन को छोड़ना नहीं क्योंकि भजन ही प्रारब्ध को बदलेगा। बदलेगा क्या, प्रारब्ध को खत्म कर देगा। और मुझे कोई आपत्ति नहीं आप ध्यान को भजन समझो और करो। यस, यु केन। आप योगा करो उसको भजन समझते हो, यस, करो। आप किसी की सेवा करो भजन। आप कुछ न करो लेकिन किसी को डिस्टर्ब न करो, भजन। पीपा भगत कहते हैं कि पाप न करो तो बड़ा पुन्य किया है आपने। किसीका छीन न लो तो बहुत बड़ा पुन्य किया है। प्रारब्ध को मिटाता है भजन, हरिनाम। मैं बहुत विश्वास से कहता हूं। देर हो सकती है। आयुर्वेद में समय लगता है, विदेशी पद्धति होती है तो इन्स्टन्ट होता है। तो ऐसे पाप, पुण्य और प्रारब्ध भजन के विघ्न है।

कलियुग में सब का सारभूत है भजन; है हरिनाम श्रेष्ठ भजन। आपके मन जिसका भी नाम हो, राम, कृष्ण, शिव, अल्लाह किसीका भी हो, मुबारक। जो भी नाम ले लो। सच्चे दिल से पत्नी का नाम लो तो भी फ़ायदा है। ये मैं आपको हंसाने के लिए नहीं कहता! सच्चे दिल से नाम लेना पड़े।

एकइ धर्म एक ब्रत नेमा।
कायँ बचन मन पति पद प्रेमा।।

तुलसी का शास्त्रीय वचन है, एक स्त्री पतिपरायण होकर रहे तो ये भी भजन हो सकता है। लेकिन कठिन है, मुश्किल है। बाप! शुद्ध दिल से कोई भी नाम पुकारा जाए यह भजन है, जो भजन प्रारब्ध को मिटा देता है। मैंने कई बार कहा, शास्त्र के आधार से 'गीता' में भगवान अर्जुन के सारथि हुए हैं लेकिन 'रामायण' में विभीषण के सामने जो धर्म की चर्चा हुई वहां ईश्वर सारथि नहीं है। 'इस भजन सारथि सुजाना।' परमात्मा का भजन ही सारथि बन जाता है।

अब थोड़ा समय बचा है उसमें कथा का क्रम ले लूं। जैसे रामकथा में राम का जन्म हुआ, कैकेयी ने भी पुत्र को जन्म दिया, सुमित्राजी ने दो पुत्रों को जन्म दिया। चार-चार पुत्रों की प्राप्ति से अयोध्या ब्रह्मानंद और परमानंद में डूबी। इस उत्सव में एक महिना कैसे बीत गया किसी को पता न लगा! चारों भाई बड़े होने लगे। नामकरण संस्कार का समय आया। अंत:करण की प्रवृत्ति के मुताबिक चारों भाईयों का नामकरण वशिष्ठजी ने किया। कौशल्या के पुत्र का नाम राम रखा। राम के समान ही वर्ण, स्वभाव, शील कैकेयी के पुत्र का नाम भरत रखा। सुमित्रा के दो पुत्र; उनमें से जिनका सिमरन करने से शत्रुता मिट जाएगी उसका नाम शत्रुघ्न रखा और समस्त जगत का आधार, लक्षण का भंडार, रामप्रिय और परम उदार ऐसे यह बालक का नाम लक्ष्मण रखा। जो आराम देगा वो राम। जो भरेगा वो भरत। जिसके सुमिरन से दिल से दुश्मनी मिट जाएगी वो शत्रुघ्न। और जो परम उदार है, सभी का आधार है वो लक्ष्मण है। अब तो भगवान राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न बड़े होने लगे हैं। यज्ञोपवित संस्कार हुआ। चारों भाई वशिष्ठ के आश्रम में विद्या पाने के लिए गये। अल्पकाल में विद्या प्राप्त की। और जो विद्या प्राप्त की है वो अपने जीवन में उतारकर बता दी।

एक दिन भगवान विश्वामित्र पधारे हैं। भगवान राम की मांग की। यद्यपि दशरथजी ने शुरुआत में तो ना कही कि मैं राम को नहीं दूंगा लेकिन वशिष्ठ ने कहा, राजन्, अज्ञान छोड़ो। राम को दे दो। वशिष्ठजी ने समझाया तब दोनों राजकुमार विश्वामित्र को सोंप दिये। विश्वामित्र को महानिधि प्राप्त हुई। विश्वामित्र के संग राम और लखन जा रहे हैं। रास्ते में ताडका आई। भगवान राम ने अवतार का श्रीगणेश करके एक ही बाण में ताडका का प्राण हर लिया। चेहरे की दीनता देखकर निजपद दे दिया। भगवान राम किसी को मारते नहीं, तारते हैं। दूसरे दिन सुबाहु को जला कर खतम किया। मारीच को बिना फने का बाण मारकर शत जोजन फेंक दिया।

कुछ दिन राघव रहे। अब विश्वामित्र ने कहा, राघव, आपकी यात्रा यज्ञयात्रा है। जैसे आपने मेरा यज्ञ पूरा किया। महाराज जनकजी धनुषयज्ञ कर रहे हैं मिथिला में। वहीं चलें। धनुषयज्ञ की बात सुनते ही भगवान राम-लक्ष्मण मुनिश्रेष्ठ के साथ यात्रा आगे करते हैं। रास्ते में गौतमऋषि का आश्रम आया। अहल्या बिलकुल अचेतन हो पथ्थर की तरह पड़ी है। भगवान राम ने जिज्ञासा की कि यह कौन है? किसका आश्रम है? विश्वामित्र ने पूरी कथा सुना दी। भगवान ने अहल्या की प्रतिष्ठा को पुन: स्थापित किया। प्रभु के चरणरज की प्राप्ति होते ही अहल्या में चेतन आया। राम का कार्य है जो जीवन हार गये हैं उनको पुन: जागृत करे। भगवान राम को पतित पावन का बिरुद प्राप्त हुआ। भगवान वहीं से आगे गये। गंगा में स्नान किया। तीर्थ के देवताओं को दान दिया। भगवान जनकपुर पहुंचे। आम्रकुंज में निवास। जनकजी स्वागत करने आए। सब को लेकर 'सुंदर सदन' में प्रभु विश्वामित्र के साथ मिथिला में ठहरे हैं। दोपहर का समय हुआ था। सब ने भोजन किया और सब ने विश्राम किया। आपसे मेरा निवेदन है, आरती हो जाने के बाद रामरसोडे में भोजन करना। प्रसाद खास लेना। भगवान रामदेव का प्रसाद। स्वच्छता बनी रहे उसका ख्याल रखना।

भजन का एक विघ्न है पाप। आप किसी की हत्या करे और भजन करे वो पाप? नहीं, नहीं, नहीं, यह छोटा पाप है। हत्या मत करना। पाप है आप भजन करे और किसी की निंदा करे। पाप है भजन करनेवाला दूसरों से इर्ष्या करता है। पाप है भजन करनेवाला तेजोद्वेष में भर जाता है। दूसरा विघ्न है पुण्य। पुण्य खराब नहीं है, पुण्य का अहंकार खराब है। आपने किसी को इतना दान दिया फिर आपको अहंकार आने लगे तो यह पुण्य का विघ्न है। तीसरा विघ्न है प्रारब्ध। कभी-कभी आदमी को ऐसे कुल में जन्म लेना पड़ता है वहां बेचारा भजन ठीक से नहीं कर पाता।

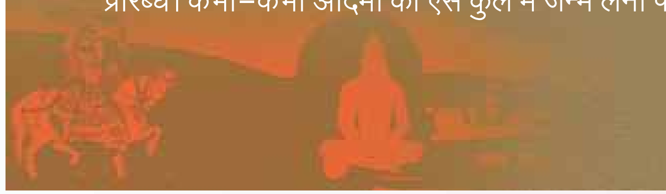

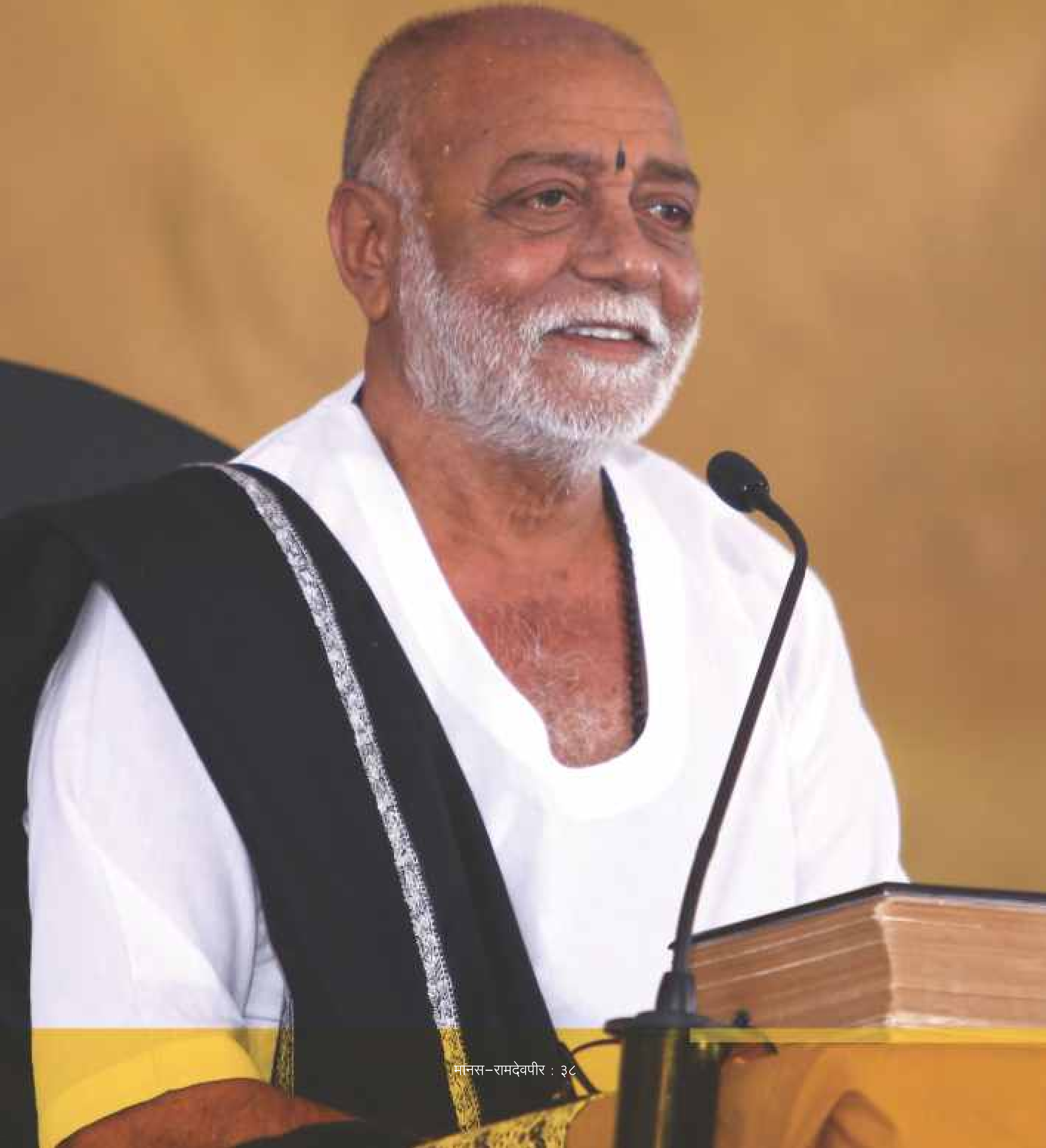

कथा-दर्शन

- 'रामचरित मानस' तो हमारा हृदयकोश है।
- विश्व का आखिरी उपाय है ये 'रामचरित मानस।'
- जो परम है, श्रेष्ठ है उसका प्रताप चारों ओर होता है।
- पीर का प्रचार नहीं होता। पीराई तो तुम्हारे हृदय पर कब्जा करती है।
- अवतार स्थलांतर भी कर लेता है और रूपांतर भी कर लेता है।
- जो घंटे के बाद उतर जाए वो शाश्वत शराब नहीं है। शाश्वत शराब है हरिनाम।
- ज्ञान में अवस्था होती है। भजन में भूमिका होती है।
- भजन कर के जो साधुता प्राप्त करे वो तीनों भुवन को पवित्र कर देता है।
- भक्ति करने में तप की जरूरत नहीं है।
- भक्ति पास में हो तो आसक्ति दूर भागती है।
- किसी के प्रति ईर्ष्या न हो, द्वेष न हो, निंदा न करो तो किसी भी प्रकार की साधना करनी जरूरी नहीं है।
- मार्ग पे चले वो मार्गी नहीं, वो जहां चले वहां मार्ग बन जाए उसका नाम मार्गी।
- बुद्धपुरुष का मनोगत प्रेम उसके आश्रितों का सुमिरन करवाता है।
- संत का हृदय निर्मल पानी जैसा होता है।
- विश्वास व्यक्तिगत होता है।
- धर्म के नाम पर समाज को छलना बहुत आसान है।
- साधु को किसी के अभिप्राय पे साधना नहीं करनी चाहिए।
- ईश्वर के अंश के रूप में हम सब भी ईश्वर के अंशावतार है।
- इस दुनिया में सब प्रकार से सब लोग कभी सुखी नहीं होते।
- जीवन में सिर्फ़ दु:ख ही नहीं। यदि दु:ख है, तो सुख भी होना चाहिए।
- जिसके जीवन में से आधि, व्याधि और उपाधि निकल जाए और फिर जो शेष रहता है वह समाधि है।

जो अपात्र को पात्रता दे वह पीर

राजस्थान की मुख्यमंत्री आदरणीया सिंधियाबहन, जिसने मेरे से दूरभाष पर भी बात की कि बापू, मेरी बहुत इच्छा है कि आप राजस्थान में आये और मैं न आउं ये जरा मुझे अविवेक-सा लगता है लेकिन मेरी नादुरस्त तबियत के कारण व्यासपीठ के दर्शन के लिए नहीं आ पा रही हूं। यदि थोड़ा भी ठीक हुआ तो अचानक आ सकती हूं। आप न आ पाये लेकिन आपके मंत्रीमंडल से किसी सदस्य को आप व्यासपीठ को आदर देने के लिए राजपीठ से आदर देने के लिए भेजते रहे। ये राजस्थानी शील और संस्कार का परिचय है। बाकी राजपीठ और राजनीति से मेरा कोई लेना-देना नहीं है। मोरारिबापू अकेला आता तो कोई भाव नहीं पूछता लेकिन मेरा वजूद रामकथा के कारण है। आपका शील और संस्कार है कि आप व्यासपीठ का आदर करते हैं। तो हम कामना करते हैं कि हमारी आदरणीया सिंधियाबहन की तबियत जल्दी ठीक हो और आप स्वस्थ रहे और पूरे राजस्थान को स्वस्थ और समृद्ध रखे ऐसी हनुमानजी के चरणों में प्रार्थना करता हुआ मैं मेरा संदेश आपके भेजे हुए एक आदरणीय मंत्री महोदय के श्रू आपको प्रेषित करता हूं। जय सीयाराम। और मुझे मौका मिल गया तो मैं ये भी कहना चाहूं कि पूरे राजस्थान में नव वन निर्माण किये जाय। नाईन फोरेस्ट। नव वन मानी नवीन वन और नव मानी नाईन वन भी। एक वन रामदेव-वन। धरती को हरी-भरी कर दी जाय। दुबई, मस्कत, शारजहां, कहां थी कथा? अबू धाबी; बिलकुल नमकीन प्रदेश है। यद्यपि उनके पास संपदा भी है। उसकी वजह से तो वो सब हरा-भरा कर रहे हैं। तो हम सब मिलकर के आओ-

हमारा रंगरंगीलो राजस्थान...

एक वन रामदेव-वन। होगा तो मुझे खबर नहीं। होगा तो वंदन। लेकिन मेरे जितने श्रोता भाई-बहन आये हैं। आप से हो सके तो राजस्थान से आये हैं वो तो करे ही। गुजरात से आये हैं। विदेश से भी आये हैं। संभव हो तो अभी तीन दिन बाकी है और कुछ ऐसी व्यवस्था भी हो जाय कि राजस्थान के इस प्रदेश में रामदेव-वन के लिए एक-एक पौधा लगाकर जाय। और उसका संरक्षण संस्थाएं करे, सरकार करे। मैं खुद जहां ठहरा हूं वहां पांच पेड बो कर जाउंगा। अथवा तो मदनभैया है उसके घर में अथवा तो मैं जहां ठहरा हूं वहां व्यवस्था की जाय। वहां पांच वृक्ष बो कर जाउंगा पूर्णाहुति पहले। और जिम्मेवारी भी सोंपकर जाउंगा कि उसकी सिंचाई करे। बोये जाओ। हमारे सांई मकरंद का गुजराती में एक काव्य है कि-

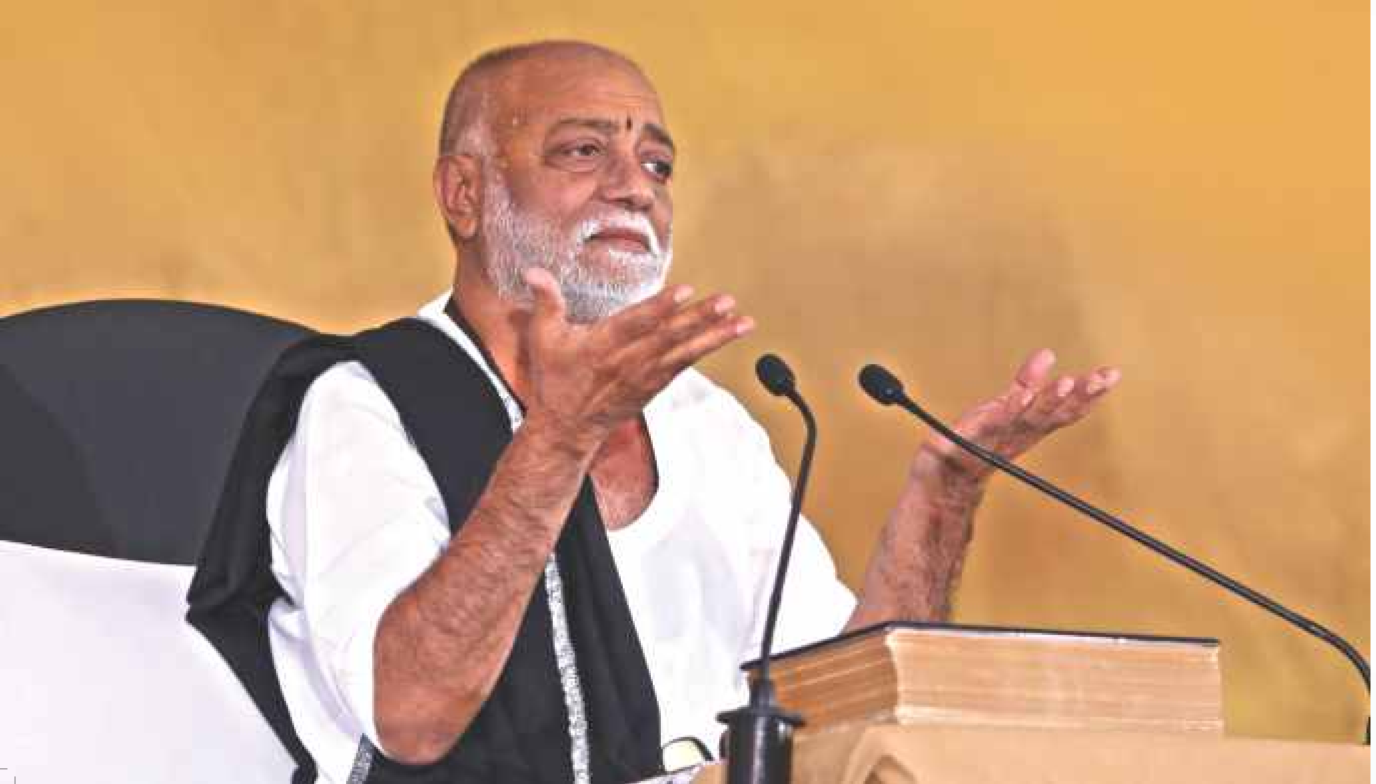

वेर्यां में बीज अहीं छुट्टे हाथे ते
हवे वादळ जाणे ने वसुंधरा।

दोनों वसुंधरा। वसुंधरा मानी पृथ्वी और वसुंधरा हमारी आदरणीया मुख्यमंत्री। सांई मकरंद के शब्द है, हम तो बीज बोते हैं। किसान क्या करता है? बीज बो देता है। बाद में बादल जाने, वसुंधरा जाने। तो आओ, हम सब एक-एक पौधा बोये। और यदि मानो कि पानी की मुश्किल है; सब मुश्किल है। लेकिन मुश्किल होने के कारण कदम न उठाया जाय ये तो मृत्यु का परिचय है। कदम तो उठाने चाहिए यारो! आपसे हो सके तो करना। यहां न कर सको तो कहीं भी। देश हरियाला हो,

मेरे देश की धरती सोना उगले उगले हीरे मोती...

एक वन रामदेव-वन। दूसरा श्रीनाथ-वन। भगवान श्रीनाथजी के नाथद्वारा के नाम पर एक वन हो। ये वनविहारी है। ये हमारा गिरिराजधारी है। तीसरा वन हो महादेव-वन, एकलिंगजी। एकलिंग महादेव जो तीर्थस्थान है राजस्थान की भूमि पर। उसका एकलिंगजी नाम रखे या तो जो रखे; ये तो विचार है। करने की आपकी मज़बूरी नहीं। ये तो विचार पेश करता हूं। आज न हो तो कल हो। न हो तो जब भी हो। करो तो करो। न करो तो भी कोई चिंता नहीं। चौथा, मीरां-वन। पांचवां, महाराणा प्रताप-वन। छठ्ठा, राजस्थान में भामाशा-वन। सातवां, राजस्थान के सभी कवि मनीषी के नाम, साहित्यकारों के नाम सातवां वन हो। कैसे समर्थ कविगण यहां हुए हैं! आठवां वन हो यहां की शील, संस्कार, सभ्यता और मर्यादा की रक्षा के लिए जिन्होंने सतीत्व ग्रहण किया हो उनका सती-वन; माताओं का वन। नववां वन, यहां नीम के पेड़ बहुत होते हैं; हमारी आचार्य परंपरा की गादी सलेमाबाद में हो निम्बार्क-वन। वहां नीम के पेड़ हो। नव हो गये? मुझे ये विचार आया है। माननीय मंत्री भी आये हैं। मुझे रास्ते में विचार आ रहा था। मैं मेरा विचार पेश करूं। जो हो सो करना। कोई बाध्यता नहीं कि बापू ने कहा है तो करना। मैं समझता हूं कि कोई न कोई मुश्किलें रहती है। सुविधा-असुविधा भी देखी जाती है। लेकिन जब भी हो, जितनी मात्रा में हो। आओ, हम राजस्थान को फिर हरा-भरा बना दे। और फिर हम गाये तो फिर उसमें जोश आ जाएगा-

धरती धोरारी धोरारी...
आ तो सुरगा को शरमाये इपर देव रमण में आये,
इरो जश नारी-नर गाये, धरती धोरारी...

गोलोक और वैकुंठ छोड़कर भगवान कृष्ण व्रज में आये। और भगवान वेदव्यास की कविता को शुकदेवजी ने गाया गोपियों के मुख से कि लिखा है 'भागवत' में 'जयति तेऽधिकं जन्मना व्रज:।' ये व्रज कितना भाग्यशाली कि 'श्रयत इन्दिरा।' जो वैकुंठवासी तू था वो तू व्रज में आया है। धन्य है व्रज। व्रजवासी गौरव जरूर ले सकते हैं लेकिन वो ही व्रजवासी कृष्ण भी व्रज छोड़कर सौराष्ट्र आया। द्वारिका आया लेकिन इससे भी ज्यादा गौरव आप ले सकते हैं कि सौराष्ट्र का द्वारिकाधीश फिर रामदेवरा में आया; पोखरण में आया; रणुजा में आया। इसलिए ये धरती धोरारी है। आप गौरव ले सकते हैं। और मैं भी मेरे भारत के राजस्थान का एक साधु के नाते गौरव लूं। दुनिया में कैसे भी मंदिर बनाये जाय गगनचुंबी लेकिन मूर्तियां तो राजस्थान ने दी। कितनी मूर्तियां! हां, होंगे कहीं संगेमरमरी खदानें लेकिन बहुधा नब्बे प्रतिशत मूर्तियां होगी तो ये मूर्ति की देन राजस्थान की खदानें है। संगेमरमरी मूर्तियां राजस्थान की देन है।

आओ, रामकथा की स्मृति में हम नव वन निर्माण करें। रामदेव-वन; श्रीनाथ-वन; महादेव अथवा एकलिंगजी-वन; मीरां-वन; प्रताप-वन;, भामाशा-वन; निम्बार्क-वन; कवि-वन और सतियों के नाम पर। हो गया नव? ये व्यासपीठ की राष्ट्रीय योजना है। ये साधु का विचार है साहब! और राजनीति में साधु का मत लेना चाहिए, ऐसा 'रामचरित मानस' का आदेश है। जो राजनीति साधु का मत न ले वो राजनीति ज्यादा टीकाऊ नहीं होती। कभी-कभी तो बिकाऊ होती है! साधुमत की प्रतिष्ठा 'मानस' ने दी, जिस 'मानस' की रोटी मैं खा रहा हूं। वशिष्ठजी ने जनक जैसे सम्राट को कह दिया और भरत को जो अयोध्या राज्य का वारिस ओलरेडी बन चुका है। वचन के आधार पर जिसको अधिकार था। राज्य देने की उद्घोषणा हुई थी। मिथिलेश जनक है। जिसको गादी दी गई है वचन के कारण अयोध्या की भरत को वो है चित्रकूट की सभा में। और जिसको वन मिला है वो भगवान राम भी वहां मौजूद है। तब मेरे देश के एक साधु वशिष्ठजी ने कहा, हे रामजी, हे जनकजी, भरत का निवेदन सुनो, आदर के साथ सुनो, सन्मान के साथ सुनो और फिर विचार करो। वशिष्ठजी कहते हैं कि मैं ये नहीं कहता कि भरत जो कह रहा है वो कुबूल करो। नहीं, उस पर विचार हो। कोई साधु दबाव नहीं डालेगा। चिंतन करो। विचार तो कम से कम करे। और फिर चार संस्था का निर्णय लो। फिर डिकलेर

करो। इसमें पहला 'रामचरित मानस' में लिखा है। वशिष्ठजी ने कहा, 'करब साधुमत', पहले साधु का मत लो। जो सब से प्रामाणिक डिस्टन्स रखकर निर्वैर, निष्पक्ष और निर्भय होता है।

महामुनि विनोबाजी ने आचार्य कैसा होना चाहिए उसकी परिभाषा हमारे देश में अंकित कर दी। उसने कहा, आचार्य कैसा होना चाहिए? धर्मगुरु कैसा होना चाहिए? बुद्धपुरुष यद्यपि कहीं उंचा है फिर भी मैं यहां उसको नम्रता के साथ थोड़ा वो कहूं। ऐसा बुद्धपुरुष होना चाहिए जिसमें तीन क्वोलिटी हो। एक, आचार्य वो है जो निर्भय हो। किसी का भय नहीं, किसी के प्रभाव में न आये। किसी की प्रतिष्ठा का गुलाम न बने वो निर्भय है। दूसरा, निष्पक्ष हो। जिसको कोई संस्था, मंडल, पार्टियों से लेना-देना न हो। तीसरा, निर्वैर हो। जिसको दुनिया में कोई दुश्मन न दिखता हो। सब अपने दिखते हैं। ऐसे लोगों का मत साधुमत कहा जाता है। फिर लोकमत। 'रामचरित मानस' की उस समय की लोकशाही का दर्शन देखो! वहां भी शब्द लिखा है 'लोकमत।' हमारी जनता का मत। लोक क्या चाहते हैं, तुम्हारी जनता क्या चाहती है? 'करब साधुमत लोकमत नृपनय', राजनीतिज्ञों का मत, राजनीति के विशेषज्ञों का भी मत लिया जाय। विशेषज्ञों का मत लेना चाहिए।

करब साधुमत लोकमत नृपनय निगम निचोरि।

तुम जिस देश के हो उसके वेद क्या कहते हैं? उसके मूल ग्रंथों का क्या कहना है? भगवान वेद की आवाज़ क्या है? इनको निचोड़कर साररूप में देश-काल के अनुसार मत ले कर हे भरत, हे जनक, हे राम, आप निर्णय करो। साधु अपना विचार दे सकता है, जितना हो। मेरा इरादा तो इतना है कि राजस्थान ओर समृद्ध हो; ओर हरा-भरा हो। और हो सकता है जहां लीला घोड़ावाला हो रामदेव, लीला नेजावाला हो रामदेव। जिस भूमि में बारिश भले कम हुई हो लेकिन मीरां के आंसू थोड़े कम थे? मीरां ने जो आंसू की सिंचाई की है वो धन्य धरा है। तो व्यासपीठ को आदर देना वो राजपीठ के शील और संस्कार का मैं आदर देता हूं। मोरारिबापू के सम्मान की बात नहीं है। ये हमारी सभ्यता है। ये 'रामायणजी' का सम्मान है। ये व्यासपीठ का सम्मान है।

बहुत-से प्रश्न आज मेरे पास है। 'बापू, आपने कल कहा कि मक्का के पंचपीरों को रामदेवपीर बाबा ने परचा दिया। पंचपीरों ने रामदेवपीर बाबा को कहा कि आप पीरों के भी पीर है। उसके पीछे क्या बात है?' बाप! एक सर्वसारभूत बात है। रामदेव बाबा घोड़ा चरा रहे थे और उसके साथ जो कल मैंने उसके साथी की चर्चा की उसका मित्र, सखा, सारथि था वो सारथिया भी घोड़ा चरा रहा था। और कहीं फूल खिलता है न साहब तो इस फूल को आप अपने फार्महाउस में जहां जिस पौधे पर उगा है वहां सीमित कर सकते हैं लेकिन उसकी खुश्बू को आप सीमित नहीं कर सकते। उसकी खुश्बू तो बाहर चली जाएगी। जैसा फूल। रामदेवपीर बाबा यहां पधारे अवतार के रूप में लेकिन उसकी महक मक्का तक गई। खुश्बू मक्का तक गई। महापुरुष के चरणों में परचे-चमत्कार होते ही हैं लेकिन जिस श्रद्धा से राजस्थानी दस-बार भाई लोग कल गा रहे थे! मुझे लगा कि ये परचा नहीं तो क्या है? ये भोली जनता के अंत:करण की सात्त्विकी श्रद्धा को मेरा नमन है। इस सात्त्विक श्रद्धा के सामने परचा तो बहुत छोटी बात है। हर गांव में रामदेवपीर की भक्ति चलती है। इसलिए इतिहासविद लोगों ने उसे लोकदेवता कहा। रामदेवपीर मानी लोकदेवता। अवश्य मुझे अच्छा लग रहा है, कितने भाई-बहन झंडी ले कर आ रहे हैं पदयात्रा में! ये श्रद्धा हो। हमारे गुजरात के एक शायर उर्दू जुबां है लेकिन गुजराती में बहुत लिखा। उसका एक शे'र मैं बार-बार क्वोट करता हूं। उसने कहा-

श्रद्धानो हो विषय तो पुरावानी शी जरूर?
कुर्रानमां तो क्यांय पयंबरनी सही नथी।
-जलन मातरी

पुरावा मानी परचा, परिचय। सबूत देने की क्या जरूरत? थे वो फिर अपने मूल धरम में आने लगे थे उसकी ज्योत की प्रकाश में। धर्मांतरण नहीं करवाया था लेकिन गलत मेसेज गया वहां। अब आप जब बात दूसरे को कहो तो थोड़ा बदल जाता है; तीसरे को कहो तो थोड़ा बदल जाता है; चौथे को कहो तो बदल जाता है; आठवें, नववें को कहो फिर तुमने कहा वो रहता ही नहीं, बदल जाता है। कुछ तीसरा ही निकलता है! ऐसे ही दुनिया चलती है साहब!

तो मक्का से पांच पीरों को भेजा गया कि कौन है ये रामदेव? जांच की जाय। और ये ऊंट पर बैठकर आये। रामदेवरा में पहुंचे ही और घोड़े चराते थे पीरबाबा सारथिया के संग। भारतीय शालीनता को लिये हुए इस पीराइ ने आगंतुक का सम्मान किया, 'आइये, आइये,

राजस्थान में हिन्दुस्तान में आपका स्वागत है। आप कहां से पधारे?' बोले, 'हम मक्का से आ रहे हैं।' 'आदाब! हम आपकी क्या सेवा कर सकते हैं?' 'हम जानना चाहते हैं कि आप कहां के है?' बोले, 'हम रामदेवरा के हैं।' 'हमने सुना है कि रामदेव नामक कोई यहां रहता है वो अपने आपको पीर कहलाता है।' एक बात का ख्याल रखना, रामदेव बाबा ने कभी भी नहीं कहा कि मैं पीर हूं। पीर का प्रचार नहीं होता। पीराई तो तुम्हारे हृदय पर कब्जा करती है। इसका प्रचार नहीं होता। कभी-कभी किसी ग्रंथ में मैंने देखा कि रामदेव बाबा ने परचा दिखाया हरजी भाटी को तो कहा कि आप मेरा प्रचार करना। ये मेरी समझ में नहीं आता! सत्य का प्रचार नहीं करना पड़ता। प्रेम का प्रचार नहीं करना पड़ता। करुणा का प्रचार नहीं करना पड़ता। उसके नेटवर्क नहीं होते! 'तो रामदेवपीर कोई है? हम उसे मिलना चाहते हैं। आप जानते हैं?' बोले, 'मैं रामदेव को जानता हूं, रामदेवपीर को नहीं जानता।' क्या जवाब दिया! हां, ये आदमी का बड़प्पन है। 'पीर की मुझे खबर नहीं है। रामदेव को जानता हूं।' 'कौन है रामदेव?' 'आपसे बात कर रहा है वो।' 'ओह, आप! तो आप आपको पीर नहीं कहलाते?' 'दुनिया आपको पीर कहती है ये दुनिया को पूछो! मैं रामदेव हूं; अजमल का बेटा हूं; वीरमदेव का भ्रात हूं; सगुणा का भाई हूं; डाली का गुरु हूं; भाटी का सर्वस्व हूं; हरभुजी का रिश्तेदार हूं।' जो-जो उसके संबंध थे, बोलने लगे। 'अच्छा, तो हमें आप ले जाओ।' 'पधारिये।' लेकिन पांच पीरों के मन में एक आशंका हुई कि घोड़ा चरानेवाला कभी पीर हो सकता है? ये घोड़ा चराता है! और विवेक भी देखिये रामदेव भगवान का! उसने जवाब क्या दिया पांचों को?

रामदेवपीर बाबा पर जो ग्रंथ लिखे जा रहे हैं। संशोधन हो रहा है। उसके बारे में बहुत लिखा जाना चाहिए। बहुत कथायें होनी चाहिए। लेकिन हर लेखक और वक्ता का उसका मानवधर्म है। उसको उजागर कर दिया जाय। केवल उसे परचें और चमत्कारों में दबा न दिया जाय। और इससे बड़ा परचा कौन हो सकता है कि इतने छोटे-से रामदेवरा में मक्का के पांच को आना पड़ा! उससे बड़ा परचा कौन हो सकता है? वो सोचने लगे कि ये घोड़ा चरानेवाला! और मन की बात रामदेवजी जान गये! 'फ़कीरबाबा! आप हमारे अतिथि है और मैंने आपका इतना दिल से स्वागत किया है ना तो आपके दिल की बात मुझे सुनाई दे रही है।' 'हमारे दिल की बात? हम क्या सोच रहे हैं?' बोले, 'बुरा न लगे तो बताये?' बोले, 'क्या?' 'आप सोच रहे हैं ना कि घोड़ा चरानेवाला कभी पीर हो सकता है? मैं बहुत शालीनता से पूछना चाहता हूं कि मेरे श्रद्धेय महम्मद पयगंबरसाहब क्या चराते थे? किस युनिवर्सिटी में पढ़े थे? किस विश्वविद्यालय की डोक्टरी आपने प्राप्त की थी? मेरा बहुत परिचय नहीं है। आप श्रद्धा से परिचय दीजिए ना! अच्छा, अच्छा, अपने गुरु के बारे में, अपने संदेशवाहक के बारे में, अपने पयगंबर के बारे में आश्रित ज्यादा नहीं बोलता है। तो ये बात मैं छोड़ दूं। रख दूं। माफ़ कर दो। लेकिन जिसस क्राईस्ट क्या चराते थे?' यहां के छोटे रामदेव को जिसस क्या है वो भी पता है! महम्मद क्या है वो भी पता है। कृष्ण क्या है वो तो पता ही था क्योंकि वो तो आया था। 'आदरणीय अतिथिजी, बताइये, जिसस क्राईस्ट क्या चराते थे?' क्योंकि वो तो भेड चराते थे। ये कभी ऊंट, कभी भेड-बकरियां चराते थे।

ये बातचीत अतिथियों के साथ चलती थी इतने में सारथिया जो उनका मित्र था उसके घर के अगल-बगल में सांप ने उसको काटा। सांप ने काटा ही और सारथिया की मृत्यु हुई। रामदेवजी ने सोचा कि मैं जब इन अतिथियों से बात कर रहा था तब सारथिया थोड़ा डर गया था और भय ज्यादा हो गया उसमें सांप ने काटा इसीलिए वो हो गया! तो रामदेवजी ने सोचा कि सारथिया को मैं बुला लाउं। खुद गये बुलाने। वहां गये तो वहां सब रो रहे थे। सारथिया की मां दौड़ी, बाबा, मेरे बेटे की मौत हो गई! सांप ने काटा! पीछे-पीछे मेहमान भी गए देर हुई तो। सारथिया की बोडी पड़ी थी। रामदेवजी वस्त्र उठाते बोले कि दोस्त! ऐसे बिना बोले जाते हैं क्या? मैं कितनी खातिर कर पाउंगा? तेरी जरूरत है; उठ, उठ जा। और फिर कोई गहरी नींद से जागा हो ऐसे उठा। तब तो ये घटना घटी ही होगी। श्रद्धा जगत के लिए पुरावे की जरूरत नहीं। लेकिन विचारजगत भी एक होता है। और उसका निर्णय ये होना चाहिए छ: सौ साल के बाद कि रामदेवजी पीर थे कि जो मृतक जो जीवित करने की बात है। ये ही दर्शन, ये ही अवलोकन व्यासपीठ का रहेगा कि जीवन में जो भय से भाग चुके हैं, जो जीवन में करीब-करीब प्रमादी हो चुके हैं। कभी-कभी होश खो बैठे हैं ऐसे लोगों को पुन: सचेत करना मृतक को जीवित करना है।

सारथिया को जगा दिया। पांच पीरों ने सोचा कि मरे हुए को हम भी ज़िंदा करते हैं। उसमें कोई बात नहीं होगी। उसके बाद बाबा रामदेवजी ने पाचों अतिथियों को

कहा कि आप क्या लोगे? दूध पीओगे? जल-दूध आप कुछ स्वीकार करो। पांचों ने कहा कि हमारा कटोरा मक्का भूल गये हैं। कटोरा हमारे साथ नहीं। हम अपने ही पात्र में पीते हैं। 'अरे बाबा! कितने दिनों के बाद आप यहां पहुंचे। अरे! बड़ी लंबी यात्रा की तो कटोरा वहां भूल गये? हमारे कटोरे में नहीं पी सकते?' 'नहीं, हम पक्के पीर है। हम कटोरा भूल गये।' महापुरुषों को कभी-कभी दूसरों के अहंकार को नष्ट करने के लिए अपनी विशेष शक्ति का उपयोग करना पड़ता है। चमत्कार नहीं लेकिन जरूर होता है उसी समय अपने ऐश्वर्य का दिखाना। वो पांच जवाब देकर ऐसे ही बैठे थे और बाबा रामदेवपीर ने कुछ ऐसा किया कि पांच कटोरे हाज़िर कर दिये! ये आपका ही पात्र है? पांचों ने रामदेवपीर बाबा के चरण पकड़े! हमें माफ़ करना!

अमे अपराधी कांई न समज्या,
न ओळख्या भगवंतने।

'हम ओर तो क्या कह सकते हैं? लेकिन आज यहां कहते हैं, रास्ते में कहते जायेंगे और मक्का में जाकर कहेंगे कि रामदेवरा में रामदेव जो पीर है वो केवल पीर नहीं, वो पीरों का पीर है।' मुझे किसी ने पूछा कि डालीबाई क्या है? इसका तो अर्थ आप जानते हैं, पडोश में ही है तीन किलोमीटर दूर। हम एक झोंपडे में चाय पीने गये तो बगल में ही डालीबाई का वो स्थान है। कहते हैं कि वो डाली से प्राप्त हुई। पेड़ की डाली से मिली। ये तो है कि डाली से प्राप्त हुई इसीलिए डालीबाई दलित समाज से आयी है। मुझे तो बस इतना कहना है कि रामदेवपीररूपी एक वटवृक्ष की एक डाली डालीबाई है। तो ये डाली को खबर है, मेरा मूल रामदेव है। आजकल क्या है, आदमी अपने मूल को भूल जाते हैं और शाखाओं का अपना संप्रदाय बनाकर के बनावटी धर्म का नाम देकर के अपने-अपने आशियानें बनाकर के रहते हैं। धन्य है इस दलित कन्या को! मेरा नमन है इस बाई को जो रामदेव की डाली है। रामदेवरूपी एक विशाल वटवृक्ष उसकी ये शाखा है। मैंने कल भी स्मरण किया कि उसको पता लगा कि वो तो चरा रही है पशुओं को और उसको खबर मिली की रामदेव बाबा जा रहे हैं। आप कल्पना करो कि पीर जब गये, एक ओर प्रसन्नता की लहर छूटी थी; बाजे बज रहे थे। एक ओर माता-पिता, सगे-संबंधियों की आंखों में आंसूओं की धारा बह रही थी। एक बहुत बड़ी चेतना आज समाधि की ओर जा रही थी।

वाला रे संतने जय जय सीताराम...

पूरा राजस्थान आज कुछ अमंगल महसूस कर रहा था कि एक ज्योत जा रही है! उसके परिवारजन जार-जार रो रहे हैं। और मुझे खास कहना है वो ही इतिहास लिखित बात है। शायद आप मना करे तो मुझे पता नहीं लेकिन इतिहास और श्रद्धाजगत दोनों ने उसकी नोंध ली कि रामदेवपीर बाबा जब निर्वाण को चले और सब रो रहे थे तब रामदेवपीर ने कहा, जो चौबीस फ़रमान है वो तो है ही। एक बात मुझे बहुत पते की लगी। सब को रामदेव बाबा ने क्या कहा, ये जगत के चौक में कहना चाहिए कि बाप! शोक न करो। राममंत्र का जप करो। 'राम-राम', 'राम-राम', 'राम-राम' राम का सुमिरन करो। वहां रामदेवपीर पीरों के पीर बन जाते हैं। उसकी एक छलांग लग जाती है।

हमारे यहां कोई मर जाता है तो हम कहते हैं, राम-राम करो। ये मूल मंत्र की उद्‌घोषणा है। राममंत्र को बोलते रहिएगा। 'मैं बीमार होकर नहीं जा रहा हूं। मैं अकस्मात का भोग नहीं हूं। मेरे अवतार का कार्य पूरा होने को है। मुझे अस्पृश्यता निवारण करना था। मुझे दलितों का उद्धार करना था। मुझे समाज को निर्व्यसनी बनाना था। समाज के दंभ के परदे को चीर कर के वास्तविक मानवधर्म को स्थापित करना था। मेरा अवतारकार्य पूरा होने को है। रोना बंद करो।' जब एक सामान्य संसारी व्यक्ति जाती है तो भी लोग जार-जार रोते हैं। एक पीर ने यहां से जब विदाय ली होगी! समाधि तैयार की गई। कितनी-कितनी कथायें है! श्रद्धा तो मेरी भी है लेकिन केवल चमत्कार और परचे में मेरी श्रद्धा नहीं। लेकिन एक विवेक-विचार के कारण मुझे लगता है कि रामदेव बाबा आसमान में वहां पहुंचा है। हमारी व्यक्तिगत श्रद्धा को तो कोई तोड़ सकता नहीं।

पांच पीरों को कहना पड़ा, रामदेव, आप पीरों के पीर है। हिन्दुस्तानवालें प्रमाण दे तो समझे लेकिन बहुत दूर से प्रमाण आया और वो भी पूरा परिचय पाने के बाद प्रमाणपत्र आया! ऐसे रामदेवपीर बाबा की कुछ सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा हम कर रहे हैं। और मुझे बहुत ध्यानाकर्षित करती है ये बाबा की कुछ अंतिम बातें । बाबा जब गये तब कहते गये, दशमी का जो प्रसाद चढ़े वो भैरवे को दे देना। महापुरुष की दृष्टि में कोई पतित नहीं रहता। भैरवे को उसने मारा। उसमें पंचमी को प्रसाद डालीबाई को समर्पित कर दिया जाय। क्योंकि परमतत्त्व जिनको कुबूल करता है उनको बिसरते नहीं। देह चली जाय लेकिन उसकी आत्मा-स्मृति कायम शाश्वत रहती है। और संसार में वो ही शाश्वत रहता है जिसके मूल में सच्चाई है, पीराई है। तो ऐसे स्थान में हम रामकथा गा रहे हैं और रामकथा के माध्यम से रामदेव बाबा का अवलोकन कर रहे हैं।

पंचपीरों को बाबा ने पात्र दिये उसका आज के संदर्भ मेरा अर्थ है, जिसके पात्र न हो उसको पात्रता प्रदान करना रामदेवजी का जीवनव्रत है। अब आप मुझे प्रश्न पूछ सकते हैं कि मक्का से पधारे पंचपीर और स्थूल रूप में पात्र प्रदान करनेवाली बात मैंने आपको बता दी। लेकिन इक्कीसवीं सदी में जिस काल में हम जी रहे हैं, इस सत्य को हम कैसे ग्रहण करे? कथा में तो पंचपीर पात्र मक्का में भूल गये थे अथवा जो हो। क्या ये पीर मक्का से आये होंगे? इस्लाम धर्म की प्यारी बंदगी की होगी? क्या उसकी पात्रता नहीं थी? थी, लेकिन हम सिद्ध है। मृतक को हम भी ज़िंदा कर सकते हैं। ये घोड़ा चरानेवाला कैसे पीर बन सकता है? ये जो अहंकार का जो छिद्र पड़ गया था वो उसकी पात्रता को कमजोर कर दिया। तब जाकर बाबा ने उसे पात्र दिया। कौन पीर? जो कुपात्र को पात्र बना दे। कौन पीर? जो अपात्र को पात्रता दे दे। हमारे 'रामचरित मानस' में कथा आती है कि भगवान को गंगापार होना था वो केवट को प्रार्थना करते हैं कि हमें गंगापार ले चलो नौका में बिठाकर। बहुत बात हुई तब प्रभु ने कहा कि जल्दी कर भाई, जल्दी कर। पैर धो ले और हमें पार कर दे। तब उसने कहा, मैं घर जाउं और कथोटा ले आउं। ओर हमारे पास कोई पात्र नहीं है। उसी समय हमारा 'रामायण' जगत प्रभु से एक वचन बुलवाता है ये इस कथा के संदर्भ में भी ठीक लगता है। भगवान ने कहा, केवट, मेरे चरण धोने के लिए पात्र की जरूरत नहीं है, पात्रता की जरूरत है। तू अपनी जाति को हल्की न समझ। यहां पात्र का मूल्य नहीं है, पात्रता का मूल्य है। बाबा रामदेवपीर ने पात्र नहीं देखे कि डालीबाई दलित है। रामदेवजी ने जिन-जिन अधमों का उद्धार किया तो पात्र नहीं देखे, पात्रता देखी। सवाल है पात्रता का।

यहां पांचों पीरों की जो कथा मैंने सुनाई उसके पीछे बस एक छोटी-सी बात का ध्यान रखना कि पीर वो है जो अपात्र को पात्र बना दे। धक्का मत मारा कि तुम अस्पृश्य हो, तुम हल्के हो। नहीं, यदि तुम श्रेष्ठ हो तो अपात्र को पात्र बनाओ। ये क्रांतिकारी काम मेरी दृष्टि में। मैंने एकबार कबीरसाहब पर कथा गाई मगहर में तब मैंने एक बात कही थी कि कबीरसाहब मेरी तलगाजरडी दृष्टि में क्रांतिकारी संत, शांति देनेवाले संत है। कई लोग क्रांति करते हैं लेकिन समाज को शताब्दियों तक अशांत कर देते हैं! समाज में ऐसा बुद्धपुरुष चाहिए जो क्रांतिकारी हो, शांतिकारी भी हो और भ्रांतिहारी हो। समाज की भ्रांति हरनेवाला हो। कबीर ने बहुत भ्रांतियों को काटा। मुझे रामदेवरा में बोलने में कोई आपत्ति नहीं, मैं मेरे अंत:करण के आधार पर मेरे मन में जो रामदेवपीर है उनके बारे में कहना चाहूंगा कि रामदेवपीर बाबा भी क्रांतिकारी पीर है, शांतिकारी अवतार है और समाज की छोटी-बड़ी भ्रांतियां हरनेवाला अवतार है। अपात्र को पात्र बनानेवाला अवतार है।

तो पीर वो है जो अपात्र को पात्र बना दे। सही में जितने पीर हुए हैं जहां तक मेरी चैतसिक पहुंच है; जैसे पीरों ने स्वीकारधर्म ही पसंद किया। कैसा भी उनके पास आया। अपात्र है, कुपात्र है, कोई भी है; पहुंचना पर्याप्त है। अपात्र को पात्र बनाना पीरों का कर्तव्य है। हमको कोई पीर का बिरुद नहीं चाहिए लेकिन हम और आप भी यदि वंचित, दलित, तिरस्कृत, अभावग्रस्त, गयाबीता, जिसको कोई आदर नहीं देता ऐसे किसी को हम हृदय से लगाये, उनका स्वीकार करे, अपात्र को पात्र बनाये तो रामदेवजी की सच्ची पूजा होगी; सच्ची चादर ओढ़ाई होगी उसको। ये ही तो हमें करना है। आखिरी व्यक्ति को समझना इनकी कृपा से। तो रामदेवचरित्र जिस दृष्टि से मेरा अवलोकन है।

कौन पीर? जो अपात्र को पात्रता दे दे। 'रामचरित मानस' में कथा आती है कि भगवान को गंगापार होना था वो केवट को प्रार्थना करते हैं कि हमें गंगापार ले चलो नौका में बिठाकर। तब उसने कहा, मैं घर जाउं और कथोटा ले आउं। ओर हमारे पास कोई पात्र नहीं है। उसी समय हमारा 'रामायण' जगत प्रभु से एक वचन बुलवाता है ये इस कथा के संदर्भ में भी ठीक लगता है। भगवान ने कहा, केवट, मेरे चरण धोने के लिए पात्र की जरूरत नहीं है, पात्रता की जरूरत है। तू अपनी जाति को हल्की न समझ। यहां पात्र का मूल्य नहीं है, पात्रता का मूल्य है।

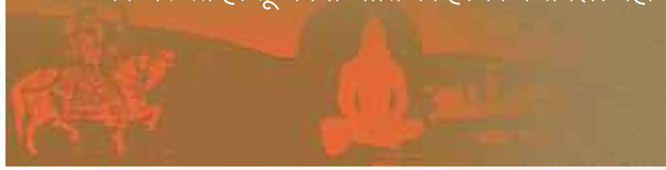

मुझे महत्त्व का लगा है। आज के युग की जरूरत है, आवश्यकता है।

अब थोड़ा कथा का क्रम। कथाक्रम में राम-लक्ष्मण विश्वामित्रजी के साथ मिथिला के मेहमान हुए। मिथिला के युवकलोग राम और लक्ष्मणजी की उम्र के लोग कुमार अवस्थावाले राम के बारे में सुनने के लिए, राम के दर्शन करने के लिए जिस 'सुंदर सदन' में महाराज जनक ने विश्वामित्र ऋषि के साथ राम-लक्ष्मण को ठहराया था उसी महल के फ़ाटक पर खड़े-खड़े ताकते रहे। वहां जाने कौन दे? जीवों की ये भावना देखकर के जीवों के आचार्य माने गये रामानुज लक्ष्मण, उसने प्रभु के प्रति देखा और प्रभु समझ गये; 'बेगि पाइअहिं पीर पराई।' जो दूसरों की पीर को जल्दी समझ ले वो ही तो पीर है। समझ गये तो योजना बनायी।

विश्वामित्रजी से राघव ने प्रार्थना की कि महाराज, ये लक्ष्मण जनकपुर देखना चाहते हैं। मैं संग जाउं और उसको मैं दिखाकर समय पर ले आउं! लखन तो जीव है, वो अकेले देखने जाएगा तो कहीं रास्ता भूल सकता है। लेकिन मेरी आंखों से देखेगा तो समय पर लौट आयेगा। हमें यही करना है। हमारी आंखों से हम दुनिया देखते हैं तो जगत मिथ्या भासता है अथवा हम भूल में डूब जाते हैं। इसलिए कोई सद्गुरु की आंखों से जगत देखा जाय। इसमें ही भक्ति बस रही है। भक्ति वैकुंठ में नहीं है। भक्ति पृथ्वी पर है। अरे! पृथ्वी पर क्या पृथ्वी की बेटी है। ये धरासुता है। जानकीजी मूल में पृथ्वीकन्या है। भक्ति तो धरा पर है इसीलिए नरसिंह मेहता ने पांच सौ- छः सौ साल पहले गाया कि ये धरती ही ऐसी है जहां भक्ति का निवास है। स्वर्ग में तो है ही नहीं। स्वर्ग में रखा क्या है? स्वर्ग तो रामदेवरा में है। स्वर्ग तो उपाधियों से भरा है। रामदेवरा समाधियों से भरा है। कहां स्वर्ग? हमारे भावनगर में एक शायर हुआ नाज़िर देखैया। एक दफ्तर में सामान्य नौकरी करता था। उसने कुछ-कुछ बातें की जो नरसिंह कह गया वो उसने की। नरसिंह मेहता कहता है-

जागीने जोउं तो जगत दिसे नहीं...

जागुं तो मुझे खबर नहीं पड़ती, जगत दिखता नहीं। वो ही कालांतर में नाज़िर बोल रहा है-

करतो' तो कोनी वात मने कंई खबर नथी।

क्यारे थयुं प्रभात मने कंई खबर नथी।

कब सुबह हो गई मुझे पता नहीं चला! भक्ति में बिजली कौधती है साहब! इसीलिए नरसिंह शास्त्रानुकूल और हृदयनाकूल दोनों और से बोल रहा है-

भूतळ भक्ति पदारथ मोटुं, ब्रह्मलोकमां नाहीं रे.

पुण्य करी अमरापुरी पाम्या, अंते चोरासी मांही रे.

इस धरती पर सब से बड़ा पदारथ है तो धर्मपदारथ नहीं, अर्थपदारथ नहीं, कामपदारथ नहीं, मोक्षपदारथ नहीं। सब से बड़ा पदारथ है तो पृथ्वी पर तो ये भक्तिपदारथ है। परमात्मा की दृष्टि से जगतरूपी मिथिला को देखे। जगत बुरा नहीं है। ये ही जगत है, जहां भक्ति निवास करती है। मिथिला है भक्ति का जन्मस्थान। विश्वामित्रजी को मेरे ठाकुर कहते हैं कि मैं अपनी आंखों से लक्ष्मण को नगर दिखाकर आउं। द्वार पर जो राम की उम्र के मिथिला के किशोरगण खड़े हैं वो अंदर नहीं जा सकते हैं तो राम-लक्ष्मण ने युक्ति बनाई कि नगरदर्शन के बहाने हम बाहर जाए और जो आ नहीं सकते उनको हम जा कर मिले। ये क्रांतिकारी घटना है, जो बाबा रामदेवपीर ने की। धर्म को चाहिए, जो तुम्हारे पास न आ सके उनके पास आप जाओ।

राम-लक्ष्मण दोनों बाहर आये। मिथिला के किशोरावस्थावाले बालक राम को घेर लेते हैं। नगरदर्शन कर रहे हैं ठाकुर मिथिला का। उसी समय तीन प्रकार के दर्शन करनेवाले थे मिथिला में। एक तो बहन-बेटियां, बहु-बेटियां, मिथिला की महिलायें है। वो मर्यादा से अपने भवन के झरोखें से, अटारियों से मर्यादाभंग न हो ऐसे राम का दर्शन करती है। मर्यादा है। बच्चे तो संग-संग है और महिलायें अटारी में है। और तीसरा दर्शकगण है बुजुर्गलोग, बड़े लोग वो घर के बाहर तो निकले लेकिन रास्ते की दोनों और फूटपाथ पर कतार में खड़े-खड़े देख रहे हैं। कुछ बोलते नहीं। आकर्षित होते हैं लेकिन उसकी बौद्धिकता उसे रोके हुए हैं। मिथिला के नगर में राम जब निकलते हैं तो ऐसे कई मनोभाव व्यक्त करते हुए राम का सब अपनी-अपनी रुचि अनुसार दर्शन करते हैं। सायंकाल हो गया और भगवान लक्ष्मण को लेकर लौट गये। राम पहला रात्रिमुकाम मिथिला में करते हैं। फिर दूसरे दिन आगे की लीलाएं शुरू होती है। आज भगवान की मिथिला में पहली रात्रि है। और कल धनुषयज्ञ और सीताजी का स्वयंवर, सीताराम का ब्याह और कल तुलसीविवाह है इसलिए एकादशी के दिन रामब्याह करवा दूंगा।

मेरी रामकथा प्रेमयज्ञ है, प्रेम का पाट है

'मानस-रामदेवपीर' के बारे में कुछ जिज्ञासाएं है, वहीं से विषय प्रवेश करें। बहुत अच्छा प्रश्न है, ''रामदेवपीर बाबा ने जीवित समाधि ली और यह अवतार देवलोक गमन कर गया। जीवित समाधि में क्या संदेश है? क्या पीड़ा है? भगवान शंकर ने विष पीया ऐसी कोई बात है? मौन रहकर लोगों की पीड़ा दूर करना यह समाधि का अर्थ है?'' मेरे श्रोता ने पूछा है कि मेरे पुत्र ने टी.वी. पर से सुनकर यह प्रश्न भेजा है। जीवित समाधि के कई अर्थ है। मेरी जिम्मेवारी से कहूं तो अवतार के रूप में, अस्तित्व की विशिष्ट व्यवस्था के रूप में अवतारकार्य लेकर धरती पर आते हैं, उन सभी के लिए जीवित समाधि बड़ी बात नहीं है। यह विशिष्ट महापुरुष कुछ समय के लिए धरती की विज़िट करते हैं, जो कुछ खास काल के लिए धरती पर आते हैं। जैसे रामदेवजी बाबा जीवित समाधि में बैठे। महाराष्ट्र में कहा जाता है कि तुकारामजी सदेह वैकुंठ गए। मेडती मीरां सदेह जीवित द्वारिकाधीश में समा गई। चारणसमाज के समर्थ महापुरुष ईशरदासजी घोड़े पर बैठकर समुद्र में चले गये। भगवान राम ने अवतारकार्य पूर्ण करके जल में समाधि ली। भगवान कृष्ण प्राची के पीपल के नीचे बैठकर वे जीवित अवस्था में मृत्यु का वरण करते हैं और भगवान कृष्ण का देहोत्सर्ग होता है। सौराष्ट्र-कच्छ के दादा मेकरण तथा संगी-साथीओं के बारे में भी ऐसा इतिहास है कि उन्होंने जीवित समाधि ली। साधनाशील मनुष्यों के लिए यह बड़ी बात नहीं है। लेकिन आज के युग में जीवित समाधि को समझना आवश्यक भी है।

मेरा वाक्य याद रखना, जो व्यवस्था के रूप में या अवतार के रूप में आते हैं, वे यह सब कर सकते हैं; जिसका मैं सम्मान करता हूं। लेकिन सब जगह आप लगा दो कि 'जीवित समाधि!' 'चेतन समाधि!' ये आपकी श्रद्धा है। ये भी ठीक है। इस आस्था से आपका धर्म बना रहे। समाधि के लिए हमारे देश में बड़ा महत्त्व का शास्त्र है पतंजलिवाला शास्त्र। भगवान पतंजलि ने समाधि की पूरी व्यवस्था विश्व को प्रदान की। हमारे यहां जेसल-तोरल के लिए ऐसी ही समाधि की बात है। मैं दांडी में जहां गांधीजी ने नमक का सत्याग्रह किया, वहां 'मानस-महात्मा' कथा कह रहा था। वहां रेत है, समुद्र है, वहां मेरी कुटियां बनाई गई थी। उस कथा में मुझे पूछा गया कि ''कच्छ के अंजार में जेसल-तोरल की समाधि के बारे में ऐसी

मान्यता है कि जेसल-तोरल की समाधि हर साल एक-दूसरे के निकट आ रही है। क्या यह बात सच्ची है?'' मैंने कहा था कि वो मुझे पता नहीं लेकिन जो रेती पर मेरी जो कुटियां बनाई है वह रोज-रोज नीचे जा रही है! ठीक नहीं करोगे तो नववें दिन मेरी समाधि हो जाएगी यहीं पे!

व्यासपीठ पर बैठा हूं; जिम्मेदारी से कहता हूं कि अवतारी यह कर सकते हैं। लेकिन इसमें दंभ और पाखंड खूब चलता है। वे 'आम' नहीं लेकिन 'खास' होते हैं। वे ईश्वर रचित नियति का अपवाद होते हैं। बाकी सब नियति पर ही आधारित होता है। 'मानस' में लिखा है कि भुशुंडि ने प्रश्न किया कि हे गरुडजी, पूरा संसार नियति के क्रमानुसार कालवश है, तो आप मरते क्यों नहीं? क्योंकि भुशुंडि नियति के क्रम के अपवाद हैं। 'महाभारत' के भीष्म अपवाद है। जीवित समाधि को समझने के लिए पतंजलि का शास्त्र मदद करता है। ओशो ने कहा है कि आइन्स्टाईन बहिर्जगत के वैज्ञानिक है और पतंजलि अंतर्जगत के वैज्ञानिक है।

हमारे यहां चार शब्द है- आधि, व्याधि, उपाधि और समाधि। समाधि के बारे में मेरा यह मानना है कि जिसके जीवन में से आधि, व्याधि और उपाधि निकल जाए और फिर जो शेष रहता है वह समाधि है। पतंजलि के न्याय से देखे तो समाधि के जो अष्टांग सूत्र है, उसमें पहले है आसन, यम, नियम। आपका उठना-बैठना संतुलित हो और यम-नियम में जीओ तो व्याधि आएगी ही नहीं। तमोगुणी आदमी उठता ही नहीं। रजोगुणी दो मिनट भी शांति से नहीं बैठ सकता। और सत्त्वगुणी वो है जो उठने के समय पे उठ जाता है; बैठने की जरूरत हो तब शालीनता से बैठे; चलने का हो तब चले। रामदेवपीर बाबा ने जीवित समाधि ली तो वह है त्रिगुणातीत। गुण को संस्कृत में रस्सी, दोरी कहा जाता है। गुण का अर्थ है बंधना। जिसको सत्त्वगुण, रजोगुण, तमोगुण बांध न सके, उनके लिए जो बचा है वह समाधि है।

योग में आंखों को नासिकाग्र रखने की बात है। ज्ञान में आंखें बंद करनी पड़ती है। लेकिन भक्ति में जरूरत हो तब बाह्यदर्शन के लिए आंखें खुली रखी जाती है और आंतर्‌दर्शन के लिए आंखें बंद कर दी जाती है। योग योग्य गुरु के मार्गदर्शन में करना चाहिए। प्रत्याहार पांचवां लक्षण है। उससे आधि मिटती है। आधि का अर्थ है और प्राप्त करूं; ओर प्राप्त करूं; आपाधापी में दौडुं। इससे पीछे आता ये है प्रत्याहार जो हमें मूल स्थान पे लाता है। ध्यान और धारणा से उपाधि का अंत आता है। उपाधि में से मुक्त होना है तो करे ध्यान की धारणा। जो स्वस्थ हो, निज में डूबे हुए हो उसको धारण करो। जिसका ध्यान पर स्वामीत्व हो उसकी धारणा करने से उपाधि दूर होती है। गुजराती शायर बरकतअली विराणी 'बेफ़ाम' का एक शे'र है-

> बेफ़ाम तोये केटलुं थाकी जवुं पड्युं,
> नहींतर जीवननो मार्ग छे, घरथी कबर सुधी।

अपने मूल स्थान पे आने में बहुत समय चला जाता है। अंत में जो आता है वह समाधि है। समाधि तक जाना नहीं पड़ता। शेष जो बचता है वह समाधि है। ऐसी समाधिवाला भोजन भी करता है। आपके साथ बातचीत भी करता है। आपके साथ सफ़र भी कर सकता है। स्नान कर के पूजा भी कर सकता है किन्तु होता है समाधि में। अवतार के रूप में आये हुए जीवित समाधि ले सकते हैं किन्तु हम जैसे भी इसका आनंद उठा सकते हैं यदि ये सब लक्षण हमारें में हो तो। ऐसे लोग जन्म-मृत्यु से पर चले जाते हैं। जैसे शंकराचार्य कहते हैं, ' न मे मृत्युशङ्का।'

तो रामदेवपीर बाबा की अवतार के रूप में जीवित समाधि ही है। वो चले गए। मिट्टी डाली फिर भी चेतना के रूप में कईयों को सचेत करते रहे। हरजी भाटी जोधपुर गये और पहाड़ों पर कपड़े के घोड़े को प्रस्थापित किया। अपनी वीणा और तंबूरा लेकर भजन गाने लगे। हजारों लोग वहां एकत्रित हो गए। उस समय जोधपुर में जो हाकीमिया था उसने राजा को फ़रियाद की, हरजी भाटी दंभ-पाखंड कर रहा है। राजा ने बोला, यह रामदेव का आश्रित है, अधर्म नहीं कर सकता। भाटी ने रामदेवजी बाबा का स्मरण किया और कहते हैं, कुछ संकेत मिला होगा। हाकीमियां सुधर जाता है। आपके समय में आप ऐसे बुद्धपुरुष को देखो जो सब बंधन से मुक्त है; जो आधि, व्याधि, उपाधि से दूर हो, उसको आप जीवित समाधिवाले मानिए। अनेक महापुरुष आये। गुरुनानक, एकनाथ, नामदेव, नरसिंह मेहता, मीरांबाई, जेसल-तोरल सब जीवित समाधि है।

पाट का जिसे अच्छा अनुभव नहीं है वह कहते हैं, 'बापू, आप मेदान में पाट कर रहे हो, तो आपके पाट के बारे में कुछ समझाइए। उसमें कोटवाल कौन है? पाट पे कौन पधारते हैं?' मेरी रामकथा प्रेमयज्ञ है, जिसको इस कथा में पाट कहा है। इसमें सत्य का लिंपन कर के भूमिका बनाई है। व्यासपीठ सत्य भूमिका की पर्याय है। परचा-परचा क्या करते हो? हरजी भाटी भजन गाते तो हजारों लोग मंत्रमुग्ध हो जाते थे! रामदेवजी बाबा की एक नजर पाने को लोगों की कतारें लगती थी और एक करुणादृष्टि मिले तो कुंडलिनी जागृत हो जाती। कल शाम को सामनेवाले मंच पर जो सात्त्विक कार्यक्रम हुआ। यहां के लोगों ने रामदेवजी का हेला और भजन गाएं। उसमें एक दादा ने कहा, 'हम क्यों पीए?' राज कौशिक का शे'र है-

> कभी रोती कभी हंसती कभी लगती शराबी-सी।
> महोब्बत करनेवालों की निगाहें ओर होती है।

जिसे 'भागवतजी' में गोपीजनों ने 'प्रेमविक्षण' कहा है। सत्य की भूमिका में जो बाजोठ रखा है वह प्रेम है और करुणा का कलश है। जो मैंने परब से लिया है। अमरमाँ अपने भजन में कहती है-

> में तो शुद्ध रे जाणीने तमने सेविया,
> मारा रुदियामां दिवस ने रात,
> हे जीवण, भले ने जागिया।

व्यासपीठ की सफेद चादर सत्य का प्रतीक है। में जिसमें पोथीबंधन करता हूं गेरुआ वस्त्र वह प्रेम का प्रतीक है। काले रंग की पोथी में काला रंग करुणा का रंग है। सूरज की ज्योत ये ज्योत है। मेरे पाट का कोटवाल हनुमान है।

> राम दुआरे तुम रखवारे।
> होत न आज्ञा बिनु पैसारे।

मेरे पाट का प्रधान पुरुष है भगवान महादेव।

> तुम्ह त्रिभुवन गुरु बेद बखाना।

बिना प्रमाण स्वीकार न करूं। ये मेरे वारसे में है। रातोल में रामापीर के पाट में गांव के लोग मेरे पिताजी को ले गए। पिताजी ने कहा, इसमें मुझे कुछ पता नहीं चलता। हम तो केवल 'राम राम' करते हैं। पाट अति पवित्र चीज है लेकिन अधकचरे लोग करे तो पाखंड बन जाता है। ज्योत प्रगट हुई। उसमें किसी को रामदेवपीर का हरा घोड़ा दिखा। किसी को हरजी भाटी दिखे। मेरे पिताजी को पूछा तो पिताजी ने कहा, मुझे लगता है कि दीये में घी कम है! घी नहीं डालोगे तो दीया बुझ जाएगा! रामकथा के पाट का बीजमंत्र है रामनाम।

> एहिं महँ रघुपति नाम उदारा।
> अति पावन पुरान श्रुतिसारा।।

'विनयपत्रिका' में कहा है, 'बीजमंत्र जपिये सदा, जो जपत महेस।' मेरे पाट के खानें चौपाईयों से पूरे हैं। ऐसा यह प्रेम का पाट है। हम गुरुकृपा से जीते जी समाधि का अनुभव कर सकते हैं। 'गीता' में योगेश्वर कृष्ण अर्जुन को कहते हैं, 'ज्ञेयः स नित्यसंन्यासी यो न द्वेष्टि न काङ्क्षति।' ब्रह्मानंद ने गाया है-

> त्रिगुणातीत फिरत तन त्यागी,
> रीत जगत से न्यारी।।
> ब्रह्मानन्द संतन की सोबत
> मिलत है प्रगट मुरारि।।
> जगत मांहे संत परम हितकारी।

एक युवक ने लिखा है, 'कुछ दिन पहले मेरी शादी की सालगिराह थी। शादी के बाद करीब-करीब हम कथा सुनते हैं। यहां भी हम साथ-साथ आये हैं। एकदूसरे को सुधारने के फ़ेरे में हम खुद बिगड़ते जा रहे हैं! आप कुछ कहो, जिससे जीवन में आराम, विश्राम मिले। साथ ही बाबा रामदेव के वैवाहिक जीवन के बारे में प्रकाश डालें।' कल ही मैंने नेत्रादे के बारे में आपको कहा। जिसका मूल ही प्रेम से परिपूर्ण हो, उसका दांपत्य न बिगड़े। जाना कि दृष्टि नहीं थी फिर भी आत्मप्रेम से बाबा रामदेवजी का हस्तमिलाप हुआ और उसकी सभी कुरूपता नष्ट हो गई। प्रेम क्या नहीं कर सकता?

> प्रेम परिचय को पहचान बना देता है।
> प्रेम वीराने को गुलिस्तां बना देता है।
> मैं आपबीती कहता हूं, गैरों की नहीं,
> प्रेम ईन्सान को भगवान बना देता है।

आप दोनों कथा में आते हो वही श्रेष्ठ है। कथा में संभावना है सुधरने की। तो आप कथा में आते रहो। समाधि पूर्व रामदेवजी ने चौबीस फ़रमान कहें। उसकी चर्चा रखूं। रामदेवपीर बाबा के फ़रमानों के कारण हम भी जीते जी समाधि का अनुभव कर सकते हैं। चौबीस अंक का हमारी

संस्कृति में अधिक महत्त्व है। हमारे यहां अवतार भी चौबीस है। जैन में तीर्थंकर भी चौबीस है। सर्वमान्य तत्त्वगणना में तत्त्वों भी चौबीस है। वेदमाता गायत्रीमंत्र के अक्षर भी चौबीस है। गायत्री के उपासक चौबीस लाख गायत्रीमंत्र की उपासना करते हैं। रामदेवजी बाबा कहते हैं-

कहे रामदेव सुनिए गतगंगा पाप से सदा दूर रहना,
धर्म में देना निज ध्यान।
सभी जीव पे दया रखना, भूखे को देना अन्नदान।

यह पहला फ़रमान है। अब प्रश्न यह उठता है कि बाबा ने कहा कि पाप से दूर रहे। किन्तु हमारे जो किए हुए पाप है उससे दूर रहने के लिए किसको पाप के बारे में सुनाएं? दूसरे फ़रमान में बाबा कहते हैं, 'गुरुचरण में पाप प्रकाशिए, परमार्थ के लिए तत्पर रहना। कम जीना जान लो, करना सार-असार का विचार।' पाप से मुक्त होने के लिए, गुरुचरण में पाप खोलना। सौराष्ट्र-कच्छ के जेसलजी पीर ने तोरांदे को कहा कि नौका डूबेगी। मुझे डर लग रहा है। वैसे तो हम दोनों ही है। नौका में कोई बोज नहीं है, फिर भी मेरे पाप का बोज बढ़ गया है। इस पाप का प्रकाशन कैसे करूं? तभी तोरांदे उसको पाप प्रकाशन करने को कहती है-

पाप तारुं प्रकाश जाडेजा,
धरम तारो संभाळ रे,
तारी बेडली बूडवा नहीं दउं,
जाडेजा रे, एम तोरल बोलिया...

जेसल ने तोरांदे के सामने पाप प्रगट किए। जेसल कहता है, जितने सिर पर बाल है, उतने पाप उसने किए हैं। यानी वह कम पापी है। उसने शरीर के रोम की गणना नहीं की है। हम तो शरीर के रोम-रोम से पाप करते हैं। लेकिन चिंता मत करो, बाबा रामदेवजी कहते हैं, गुरु के सामने पाप का प्रकाशन करो। जेसल ने वन के मोर को मारा लेकिन जीवन के मोर को मारने का क्या? जीवन का मोर है, 'मैं अरु मोर तोर ते मारे।' ये मेरा-तेरा उसको मारना चाहिए। पाप प्रकाशन के बाद परमारथ के लिए तत्पर रहना। आगे कहते हैं, जीवन की अनंतयात्रा में उपनिषदकार सौ साल कहते हैं। इतने कम समय में जी कर सार-असार के बारे में सोचने का विवेक बुद्धपुरुष से सीखो।

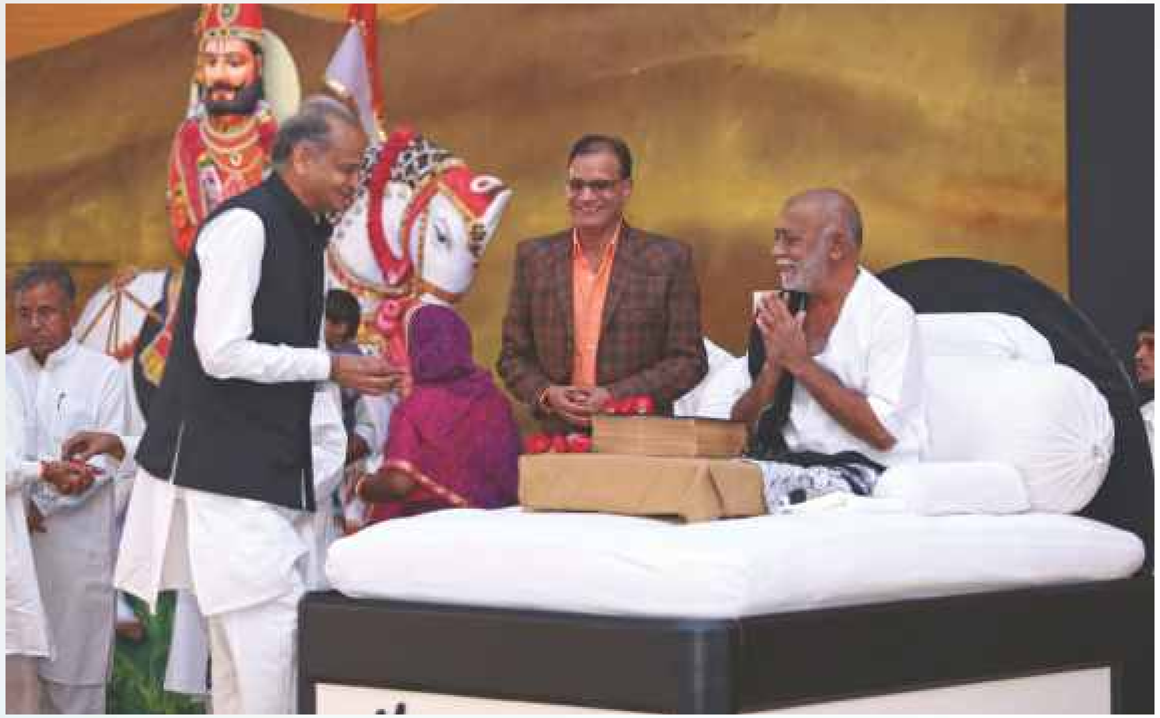

तीसरा फ़रमान है, 'वाद-विवाद, निंदा करनी अच्छी नहीं। गत के गोठी के आते वायक को हेत से बधाना आपने अंतर को टटोलकर।' गतगंगा का एक अर्थ है, जो गतगंगा में गोठी बनकर बह रहा है। बहती भक्ति याने गतगंगा। 'भगवद्गीता' की गतगंगा थोड़ी कठिन पड़ेगी। प्रसन्न रहो। अपेक्षा न करो। 'सम: सर्वभूतेषु मद्भक्ति लभते परां।' ब्रह्मभूत हो के जीना कठिन है। चिंता नहीं करना, प्राणीमात्र को समदृष्टि से देखें तो जीव गतगंगा का गोठी बन सकता है, ऐसा 'गीता' का संदेश है। रामदेवपीर बाबा का हेला गाओ; 'रामचरित मानस' का पाठ करो, वही पाट-स्थापन है। पांडुरंग दादा ने स्वाध्यायीओं को एक शब्द दिया था 'भक्तिफ़ेरी।' ये गतगंगा का नया रूप है। तुलसी ने एक गतगंगा दी 'उत्तरकांड' में-

कहउ भगति पथ कवन प्रयासा।
जोग न मख जप तप उपवासा।।

यह पांच 'मानस' की गतगंगा है। भक्ति के विषय में कोई प्रयास नहीं करने हैं। और जो प्रयास कर रहे हैं, वह स्वतंत्र हो जाओ। भुशुंडिजी कहते हैं, गरुड, भक्ति करनी है तो पांच चीजों का त्याग कर। तुझे योग करने की जरूरत नहीं है क्योंकि भक्ति स्वयं योग है। इसीलिए 'गीता' के बारहवें अध्याय का नाम 'भक्तियोग' है। कृषि करनी है, मज़दूरी करनी है, दूसरे गांव जाना है, एक बारिश में जो पके उसी में गुजारा करना है, ऐसी परिस्थिति में योग कैसे हो? योग करे तो वंदनीय है। तुलसी की गतगंगा में योग करने की जरूरत नहीं है, यज्ञ करने की जरूरत नहीं है। तीसरी चीज, जप की जरूरत नहीं है। लोग सिद्धियों के लिए जप करते हैं। मंत्रजाप की जरूरत नहीं है। नामजप बहुत करना। भक्ति करने में तप की जरूरत नहीं है। पंचधूणी तपना, सिर के बल तप की आवश्यकता नहीं है।

गुजरात के सुरत में तापी नदी बहती है। शास्त्र में उसका वर्णन है कि जो तापी में स्नान करे उसको तप का फल मिलता है। हमारे शास्त्रों में सब नदी का एक-एक फल है। गंगा में स्नान करने से भक्ति मिलती है। 'राम भगति जहँ सुरसरि गंगा।' रेवा में स्नान करे तो पांडित्य मिलता है। सरस्वती में स्नान करने से ब्रह्मविद्या की प्राप्ति होती है। सरयू में स्नान करे तो ध्यान की प्राप्ति होती है। और तलगाजरडा की रूपावा में स्नान करो तो 'रामचरित मानस' की प्राप्ति होती है। कावेरी में स्नान करो तो संतमिलन होता है। कृष्णा में स्नान करो तो कृष्ण के दर्शन होते हैं। गोस्वामीजी कहते हैं, भक्ति में उपवास की जरूरत नहीं। ठाकोरजी को भोग लगा सके ऐसा और आपकी जठराग्नि पचा सके उतना जरूर खाओ। उपवास करते हैं उसको प्रणाम करता हूं। लेकिन उपवास कर के टूट जाने की जरूरत नहीं है। आप इस बात का निरीक्षण करना साहब! जो बहुत उपवास करते हैं वह क्रोध बहुत करते हैं। क्योंकि भूख क्रोध पैदा करती है। इतनी सरल भक्ति में लोगों को श्रद्धा नहीं जागती। कठिन साधना बिना की बात आपके मन में न बैठे तो फिर पांच बातें गोस्वामीजी देते हैं-

सरल सुभाव न मन कुटिलाई।
जथा लाभ संतोष सदाई।।

मेरे पास कोई कथा लेने आये और समय हो गया हो, भाग्य खुल गया हो और पहली बार में कथा दे दूं तो उनको बात समझ में नहीं आती! मनुष्य को कुछ कठिन कहे तो ही समझ में आता है! पहला सूत्र गतगंगा का, सरल स्वभाव। बोलो तो सरल, सुनो तो सरल, स्वभाव भी सरल। दूसरा सूत्र, मन की कुटिलता से दूसरों के साथ खेलो मत। सब अपने प्रारब्ध का भोगते हैं। में क्यों किसी का द्वेष करूं, किसीकी निंदा करूं? ऐसा सोच कर कुटिलता त्यागो। तीसरा सूत्र; हमारे प्रामाणिक प्रयासों से, प्रभुकृपा से जो कार्य मिला है उसमें संतोष रखना। पुरुषार्थ करना लेकिन जो मिले उसमें संतोष मानो। भगवान राम ने शबरी समक्ष नवधा भक्ति की बात कही। उसमें आठवीं भक्ति-

आठव जथा लाभ संतोषा।
सपनेहुं नहीं देखहि पर दोषा।।

'गीता' में भगवान कृष्ण कहते हैं-

सन्तुष्ट: सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चिय:।
मय्यर्पित मनोबुद्धियों भक्त: स मे प्रिय:।

यदि संतोष न मिले तो जितना काम किया उससे ज्यादा श्रम लगेगा, टूट जाएंगे। प्रबुद्ध पुरुष भुशुंडिजी चौथे सूत्र में कहते हैं, मेरा दोष कहलाए और यहां-वहां आशा रखे तो भक्ति नहीं होगी। भक्ति में आश नहीं लेकिन प्यास होती

है। आशा तो बंधन है। वहां तक भरत की भक्ति बोली है कि 'गतिन्ह चहहुं निर्वाण।' परमात्मा को सब पता है, फिर क्यों भीख मांग के इज़्ज़त गंवाएं? पांचवां सूत्र विश्वास का, 'बिनु बिस्वास भगति नहीं होई।' गतगंगा का सदस्य वाद-विवाद न करे। आत्मा अंदर से बोले तो ही वायक को बधाना। उसीको शास्त्र अंत:करण की आवाज़ कहते हैं। चौथे फ़रमान में कहते हैं, 'गुरुपद की सेवा को प्रथम जानो।' 'बंदउ गुरु पद पदुम परागा।' गुरु की सेवा से ज्ञानप्राप्ति होगी। 'गुरु बिन ज्ञान न उपजे।' और 'ज्ञान के पंथ क्रिपान की धार।' ज्ञान के पंथ में धार होती है। इसीलिए सावधान रहना। मालिक, परमात्मा, बुद्धपुरुष पर धारणा रखो। गुरु की पादसेवा से भक्ति की लालसा उपजती है। पांचवां फ़रमान, वेश की महिमा है। यहां आलोचना के लिए भगवे वेश की बात नहीं की। इस देश के त्याग और संन्यास का रंग भगवा है। यहां प्रपंच, दंभ, पाखंड की आलोचना है। ऐसे लोगों को रामदेवजी कहते हैं, आप 'नूगरा' समझना। हमारे गुजरात में तो 'नूगरा' अपशब्द बन गया है। ऐसे नूगरे का विवाह भी नहीं होता। ऐसे लोगों के चेहरे पे नूर भी नहीं होता। छठ्ठा फ़रमान; तुलसीजी कहते हैं, 'सेवा धरम कठिन जग जाना।' सेवाधर्म कठिन है। रामदेवजी कहते हैं, जति यानी संन्यासी और सती यानी सत् से भरा हुआ; उसके मर्म को जानकर, मोह-माया की जंजाल को त्यागो। सती सीता जति रावण को कहती है, तू दृष्ट वचन बोलता हैं। लेकिन दोनों के पास रूप सपनें जैसे हैं। सीता भी छायारूप है और रावण भी जति नहीं है। सातवां फ़रमान; पानबाई को यहां उतारी है, 'वचन विवेकी जे नर ने नारी रे पानबाई...' वो नेकी-टेकी को जानते हैं और व्रतधारी है। वह किस जाति का है, किस देश का, कोम का, धर्म का यह भेद रखे बिना यह हमारा सेवक है। जो सच्चा और सदाचारी है वह मेरा सेवक है, ऐसा रामदेवजी कहते हैं। आठवां फ़रमान, युवान भाई-बहन, माता-पिता की सेवा करना। उपनिषद भी कहता है, 'मातृदेवो भव।' 'पितृदेवो भव।' 'आचार्यदेवो भव।' 'अतिथिदेवो भव।' आचार्य मनु ने भी कहा, जो हमारे से ज्येष्ठ और श्रेष्ठ है उसका आदर करो। अपने स्वधर्म का सोचकर कदम उठाना। 'गीता' में कहा है-

स्वधर्मे निधनं श्रेय: परधर्मो भयावह:।

नववां फ़रमान, अनेक मन से नहीं, एक मन से अलख को आराधना। चौबीस फ़रमान में से नव फ़रमान लिए। अब जो समय बचा है उसमें कथा का क्रम ले लूं। भगवान राम-लक्ष्मण ने जनकपुर के दर्शन किए। पहली रात्रि मिथिला में बिताई। दूसरे दिन राम-लक्ष्मण विश्वामित्रजी की पूजा के लिए जनकजी के बाग में गुरुआज्ञा लेकर जाते हैं। जनक के सुंदर बाग में पवित्र जल से भरा हुआ सरोवर है। उसके तट पर गिरिजा का मंदिर है। राम-लक्ष्मण फूल चुनते हैं। उस समय जनक की पुत्री जानकी माँ सुनयना के आदेश पे अष्ट सखियों को लेकर गौरीपूजा के लिए बाग में प्रवेश करती है। उतने में उसकी सखी राम को देख लेती है और जानकीजी को कहती है, पूजा बाद में भी हो जाएगी। जिस राजकुमार की चर्चा पूरे नगर में हो रही है वो बाग में है। पहले उनको देख लें। सखी को आगे कर के सीताजी दर्शन के लिए जाती है। जानकीजी बाग में आती है और राम तो वहां पहले से ही है। तो जो है उसको पाने के लिए क्या करना चाहिए? तुलसी कहते हैं, पहले बाग में जाओ, सरोवर में स्नान करो, मंदिर में पूजा करो। उसके बाद जो सखी तुम्हें मार्गदर्शन दे वहां जाकर परमात्मा के दर्शन करो। बाग में दर्शन के लिए प्रवेश यानी क्या? तुलसीदासजी बाग का आध्यात्मिक अर्थ करते हैं कि-

संतसभा चहुँ दिसि अवँराई।
श्रद्धा रितु बसंत सम गाई।।

बाग का आध्यात्मिक अर्थ है, संत की समझ है उसको पाने के लिए संत के पास जाकर सत्संग करना। संत का हृदय निर्मल पानी जैसा है। सत्संग कर के साधु की स्मृति में हम आये वह हरिदर्शन का सोपान है। जानकी गौरी की पूजा करती है। गौरी यानी पार्वती श्रद्धा है। इतना होगा तो जैसे जानकीजी के पास सखी आती हैं वैसे सच्ची श्रद्धा हो तो सच्चा सद्गुरु आकर आपको कहेगा, मैंने राम को देखा है, तुम्हें भी रामदर्शन करवाउं। जानकी पराम्बा है, फिर भी गुरुरूपी सखी के पीछे-पीछे जाती हैं। गुरु के अनुसरण से राम मिल जाते हैं। सखी सीता को राम का दर्शन करवा के बीच में से चली जाती है। इसका अर्थ है कि गुरु साधक को ईश्वर सन्मुख रखकर खुद बीच में से निकल जाता है। गुरु ईश्वर सन्मुख बनाता है। जानकीजी राम के दर्शन करती हैं।

राम जानकीजी को भाव से देखते हैं। जानकीजी राम के दर्शन कर के भवानी की स्तुति करती है। मेरे देश की बहन-बेटियों को करने योग्य यह स्तुति है-

जय जय गिरिबरराज किसोरी।
जय महेस मुख चंद चकोरी।।
जय गजबदन षडानन माता।
जगत जननि दामिनि दुति गाता।।

भाव और प्रेम से जानकीजी ने स्तुति की और भवानी की मूर्ति प्रसन्न होकर डोलने लगी। मूर्ति के कंठ में से माला गिरी। बौद्धिक जगत इस बात का स्वीकार नहीं करता कि मूर्ति बोले? हां, जानकीजी स्तुति करे तो भवानी की मूर्ति बोले। भवानी कहती है, तुम्हारे मने में जो सांवरा राजकुमार, शीलवान और स्नेह में बसे राम तुम्हें मिलेंगे। सखीओं के साथ जानकीजी घर आती है। राम-लक्ष्मण पुष्प लेकर विश्वामित्र के पास आए और पूजा की। गुरु दोनों भाईयों को आशीर्वाद देते हैं।

धनुष्ययज्ञ का दिन आया। सभी राजे-महाराजे तैयार होकर बैठे हैं। सभा के बीच में भगवान शिव का पिनाक रखा है। एक के बाद एक राजा खड़े हुए। लेकिन किसी से धनुष्य टस से मस न हुआ। विश्वामित्रजी समझ गये कि राम मेरे आदेश की प्रतीक्षा में है। तुलसीदासजी लिखते हैं, 'उठउ राम भंजहु भव पावा।' राम, उठो, धनुष्य तोड़ो। शिवधनुष्य की परिक्रमा कर के आदर दिया। मंचस्थ गुरु को याद किया। त्रिभुवन गुरु शिवजी का स्मरण कर के धनुष्य के निकट राम जाते हैं। धनुष्य टूटने पर धरती में कंपन न हो इसीलिए शेषावतार के रूप में लक्ष्मणजी धरती को वश में रखते हैं। क्षण के मध्य भाग में धनुष्य के टुकड़े होते हुए देखे!

जानकीजी जयमाला लेकर आती है। राघव के कंठ में जयमाला पहनाई। जयजयकार हुआ। परशुराम आते हैं और राम का प्रभाव देखकर अवकाश प्राप्त करते हैं। दूत अवध गये। महाराज दशरथजी बारात लेकर जनकपुर आये। रामविवाह की तिथि ब्रह्मा ने निकाली। मागसर शुक्ल पंचमी, गोरजबेला थी। कामदेव स्वयं घोड़ा बना है। भगवान राम कामरूपी घोड़े की लगाम हाथ में लेकर बैठे हैं। भगवान राम विवाह मंडप में आ के देवताओं को, ब्राह्मण देवताओं को प्रणाम कर के आसन पर बिराजे। अष्टसखियां जानकीजी को लेकर मंडप में आई। वशिष्ठजी जनक को कहते हैं, आपकी बेटी ऊर्मिला, आपके भाई कुशध्वज की बेटियां मांडवी और श्रुतकीर्ति है। हमारे भी तीन पुत्र है। उसके साथ आपकी तीन बेटियों का विवाह हो जाए? जनकजी कहते हैं, बाबा, आप आज्ञा दीजिए। जानकी राम को, ऊर्मिला लक्ष्मण को, मांडवी भरतजी को और श्रुतकीर्ति शत्रुघ्नजी को अर्पित होती है। चारों भाईयों के विवाह एक ही मंडप में संपन्न हुए। शादी के बाद बारात कई दिन रुकी है। बिदाई का समय आया। रास्ते में विश्राम करते हुए दशरथजी का समाज अयोध्या पहुंचता है। अतिथियों को निवास दिए। रात्रि के समय सब ने विश्राम किया। आखिर में महाराज विश्वामित्र बिदा लेते हुए कहते हैं कि महाराज, अब मैं विदा लूं। पूरा राजपरिवार विश्वामित्रजी के चरणों मे गिरा। सुंदर पंक्तियां है-

नाथ सकल संपदा तुम्हारी।
मैं सेवकु समेत सुत नारी।।

राजाधिराज दशरथजी विश्वामित्रजी को कहते हैं, 'हे भगवान, ये संपदा आपकी है। मैं तो राजा हूं लेकिन मेरी रानियां, मेरी पुत्रवधूएं, पुत्रों के साथ आपका किंकर हूं। साधना में आपको अवकाश मिले तो आते रहिएगा और हमारे परिवार पर कृपा करते रहिएगा।' साधुओं के पास इतना ही मांगना कि भजन कर के आपको हमारी याद आए तो दर्शन देना। पूरा राजपरिवार सजल नेत्र खड़ा है और एक साधु की बिदा हुई।

मेरी रामकथा प्रेमयज्ञ है, जिसको इस कथा में पाट कहा है। इसमें सत्य का लिंपन कर के भूमिका बनाई है। सत्य की भूमिका में जो बाजोठ रखा है वह प्रेम है और करुणा का कलश है। व्यासपीठ की सफेद चादर सत्य का प्रतीक है। में जिसमें पोथीबंधन करता हूं, गेरुआ वस्त्र वह प्रेम का प्रतीक है। काले रंग की पोथी में काला रंग करुणा का रंग है। सूरज की ज्योत ये ज्योत है। मेरे पाट का कोटवाल हनुमान है। मेरे पाट का प्रधान पुरुष है भगवान महादेव। रामकथा के पाट का बीजमंत्र है रामनाम। मेरे पाट के खानें चौपाईयों से पूरे हैं। ऐसा यह प्रेम का पाट है।

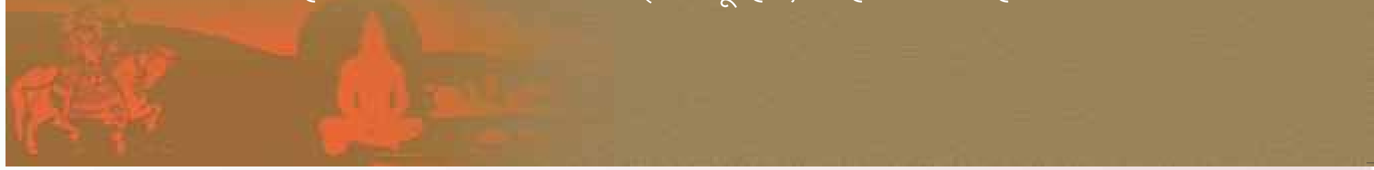

जहां कोई परदा न हो उसे पीर समझना

'रामचरित मानस' के आधार पर रामदेवपीर बाबा का कुछ सात्त्विक-तात्त्विक दर्शन हम कर रहे हैं। कुछ आगे बढ़ें। कल बाबा के समाधि के पूर्व जो फ़रमान कहे गये उसकी चर्चा हम कर रहे थे। कुछ और फ़रमान आज लेंगे। इससे पूर्व दो प्रश्न है। ''बापू, संत, महंत, ओलिया, सिद्धपुरुष जीवित समाधि क्यों लेते हैं? उसके जीवन में से कितनी प्रेरणा, उपदेश लोग लेते हैं? वो अपने जीवन को जीवंत समाधि लेकर क्यों पूरा कर देते हैं? सामान्य जीव किसी दु:ख के कारण अपनी जिंदगी को छोटी कर दे लेकिन 'बड़े भाग मानुष तनु पावा।' के आधार पर जो अवतारी लोग हैं, बुद्धपुरुष हैं वो जीवन क्यों छोटा कर देते हैं?'' मैंने शायद कल भी कहा कि प्रत्येक अवतार और अस्तित्व की विशेषता के रूप में जो धरती पर अवतरण होता है, उसका एक निश्चित कार्यक्रम होता है। जब ये कार्य पूरा हो जाता है, तो वो अवतारलीला को समेट लेते हैं। इसका मतलब ये नहीं कि वे दीर्घायु रहे तो प्रेरणा ज्यादा मिल सकती थी लेकिन शरीर जाने के बाद उनकी चेतनाएं बहुत काम करती है। आज ये छ: सौ साल का इतिहास है, जब रामदेवजी बाबा मौजूद रहे तब शायद उनको पहचाननेवाले इतने लोग नहीं होंगे। उनके कार्यकाल में इतनी पूजा न भी हुई हो, न मंदिर बने हो। लेकिन आज गुजरात, राजस्थान और अन्य प्रांत और विदेश में भी मैंने देखा है, जो बाबा के अनुयायी है वो बहुत बड़ी मात्रा में है। व्यक्ति इतना फैल सकता है जितनी चेतना फैलती है। तो उसका कार्यकाल निश्चित होता है। दूसरा, वो चेतना से काम करते हैं। हमारे बीच से उसका जाना भी करुणा ही है।

भगवान राम ने चित्रकूट में इतने साल निवास करने के बाद सोचा, 'होई भीर सबहि मोहि जाना।' अब मैं स्थलांतर कर लूं। सब मुझे जानने लगे हैं। और मुझे जो अवतारकार्य करना है उसमें बाधा हो सकती है। तो अवतार स्थलांतर भी कर लेता है और रूपांतर भी कर लेता है। रूपांतर का मतलब है देहत्याग करना और खुद के बचन, विचारधारा, आदेश-उपदेश, फ़रमान रखकर वो चले जाते हैं। तो ये निश्चित व्यवस्था होती है। आपको लगे कि सूरज क्यों शाम को चला जाता है? चौबीस घंटे सूरज रहे तो अडचण होगी। सूरज को नियत समय पर अस्तांचल को जाना चाहिए। चेतनाओं के बारे में भी कुछ ऐसा है। तो इस चेतनाओं ने भी 'बड़े भाग मानुष तनु पावा।' उसीकी चर्चा की है। फिर भी वो समय पे बिदा लेते हैं। और ये भी न समझना कि एक जाये तो वहां खाली जगह रहती है। खो-खो की रमत है। एक चेतना जाती है, वहां दूसरी चेतना आ जाती है। किसी न किसी रूप में, अस्तित्व की व्यवस्था के रूप में।

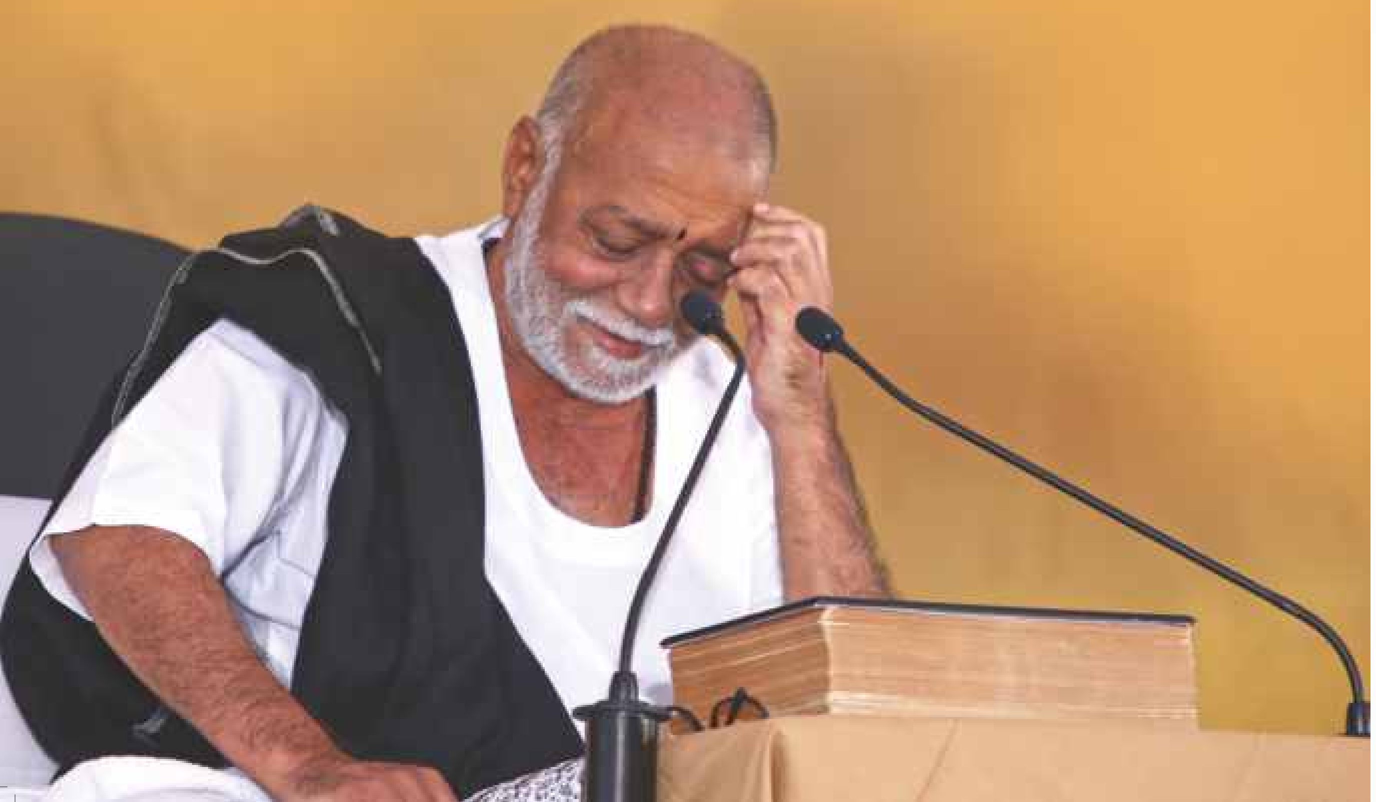

दूसरी बात है, 'बापू, रामदेवपीर की जो चर्चा चल रही है उसमें आप अपने अवलोकन से 'पीर' की छोटी और स्पष्ट व्याख्या बनाकर जाएंगे?' मैंने पहले दिन जो शब्दकोश का अर्थ है वो आपके सामने रखा था कि 'पीर' माने ओलिया, फ़कीर, संत। मेरा अवलोकन आप पूछ रहे हो तो मेरी जिम्मेवारी से मैं कहना चाहूंगा कि व्यक्ति कोई भी वर्ण, कोई भी मज़हब, कोई भी देश, वेश, भाषा जिसमें आप पांच 'प'कार देखे उसे 'पीर' समझना। चाहे उसने हरे कपड़े पहने हो, न पहने हो। चाहे वो घोड़े पर बैठा हो, न बैठा हो। चाहे उसने शादी की हो, न की हो। श्वेतांबर हो, दिगंबर हो। देश का हो, विदेश का हो। कोई चिंता नहीं। रामदेवबाबा का अवलोकन करते-करते जो व्यासपीठ का अवलोकन पूछा है तो मैं कहूंगा, तो कुछ संबल के रूप में भी आप साथ में रखेंगे। और ये अवलोकन का प्रयोग करेंगे तो शायद आपको महसूस भी होगा। 'मेरा अवलोकन' इसीलिए कहता हूं कि इससे मेरी जिम्मेवारी बनती है।

जैसे एक शरीर में पंचतत्त्व होते हैं। पृथ्वी, जल, तेज, वायु, अग्नि इन पांचों को मिलाकर अस्तित्व होता है। तुलसी कहते हैं, 'छिति जल पावक गगन समीरा।' ये पांच तत्त्वों का देह है। 'गगन समीर अनल जल धरनी।' ये सब 'मानस' के प्रमाण है। हमारे शरीर में ये पांचों तत्त्वों का मिलन होता है। वैसे पीर बनता है ये पांच विशेष तत्त्वों से। एक, जहां कोई परदा न हो वो पीर। जहां कपट नहीं, फ़रेब नहीं, छल नहीं, दंभ-पाखंड नहीं वो पीर। जहां कोई परदा न हो उसे पीर समझना।

जब देश को आजादी नहीं मिली थी और महात्मा गांधीबापू आगेवान थे उस समय सरहद के गांधी, खान अब्दुल गफ़ारखानसाहब गांधीजी को एक सभागृह में ले गये। उसमें सब मुस्लिम महिला थी। कुछ आयोजक पुरुष थे। सभी माताएं बुरखाधारी है। इतिहास कहता है, गांधीजी पांच मिनट बोले और सभी महिलाओं ने अपना नकाब उपर कर लिया। गांधीजी ने कहा, 'ये आपकी महिमा है कि आप नकाब हटा रहे हो और इसके कारण आपको मुश्किल हो सकती है, तो आप अपनी मर्यादा बनाए रखे।' तब सभी महिलाओं ने कहा था, पीर के आगे परदा क्या? उसे पीर समझना कि लोगों को लगे कि इसके सामने क्या छिपाये?

आज एक प्रश्न ये भी था कि 'गुरु के सामने पाप का प्रकाशन करो ये रामदेवबाबा का फ़रमान है। यदि हम गुरु के पास पहुंच न पाए, उसके साथ बात न कर पाते हैं तो पाप का प्रकाशन कैसे करें?' यहां नजदीक और दूरी की बात नहीं है। गुजराती कवि कलापी ने कहा है-

हा, पस्तावो विपुल झरणुं स्वर्गथी ऊतर्युं छे,
पापी तेमां डूबकी दईने पुण्यशाळी बने छे।

कहीं भी हम रहे, हमें ग्लानि महसूस हो कि हमनें ये भूल की है, अपने गुरु को, बुद्धपुरुष को याद करे और आंसू आ जाए, ग्लानि प्रगट हो जाए तब गुरु कहीं ना कहीं अगल-बगल में होगा। फिल्म की पंक्ति है ना-

तूं जहां जहां रहेगा,
मेरा साया साथ होगा।

आपको गुन्हें की ग्लानि का विचार आता है, वो भी उसकी उपस्थिति का संकेत है। मोम तभी निकलता है जब आग निकट आती है। और वो मोमीन की पंक्ति भी अच्छी है कि-

तुम मेरे पास होते हो,
कोई दूसरा नहीं होता।

तो पीरों से परदा क्या? फिल्म की एक ओर पंक्ति है-

परदा नहीं जब कोई खुदा से,
बंदों से परदा करना क्या?

व्यासपीठ का अवलोकन है बाप! जहां परदा नहीं है, वहां पीराई है। गांधी सत्य से भरा हुआ महात्मा है, इसीलिए शताब्दीओं की परंपरा छोड़कर सरहद की बहनें अपना नकाब हटा लेती है। ये पीर का परिचय है।

दूसरा, जहां प्याला है वो पीर। और इस परंपरा में प्याला पिलाया उसकी भी एक जगह है। यद्यपि उसमें गलत अर्थ भी किए हैं। सावधान! ये प्याला ओर कोई नहीं, प्रेम का प्याला है। जहां प्रेम का प्याला है वो पीर। कालांतर में

दंभीओ के द्वारा दूषित किया गया! हमारे और आपके पास दो प्याले हैं आंख। जिस आंख में दूसरों की पीड़ा देखकर आंसू निकल आए वो पीर है। नरसिंह ने कहा, 'पीड पराई जाणे रे...'

करुनामय रघुनाथ गुंसाई।

बेगिपाईअहि पीर पराई।।

यद्यपि 'पीर' शब्द इस्लाम धर्म में आया लेकिन मुझे ये सार्वभौम लगता है। ये पहुंचे हुए लोगों का परिचय है। मेरे श्रावक भाई-बहन, जहां प्रेम का प्याला छलक रहा है। कभी हरिवंशराय बच्चन की 'मधुशाला' पढ़िए; परवाज़साहब का 'मेरा प्याला' किताब पढ़िए। जिस प्रेम को पीने से शाश्वत आनंद आता है। लोग शराब को व्यसन कहते हैं। मुझे ऐसा लगता है कि कोई भी व्यसन शराब है। हरिनाम का व्यसन भी शराब है। नानक कहते हैं, 'नाम खुमारी नानका चढ़ी रहे दिन रैन।' ये नशा शाश्वत है। कहते हैं, अकबर की सवारी निकली तो एक शराबी ने अकबर से कहा, 'ए शहनशाह, हाथी बेचना है?' अकबर ने लोगों को कहा, 'इसे मारो मत, अंदर कर दो। कल सुबह दरबार में हाज़िर करना।' दूसरे दिन उसको अकबर ने कहा, 'हां, मुझे हाथी बेचना है, कितने में खरीदोगे?' तो उसने कहा, 'खरीदनेवाला तो एक घंटे में चला गया!' जो घंटे के बाद उतर जाए वो शाश्वत शराब नहीं है। शाश्वत शराब है हरिनाम। गोस्वामीजी कहते हैं, 'रामचरित मानस' के सनकादिक शराबी है। सनकादिक हमारी निम्बार्की परंपरा के मूल पुरुष है। इनका शाश्वत व्यसन है हरिनाम। भगवतनाम का व्यसन शाश्वत है। यद्यपि पाश्चात्य विद्वानों ने कहा, धर्म तो अफ़ीन है। लेकिन अफ़ीन भी कुछ घंटें में उतर जाता है। भरतजी इसी व्यसन की मांग कर रहे हैं-

जनम जनम रति राम पद यह बरदान न आन।

तो बाप! जहां परदा नहीं वो पीर और जहां प्रेम का प्याला है वो पीर। फिल्म की एक पंक्ति है-

छलके तेरी आंखों से शराब और भी ज्यादा।

जिसकी आंखों में वासना नहीं, केवल प्रेम देखो तो समझना वो पीर है। परख हमारे पास भी होती है, क्योंकि हमारे अंदर भी परमात्मा बैठा है। लेकिन परमात्मा हम दबा देते हैं और बुद्धि से परख करने निकले हैं इसीलिए चूक करते हैं। मौका दो हरि को, वो अंदर बैठे पहचान लेता है। मासूम गाज़ियाबादी का शे'र है-

तेरे हाथ में इमदाद है।

तेरी आंखों में उन्माद है।

तीसरा अवलोकन, जहां परचा है वो पीर है। परचा यानी मदारी का खेल नहीं। जिसको लगे कि ये पात्र है अथवा पात्र बनाकर अपनी पूरी पहचान करा दे वो पीर। अपने को पूरा उडेल दे समाज के सामने वो पीर। जिस पर उडेल दिया जाए और सामनेवाले को लगे कि मुझे पूरा मिला। परचा का मतलब है, वो पूर्णरूप से जगत के सामने प्रगट हो जाए वो पीर। 'रामदूत मैं मातु जानकी।' जानकी के सामने हनुमानजी ने कहा, 'माँ, मैं राम का दूत हूं।' बिलकुल पहचान वो परचा, परिचय। भरतजी के सामने जाकर भी हनुमानजी कहते हैं, 'मारुतसुत में कपि हनुमाना।' और श्री हनुमानजी भगवान राम के सामने 'किष्किंधाकांड' में आते हैं तो कहते हैं, 'मैं मंद मोहबस', अपना परिचय स्पष्ट करते हैं। हनुमानजी तीन जगह ब्राह्मण का रूप लेते हैं। 'बिप्र रूप धरि कपि तह गयउ।' विभीषण के पास विप्ररूप धारण कर के जाते हैं। श्री भरतजी के पास विप्ररूप में जाते हैं। 'धरि सोई रूप' जानकी के पास भी वो ही रूप लेकर गए। सुरसा के पास अति लघुरूप लेकर गए। कभी राक्षसों पे प्रहार किया तो भीमरूप धारण किया। जिसका वरण करे उसके सामने वो प्रगट हो जाए। इसी रूप में परचा है। खलील जिब्रान को किसी ने पूछा, प्रेम की व्याख्या करो। तो कहे, प्रेम कुछ देता नहीं। देने का अवसर आता है तो खुद को ही दे देता है।

चौथा अवलोकन पीर का; अनुभव करते-करते अंतःकरण प्रमाण मिल जाए और कोई व्यक्ति पामर नहीं, परम लगे तब उसे पीर समझना। हमारे अंतःकरण की प्रवृत्ति हमें गवाह दे ये परम है, वो पीर है। अथवा तो जो पूर्ण है, कोई भी कमी नहीं वो पीर है। हमारे यहां कहा जाता है, परमात्मा पूर्ण है, हम अपूर्ण है। लेकिन इसमें अपवाद भी है। परमात्मा ने जिसका वरण किया वो पूर्ण है।

पांचवां अवलोकन पीर का; जिसको आप कोई भी पद पर प्रतिष्ठित करो पर असंग बना रहे वो पीर। उसको व्यासपीठ पर बिठा दो, महंत की गादी पर बिठा दो, राज्यसत्ता पर बिठा दो, राष्ट्रीय सन्मान दे दो, दुनियाभर के खिताब दे दो लेकिन कोई पद-प्रतिष्ठा मिलने के बाद भी असंग रह पाए वो पीर है। हमारी गंगासती बोली-

सुखनी ने दुःखनी जेने आवे नहीं हेडकी।

न सुख छुए, न दुःख। हमारे यहां तीन वस्तु है- दुःख, आपत्ति और विपत्ति। तीनों में से कोई भी वस्तु जिसे छू न सके उसीको पीर समझना। दुःक सब के जीवन में होता ही है। 'सुखस्य दुःखस्य न कोऽपि दाता।' नरसिंह मेहता कहते हैं, 'सुख-दुःख मनमां न आणीए रे।' मात्राभेदे सुख-दुःख होते ही हैं। कभी-कभी प्रारब्ध के कारण, संचित कर्मों के कारण सुख-दुःख हम लेकर आते हैं। आपत्ति उसे कहे जो अचानक आ जाए। भूकंप, सुनामी, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, अकस्मात आपत्ति है। विपत्ति अलग प्रकार की अनुभूति है। जब भाषा में शब्द आते हैं तो लगते हैं पर्याय। लेकिन हर शब्द के सूक्ष्म अर्थ बिलग होते हैं। मेरे तुलसीदासजी विपत्ति की परिभाषा करते हैं-

कह हनुमंत बिपति प्रभु सोई।

जब तव सुमिरन भजन न होई।।

सीता की विपत्ति विशाल है। महाराज! 'बिनयी कहे भल दीनदयाला', इसका जिक्र मत करवाओ। हम दुःख से प्रभावित हो जाते हैं। लेकिन जो व्यक्ति भजन कर के उपर उठ जाए वो पीर है। रामदेवपीर बाबा की परंपरा में नाम दूसरा कोई नहीं, रामनाम।

तो ये पांच अवलोकन आपकी स्मृति में रहे तो रखना और इन अवलोकन के मुताबिक ये बात कहीं दिखे तो उसे पीर मानना। तो रामदेवपीर की समाधि की वाङ्मयी पूजा कर रहे हैं। इस महापुरुष ने विश्व को सरल उपदेश दिये हैं। इनमें से कुछ फ़रमान लूं। कल नव फरमान रखे थे, अब उसके आगे के।

दसवां फ़रमान है, एक आसन पर अजपाजाप जपो, अंतःकरण रखो निष्काम। इन्द्रियों का दमन करोगे तब पहचानोगे आतमराम। बहुत सीधा-सादा उपदेश है। एक आसन पर बैठकर; उठ-बैठ नहीं करना। ये रजोगुणयुक्त प्रवृत्ति है। अजपाजप के कई अर्थ होते हैं। ये शास्त्रीय बात है। सीधा-सादा अर्थ ये है कि वो जप करे फिर भी भान रखे कि मैं जप नहीं कर रहा हूं, मेरा गुरु करवा रहा है। मेरा बुद्धपुरुष मुझे अजपाजप के लिए सचेत कर रहा है। ये अनुभूति की बात है। बाप! जप करो तो 'भजन करे निःकाम।' निष्काम बनकर करो। गोस्वामीजी ने 'सुन्दरकांड' के मंगलाचरण में लिखा है-

भक्तिं प्रयच्छ रघुपुङ्गव निर्भरां मे।

कामादिदोषरहितं कुरु मानसं च।।

इन्द्रियों का दमन यानी संयम करना। 'संयम नियम सिलिमुख नाना।' भगवान के हाथ में जो तीर है वो संयम-नियम है, ऐसा 'लंकाकांड' में लिखा है। रामदेवपीर बाबा के हाथ में भी संयम-नियम का तीर है। भूख-प्यास ऐसे छः लक्षण शास्त्र में प्राण के बताए लेकिन काबू रखना ये हो गया संयम। तब भीतरवाला राम अनुभव में आएगा।

आगे का फ़रमान, दिल की भ्रांति दूर करनी; त्याग करना मोह, मान, अभिमान। कहते हैं, मृत्यु के सिवाय सब झूठ है। मृत्यु ही सत्य है। बड़ा क्रांतिकारी सूत्र दिया। रामदेवजी बाबा कहते हैं, मैं मेरे साधकों को कहता हूं, इसी सत्य को पकड़ना। आगे कहते हैं, संपत्ति के अनुसार कार्य करना और कीर्ति की भूख नहीं रखना, महानता का मोहत्याग करोगे तो चले जाएंगे भवदुःख। हमारे पास जितनी क्षमता हो इतनी सेवा करे। और प्रतिष्ठा की भूख मत रखो। हम शरीरधारी लोगों को छः प्रकार की भूख होती है। पहली आहार की भूख। प्राणीमात्र को आहार की भूख होती है। दूसरी वासना की भूख, भोग की भूख सब की एक प्रकार की अनिवार्यता है। तीसरी सुख की भूख। धन की आलोचना न करे। मेरी व्यासपीठ सदा कहती है, नर बन के कमाओ और नारायण बनकर बांटो। ये स्वाभाविक भूख है। द्रव्य आपको मिलता है उसके कई कारण है। पहला कारण, आपके नीतिपूर्वक प्रयत्नों से, पुरुषार्थ से। दूसरा कारण, तुम्हारे प्रारब्ध और किसी बुद्धपुरुष के आशीर्वाद से। तीसरा कारण, अनीति, छल, कपट, प्रपंच से। जो प्राप्त करता है वो बांटेगा तो उसकी आलोचना नहीं है। चौथा, कीर्ति की भूख। कोई धन नहीं लेते तो भी कीर्ति की भूख होती ही है।

रामदेवजी बाबा कहते हैं, मैं बड़ा, प्रतिष्ठित, ये अहंकार छोड़ दोगे तो भव का दुःख मिट जाएगा। आगे का फ़रमान; सद्वर्तन और शुभाचार करना; बोलने से पहले विचार करना; स्वाश्रय से जीवन बिताना अलखधणी का आधार लेकर। गांधीजी कहते हैं, जात महेनत-स्वाश्रय।

आगे कहते हैं, निःस्वार्थी और समभावी जिसको वचन में पूर्ण विश्वास। एक चित्त से भक्ति करे उसे हरि का दास जानना। जनसेवा में जीवन बिताये वो सेवाधर्मी कहलाये। उंच-नीच का भेद न रखे ऐसे समधर्मी पुजाता है। मैं तो कहता हूं, जगत में जो दूसरे को हल्का समझे उसके समान हल्का कोई नहीं है। तुम यदि श्रेष्ठ हो तो तुम्हें कोई हल्का दिखना ही नहीं चाहिए। गंगासती बोली-

जाति रे पांति नहीं हरि केरा देशमां रे...

भगवान बुद्ध पचीस सौ साल पहले विहार कर रहे थे। उनको प्यास लगी। गांव के बाहर कुंआ था उसमें पांच-सात साल की दलित कन्या पानी सींच रही थी। वहां गये और पानी मांगा। दलित कन्या को बुद्ध का चेहरा देखकर लगा कि ये उच्चवर्ण का महापुरुष लगता है। मैं यदि पानी पीलाउं, बाद में उसे पता लगे कि समाज में जो निकृष्ट माने जाते हैं उसका पानी पीया तो उसे पीड़ा होगी। कन्या ने अपनी पहचान दी कि मैं दलित कन्या हूं, निकृष्ट जाति की हूं। तो बुद्ध ने कहा, मैंने तेरी जाति नहीं मांगी, पानी मांगा है। ये उंच-नीच का भेद मिटा दे उसे हरि का दास समझो, ये रामदेवपीर बाबा ने कहा।

सोलहवें फ़रमान में आगे बोले, मेरा भगत उसे समझना जिसको मेरी भक्ति में हो विश्वास। प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष उसको मेरा परचा मिलेगा। कोई सच्चे तो कोई झूठे, ऐसी वृत्ति से संसार चलता है। परवृत्ति में तो चले बीर नर-नारी। रामदेवजी बाबा की कथा सुनाते हैं उनको मिलने गये तो उन्होंने कहा, कथा में से अच्छा सूत्र मिला कि मैं इस गांव का कहां हूं? दो मूर्ख लोग मिले। सूरज था तो एक ने कहा, चांद है। दूसरे ने कहा, सूरज है। दोनों मारपीट करने लगे! और तीसरे को पूछा कि ये चांद है या सूरज? तीसरे ने कहा, मैं दूसरे गांव का हूं, मुझे क्या पता? कोई सच्चा-झूठा वाद-विवाद करे तो ये सूत्र ले लेना, मैं इस गांव का कहां हूं? उन्नीसवां फ़रमान, भक्ति के बहाने हो अनाचारी या व्यभिचारी वो जन हमारे नहीं। उसे पाट पूजा का नहीं अधिकार। दंभ और पाखंड से दुनिया को आगाह कर दिया। बीसवां फ़रमान, भक्ति में और निष्काम कर्म में जो-जो भक्त है वो मेरे हैं। इक्कीसवां फ़रमान, सभा में सुनना सब का, रहना मेरी आज्ञा के अनुसार। बाईसवां फ़रमान, नव को वंदन, नव को बंधन जो हो नव अंका। नवधा भक्ति जिस नर को मिले, मुक्ति को पाए नरबंका। नव को वंदन यानी नवनाथ। नव यानी नवीन, 'दिने दिने नवम् नवम्।' जहां भी कोई नई चेतना निकले, नये शुभ विचार कहीं से मिले, 'आनो भद्रा क्रतवो यन्तु विश्वतः।' उसको वंदन करना। नव लोगों का आश्रय कुबूल करना। आश्रय यानी हम किसी ऐसी सत्ता के पास है जो हमें स्वातंत्र्य प्रदान करे। आश्रय कोई बंधन नहीं है। दूसरे का आश्रय करोगे तो बंधन हो जाएगा। इसीलिए पुष्टिमार्ग में शब्द आया 'अन्याश्रय।' तुलसीदासजी कहते हैं, 'श्री रामचंद्र शरणं प्रपद्ये।' 'हनुमानचालीसा' में लिखा है, 'और देवता चित्त न धरई, हनुमंत सेइ सर्व सुख करई।' 'रामायण' में लिखा है, श्रेष्ठ से थोड़ा डरना चाहिए, जो हमें अभय बना दे।

नव बंधन की स्पष्टता नहीं है। लेकिन नव बंधन है। एक, गुरुबंधन। दूसरा, गुरु का दिया हुआ मंत्रबंधन। मंत्र कभी बदलना मत। डोंगरेबापा कहा करते थे, तीन वस्तु कभी बदलना मत- मंत्र, मूर्ति, माला। कोई एक मंत्र पकड़ो, ये मंत्र मुक्ति दिलाएगा। माला टूट जाए, बिगड़ जाए, पुरानी हो जाए तो बदलो बाकी माला मत बदलो। माला मालामाल कर देगी। गुरु ने तुम्हें कोई मूर्ति दी हो तो उसे मत बदलना। तीसरा; गुरु की दी हुई माला का बंधन। योग्यता हो और गुरु माला दे तो वो भवपाश से मुक्ति समान है। चौथा, गुरु द्वारा सेव्यरूप का बंधन। पांचवां, गुरुदत्त शास्त्र का बंधन। हमारे दादाजी विष्णु देवानंदगिरिजी, जो कैलासपीठ के पीठाधीश थे, उन्होंने एक पोस्टकार्ड लिखा था कि बच्चों को कहना, 'रामचरित मानस' और 'भगवद्गीता' छोड़े ना। छठ्ठा, गुरु कोई वस्तु दे वो बंधन। एक शे'र है-

शाहों की निगाहों में अजब तासीर होती है।
निगाहें लुत्फ़ से देखे तो खाख भी अकसीर होती है।

सातवां, गुरुवचन का बंधन। गंगासती ने कहा, 'सद्गुरु वचनोना थाव अधिकारी।' आठवां, गुरु की स्मृति में आंख में आंसू आए वो भी बंधन है। साधक के लिए आश्रय और अश्रु दो ही संपदा है। नववां, गुरुस्थान का आश्रय। कभी-कभी किसी कारणवश गुरु की बात न कुबूल कर पाओ तो चलेगा पर गुरुस्थान का त्याग न करना।

तेइसवां फ़रमान; दान दे लेकिन रहे अयाचक, दूसरे की आशा न रखे, आठ प्रहर जो आनंद में रहे उसे जानना मेरे अंतर के निकट। चौबीसवां फ़रमान, मैं हूं सब का अंतर्यामी। निजभक्त का रक्षक, धर्म के कारण धारण करता हूं विधविध अवतार। रामदास कहे, सुनो संतजन, हरा घोड़ा, भमरभाला पीर ने दी परमपद की पहचान। समाधि के समय दी आज्ञा चौबीस फ़रमान।

तो कुछ संवाद के रूप में मेरी व्यासपीठ बात कर रही थी। अब हम थोड़ा आगे बढ़ें। 'रामचरित मानस' के सात सोपान में अब दूसरा सोपान 'अयोध्याकांड' शुरू होता है। 'अयोध्या' का अर्थ संतों ने किया है, जहां युद्ध नहीं है वो ही अयोध्या। जिसके जीवन में, समाज में, परिवार में, राष्ट्र में परस्पर युद्ध न हो तो वो अयोध्या है, ऐसा अर्थ संतों से सुना। डोंगरेजीबापा ने कहा था, कलह के बिना जिसकी काया है वो अयोध्या। 'बालकांड' बचपन का कांड और 'अयोध्याकांड' यौवन का कांड। इसीलिए इस कांड से युवानों को विशेष मार्गदर्शन प्राप्त होता है। मंगलाचरण में शिव का स्मरण है इस कांड में। इसका मतलब है, युवानी में शिव का विशेष सुमिरन करना चाहिए। क्योंकि शिव का जिस रूप में वर्णन किया वो युवानी को मार्गदर्शन करता है। गोस्वामी कहते हैं, हे युवान, युवानी में तेरी शादी होगी। हिमाचलपुत्री पार्वती शिव के अंक में वामभाग में बैठती है, इसका मतलब ये हुआ कि उनका दांपत्य प्रसन्न है। तेरा दांपत्य प्रसन्न हो। आज दांपत्य बहुधा बिगड़ता जा रहा है। ये समस्या है विश्व की।

भगवान शिवजी की मस्तक पर की जटा से गंगाजी बहती है। हे युवान, युवानी में तेरी बुद्धि भक्तिमय रखना, भाव प्रेममय रखना ये संकेत है। हे युवान, भगवान शिवजी के भाल में बालचंद्र है। भगवान शिव के साथ अनादिकाल से बीज जुड़ी हुई है। रामदेवपीर बाबा बार बीज के धणी है। मेरा महादेव बार बीज का बाप है। शिवजी के भाल में वक्रचंद्र है। हे युवान, तेरा मस्तिष्क, दूज के चांद की तरह प्रकाशित रखना। पूनम का चांद होगा तो क्षयतिथि आने से कला में कटौती होगी। दूज का चांद विकास का प्रतीक है। पूर्णिमा के चांद में कलंक है, दूज का चांद निष्कलंक है। तेरा भाल नकलंक रखना। भगवान शिव ने कंठ में विष रखा है। हे युवान, युवानी में तुझे विष पीना पड़ेगा, विषम परिस्थिति का सामना करना पड़ेगा। उसे पेट में मत उतारना वर्ना जल जाएगा। बमन मत करना। तेरा परिवार दुःखी बन जाएगा। विषम परिस्थिति को तेरे कंठ का आभूषण बनाके निष्कलंक हो जाना। जीव को शिव होने की ये सब प्रक्रिया है। गोस्वामीजी ने स्पष्ट कहा है, मनुष्यजीवन में आनेवाली विषम परिस्थिति ही विष है। भस्म ही जिसकी विभूति है, ऐश्वर्य है। युवान, तू स्मरण रखना, ये शरीर भस्म होनेवाला है। यद्यपि मरने की बात मत करना पर भान रहे। शिवजी की वंदना पहले मंत्र में कर के गोस्वामीजी ऐसे संदेश देते हैं।

दूसरे मंत्र में भगवान राम को राज्याभिषेक होने की उद्घोषणा हो गई और दूसरे ही दिन उसको वनवास हो गया फिर भी उनके चेहरे पर न प्रसन्नता आई, न ग्लानि आई। दोनों में मुखकांति वैसी ही रही, ऐसे राघवेन्द्र को प्रणाम किया। तीसरे मंत्र में सीतारामजी की संयुक्त वंदना हुई। और इस कांड का पहला दोहा-

श्री गुरु चरन सरोज रज निज मनु मुकुरु सुधारि।
बरनउँ रघुबर बिमल जसु जो दायकु फल चारि।।

'हनुमानचालीसा' में भी ये पहला दोहा है। 'अयोध्याकांड' युवानी का कांड है इसीलिए गोस्वामीजी कहना चाहते हैं, हे युवान, युवानी में किसी गुरु की

जैसे एक शरीर में पंचतत्त्व होते हैं। वैसे पीर बनता है ये पांच विशेष तत्त्वों से। एक, जहां कोई परदा न हो वो पीर। जहां कपट नहीं, फ़रेब नहीं, छल नहीं, दंभ-पाखंड नहीं वो पीर। जहां कोई परदा न हो उसे पीर समझना। दूसरा, जहां प्याला है वो पीर। ये प्याला ओर कोई नहीं, प्रेम का प्याला है। जहां प्रेम का प्याला है वो पीर। तीसरा, जहां परचा है वो पीर है। परचा का मतलब है, जो पूर्णरूप से जगत के सामने प्रगट हो जाए वो पीर। चौथा, अनुभव करते-करते अंतःकरण प्रमाण मिल जाए और कोई व्यक्ति पामर नहीं, परम लगे तब उसे पीर समझना। पांचवां, जिसको आप कोई भी पद पर प्रतिष्ठित करो पर असंग बना रहे वो पीर। कोई पद-प्रतिष्ठा मिलने के बाद भी असंग रहे पाए वो पीर है।

चरणरज से तेरे मन के दर्पण को रोज स्वच्छ करना क्योंकि मन कलुषित करने के अवसर जुवानी में बहुत आते हैं। जुवानी में बुद्धपुरुष का संग हो ऐसी मौसम है। गुरु तो कभी भी मिलता है पर देर से मिलेगा तो लगेगा इतना समय हम आनंद से रहित रहे। जुवानी में बुद्धपुरुष का आश्रय करो तो जुवानी में आए सुख-दुःख में वो तुम्हें संतुलित रखेगा।

जब से राम ब्याहकर अयोध्या लौटे हैं तब से अयोध्या में रोज नया आनंद, निरंतर सुख की वर्षा हो रही है। रिद्धि-सिद्धि-संपत्ति की नदियां अयोध्यारूपी समुद्र में अपने आप को उडेलने लगी। बाप! वर्षा से हम जीवित रहते हैं लेकिन अतिवृष्टि एक आपत्ति है। अनराधार सुख की सृष्टि से ही राम वनवास का जन्म हुआ है, इस सत्य को न भूले। सुख भी सम्यक् होना चाहिए। विवेकानंदजी कहते हैं, कोई भी चीज हद से ज्यादा बढ़ जाती है तो ज़हर बन जाती है। तुलसीजी की ये चौपाई मुझे सोचने पर मजबूर करती है, सब प्रकार से सब लोग अयोध्या में सुखी थे। इस दुनिया में सब प्रकार से सब लोग कभी सुखी नहीं होते। एक प्रकार का चमत्कार है कि सब प्रकार से सब सुखी है कारण है उसका सब के केन्द्र में राम है, हराम नहीं।

एक बार दरबार में बैठे दशरथजी ने सहज स्वभाव से दर्पण में देखकर मुकुट ठीक किया। इससे पहले सब लोग दशरथजी की प्रतिष्ठा का गायन कर रहे थे। मेरे भाई-बहन, दुनिया में सब प्रकार की वाह-वाह होती हो तब आदमी अपनी आंखों से देख ले कि मैं प्रतिष्ठा के लायक हूं या नहीं? दर्पणदर्शन निजदर्शन करवाता है। समृद्धि तो लंका में भी है। देवता लोग भी रावण की स्तुति करते थे लेकिन करुणा ये थी कि दशानन ने दर्पण में निजदर्शन नहीं किया था! अयोध्या में दर्पण है, लंका में केवल दर्प है, यानी अहंकार है। ये है दशाननी और दाशरथी विचारधारा का फ़र्क।

राजा ने कान के पास हुए सफेद बाल दर्पण में देखा। राजा ने सोचा, मेरा मुकुट, ताज, सिंहासन कल गिर जाए इससे पूर्व योग्य वारसदार पे ये मुकुट रख दूं। महाराज को समर्पण का विचार निजदर्शन से आया। मैं मेरे राम को युवराजपद दे दूं। कान के पास सफेद बाल आए तब समाज के सभी दशरथों को अपने राम को धीरे-धीरे सोंपने की शुरूआत करनी चाहिए, ऐसा संकेत यहां है। हमारे पास स्थूलरूप में मुकुट न हो पर बच्चा लायक हो जाए तब निवृत्ति का विचार करना। दशरथजी ने निर्णय कर लिया कि राम को गादी सौंप देनी चाहिए। दशरथजी गुरुद्वार जाकर गुरु से प्रणाम करके कहते हैं, राम सब प्रकार से लायक है, आप आज्ञा दे तो युवराजपद राम को सोंप दिया जाए। वशिष्ठजी ने कहा, राजन्, राम को राज देना ही है तो विलंब न करो। राम को युवराजपद पर नियुक्त करना है तो घडी देखने की जरूरत ही नहीं। जब राम को युवराजपद दो वो ही घडी मंगल। कोई भी बुद्धपुरुष ऐसा ही करेगा। किसी को देने की बात आए तब मुहूर्त मत देखना, दे दो। समर्पण के लिए सब मुहूर्त शुभ होते हैं। वशिष्ठजी ने तो कहा, जब चाहो कर लो लेकिन दशरथजी ने कल पर बात टाली और वहीं रामराज्य चौदह साल दूर चला गया!

दो वरदान मांगे कैकेयी ने। राम का वनवास, भरतजी को राजगादी। सुबह में राम, लक्ष्मण, जानकी वन का साज सजकर सुमंत के रथ में निकले हैं। अयोध्या शोक में डूबी है। शृंगबेरपुर पहुंचे। भगवान राम-लक्ष्मण-जानकी केवट की नौका में बैठकर सामने तट गये। वहां से प्रभु भरद्वाज ऋषि के आश्रम में आये। वहां से वाल्मीकि के आश्रम में आये। फिर चित्रकूट पहुंचे। सुमंत अकेले लौटे और दशरथजी ने रामविरह में प्राण त्याग किया। भरतजी ननिहाल से आये। पिता की अंतिमविधि हुई। अब राज्य का क्या हो? बड़ी सभा मिली और निर्णय हुआ, हम सब चित्रकूट जाए। भरत ने कहा, मैं पद का आदमी नहीं, पादुका का आदमी हूं; सत्ता का आदमी नहीं, सत् का आदमी हूं। पूरी अयोध्या चित्रकूट जाती है। वहां दशरथजी का शोक व्यक्त किया। जनक महाराज भी आये। दो नगर बस गये चित्रकूट में। सभा पर सभा हुई। आखिर में निर्णय हुआ, भरत पिता की आज्ञा मानकर चौदह साल राज करे और राम चौदह साल वनवास भोगकर फिर जाए। भरतजी कुबूल हुए। प्रभु ने कृपा कर के पादुका दी। भरतजी पादुका लेकर अयोध्या आए। जनकजी सब व्यवस्था कर के मिथिला गए। पादुका को सिंहासन पर रखकर पूछ-पूछकर भरतजी राज्यकार्य करने लगे। भरतजी ने भी वनवासीरूप धारण किया। नंदिग्राम में कुटिया बनाकर चौदह साल का वनवासीरूप का व्रत लिया। भरतजी की महिमा गाकर तुलसीजी 'अयोध्याकांड' पूरा करते हैं।

रामदेवपीर ने रामरूप में सेवा की, देवरूप में सुमिरन किया और पीररूप में परम का साक्षात्कार किया

रामकथा के आधार पर, 'मानस' के आधार पर हम रामदेवजी बाबा की सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा केन्द्रस्थ बनाये हुए हैं, वो भी संवाद के सूर में। आगे बढ़ें। बाकी सब उपसंहार में कहूंगा। कुछ चिठ्ठियां मुझे कल मिली। उसमें किसी श्रोता ने पूछा है कि भगवान रामदेवजी बाबा चेतन समाधि लेकर तिरोहित हो गये लेकिन उसके घोड़े का क्या? घोड़े ने समाधि ली? ऐसी बात मैंने पढ़ी कि घोड़ा भी अंतर्धान हो गया था। अब ये श्रद्धा का विषय है। उसमें ऐसा बताया कि घोड़ा वहां चर रहा था। और जब ये बात यहां आई कि घोड़ा चर रहा था तब सबको लगा कि बात तो जरा देखनी पड़ेगी। सब घुड़साल में चले जाते हैं और उसमें घोड़े का दर्शन नहीं कर पाते। और दरजीभगत जिसने कपड़े का घोड़ा बनाया था, वो घुड़साल में था। बाबा जिस पर सवार होते थे वो घोड़ा तिरोहित हो गया, ऐसी घटना छपी है। फिर उसी कपड़े के घोड़े को समाधि के पास रखा गया जिसकी आज भी लोग पूजा करते हैं। तो इतनी माहिती मुझे प्राप्त हुई। बाकी श्रद्धा का विषय है।

यदि आज के संदर्भ में मुझे पेश करना है तो मैं ये कहूंगा कि घोड़ा यानी मन। घोड़े यानी उपनिषदों की दृष्टि में इन्द्रियां। आदमी की मृत्यु तब घोषित की जाती है, जब उसकी इन्द्रियां बिदा लेती है। श्रद्धाजगत में ये जो हकीकत है कि बाबा ने जीवित समाधि ली। और जो समाधि में चले जाते होंगे उसकी भी इन्द्रियां तिरोहित हो जाती होगी। और जो समाधि में चले जाते हैं उसका मनरूपी घोड़ा तिरोहित हो जाएगा। आदमी अमन हो जाएगा। रामदेवजी बाबा ने अवतार लिया भैरवा को मारने के लिए। जो जागने की कगार पे थे उसको विशेष जगाने के लिए। जो नहीं जागे थे उसकी नींद उड़ाने के लिए। जहां छूताछूत, तिरस्कार, धर्म की वाडाबंधी थी; सामाजिक समरसता नहीं थी, दलित-उपेक्षित की कोई दरकार नहीं करता था तब आपने आके बड़ा क्रांतिकारी कार्य किया, जिसकी चर्चा मैंने बार-बार की। रामदेवजी बाबा ने सेवा की, स्मरण किया और समाधि प्राप्त की। ये तीन अवलोकन व्यासपीठ के हैं। मूल बात ये है कि इन्द्रियरूपी घोड़ा तिरोहित हो गया।

इस धरा पर रामदेवजी बाबा का आना, उसके बारे में मेरे 'मानस' में, मेरे हृदय में जो अवलोकन है वो मेरी जिम्मेदारी से मैं पेश कर रहा हूं। व्यक्ति तीन प्रकार से प्रेम करता है। प्रेम करेगा तो वो सेवा करेगा। प्रेम सेवा करवाएगा। शरीरगत प्रेम (देहगत प्रेम), मनोगत प्रेम, आत्मगत प्रेम। शरीरगत प्रेम; शरीर जिस प्रेम में केन्द्रस्थान में है, ऐसा प्रेम सेवा करवाएगा। जैसे पति में शरीरगत प्रेम है तो वो पत्नी की सेवा करेगा। पत्नी को शरीरगत प्रेम है तो वो पति की सेवा करेगी। भाई को शरीरगत प्रेम है तो वो दूसरे भाई से लड़ेगा नहीं। माता-पिता का संतान के प्रति शरीरगत प्रेम है तो वो संतान की रक्षा करेंगे। रामदेवजी बाबा की महोब्बत, भाईचारा, प्रेम, भक्ति, जब वो शरीर धारण करके रहे तो उन्होंने बहुत सेवा की। और सेवा इसी रूप में कि भेद मिटाए; समरसता पैदा की; अन्नदान दिया; सोये हुए को जगाया; मरे-मरे जीते थे उनको पुन: चैतन्य प्रदान किया। शरीरगत प्रेम का ये स्वभाव है।

मनोगतप्रेम सुमिरन कराता है। जब साधक मनोगत प्रेम करता है तब वो सुमिरन करता है। शरीरगत प्रेम में सेवा होती है इसलिए आप मालाजी बनायेंगे, जारीजी धारण करेंगे, आप वैष्णवों की सेवा करेंगे। मनोगत प्रेम में सुमिरन है। मुझे लगता है, बाबा मनोगत स्थिति में कोई परमतत्त्व का सुमिरन करते होंगे। कई लोग शरीर से सेवा नहीं कर सकते लेकिन मनोगतप्रेम बहुत करते हैं, सुमिरन बहुत करते हैं। इसीलिए नानकदेव की वो पंक्ति प्यारी लगती है कि हे मन! मनोगत प्रेम के द्वारा तू सुमिरन कर। बुद्धपुरुष की सेवा हम करते हैं वो शरीरगत सेवा नहीं करते, मनोगत सेवा करते हैं। सुमिरन करते हैं। शिष्यों को अकारण याद करना गुरुजनों का मनोगत प्रेम है। पहुंचे हुए बुद्धपुरुष का मनोगत प्रेम उसके आश्रितों का सुमिरन करवाता है। भगवान कृष्ण जो पूर्ण परमात्मा है वो शरीरगत प्रेम में है तब तक गायों के पीछे दौड़ते हैं, बच्चों के साथ खेलते हैं। लेकिन वो ही परमात्मा हमें मनोगत प्रेम की अवस्था सिखाते हैं तब वो सिमरन करते हैं गोपीजनों का, व्रजांगनाओं का, नंद और यशोदा का। भगवान राम मनोगत प्रेम की भूमिका में जाते हैं तो चित्रकूट में बैठे-बैठे-

भरत सरिस कर राम सनेहु।
जग जपु राम राम जपु जेहु।
सुमिरि मातु-पितु परिजन भाई।
भरत सनेह सीता सेवकाई।

आत्मगत प्रेम; मनोगत प्रेम के बाद आत्मगत प्रेम की अवस्था आती है। वो प्रेम साक्षात्कार करवा देता है। घोड़े की मुझे खबर नहीं पर रामदेवजी बाबा के बारे में जो अवलोकन है तो वो ये है कि वो शरीरधर्मा है तब तक लोगों की बहुत सेवा करते हैं। वो ही रामदेवजी बाबा मनोगत प्रेम में सुमिरन करते हैं नकलंक का, अलख का, परमतत्त्व का, द्वारिकाधीश का अवतार होते हुए भी। जैसे राम ब्रह्म है फिर भी भरत का सुमिरन करते हैं। आत्मगत प्रेम में वो साक्षात्कार कर लेते हैं और परमसमाधि को पाते हैं जिसको जीवित समाधि कहते हैं।

ये तीन प्रकार के प्रेम है, उसी तरह तीन प्रकार के काम भी होता है। काम और प्रेम आकर्षित करनेवाले तत्त्व हैं पर फिर भी काम बहुत नीचे का पायदान है। कई लोगों का शरीरगत काम होता है, कई लोगों का मनोगत काम होता है। शरीरगत काम आदमी को भोगों में ले जाता है, मनोगत काम आदमी को भाव में ले जाता है। आत्मगत काम आदमी को सबसे उपर उठाता है। शरीरगत प्रेम गुलाब का पौधा है। मनोगत प्रेम फूल होता है और आत्मगत प्रेम केवल खुश्बू होती है, महक होती है। पौधे को अपने आंगन में या गमले में कैद करते हैं। शरीरगत प्रेमवाला आदमी दूसरे को मजबूर करता है, वश में करता है। मनोगत स्थिति में फूल केवल उसीके आंगन में नहीं होता, शायद वो स्वयं किसी मंदिर में फूल चढ़ाता है अथवा तो बहन अपने जुड़े में लगाती है। हमारे आज़ाद भारत के प्रथम वडाप्रधान आदरणीय जवाहरलाल नेहरु सदैव गुलाब अपने शर्ट पे लगाते थे। ये मनोगत वस्तु है। आत्मगत प्रेम खुश्बू है। आप उसे तोड़ नहीं सकते, आपके आंगन में बांध नहीं सकते। तो भगवान रामदेवजी के जीवन में सेवा है, सुमिरन है, साक्षात्कार है।

कोई भी बुद्धपुरुष सेवा करेगा। सेवा की अपनी-अपनी रीत होती है। जब रमण महर्षि को अरुणाचलम् में पूछा गया कि आप इतने बड़े संत, आपको नेत्रयज्ञ करना चाहिए, गायों की सेवा करनी चाहिए। तब उन्होंने कहा, मैं अरुणाचलम् की गुफा में जो कर रहा हूं वो सेवा ही है। ठाकुर ने कभी दक्षिणेश्वर नहीं छोड़ा लेकिन वो जो कर रहे हैं, वो सेवा हैं। बुद्धपुरुष अपने ढंग से सेवा करता है। यद्यपि

रामदेवपीर बाबा ने घोड़े पर बैठकर सेवा की, इसका मतलब वो बहुत सक्रिय है। धर्म-धजा को लिए हुए, संयम-नियम के तीर अथवा तो भाले को लिए हुए, मन को नियंत्रित करते हुए वो सेवा में लगे और परम का सुमिरन और फिर समाधि, जिसको साक्षात्कार कहते हैं। तो इस प्रकार से मेरी दृष्टि काम कर रही है कि सेवा, सुमिरन और साक्षात्कार केवल तीन अध्यायों में हम उनके आदि, मध्य और अंत का दर्शन कर सकते हैं। रामदेवपीर ने रामरूप में सेवा की, देवरूप में सुमिरन किया और पीररूप में परम का साक्षात्कार किया। ये है रामदेवपीर।

तो बाप! कोई भी एक विषय बन जाता है, जिसपे हम भगवद्चर्चा कर लेते हैं। कल संक्षेप में 'अयोध्याकांड' को विराम दिया। अब तीसरा कांड, 'अरण्यकांड' शुरू होता है। भगवान राम चित्रकूट को छोड़कर आगे यात्रा करते हैं। वहां गोस्वामीजी कहते हैं, प्रभु ने सुंदर लीला की। एकबार प्रभु चित्रकूट की फटिक शिला पर बैठे हैं। लक्ष्मणजी कंदमूल फल लेने गये हैं। राम और सीता दोनों अकेले हैं। कोई मर्यादा नहीं टूट रही है। एक प्रेमपूर्ण प्रसन्न दांपत्य है। भगवान राम अपने हाथों से पुष्प चुनके फूलों के गहने बनाते हैं और जानकी का शृंगार करते हैं। फूल का संस्कृत और हिन्दी में नाम है सुमन। कोई आदर्श पुरुष फूल से अपनी पत्नी का शृंगार करे, मर्यादा न टूटती हो तो कोई पाप नहीं है; अच्छा धर्म है। लेकिन फूल का अर्थ सुमन, पवित्र मन होना चाहिए। युवानों को मार्गदर्शन मिले ऐसा प्रसंग है। युवक भाई-बहन, मर्यादा नहीं टूटनी चाहिए लेकिन प्रेम से जीना तो चाहिए। राम स्वयं अपनी पत्नी का शृंगार करते हैं।

बहुत आदर से रामजी जानकीजी को आभूषण पहनाते हैं। कोई सामान्य बुद्धि से देखे तो लगे कि ये अवतार है क्या? पति-पत्नी के जीवन में जैसे सोपान बढ़े, ऐसा प्रेमपूर्ण होना चाहिए ये बताते हैं। एकांत है, मर्यादा नहीं टूटती है, तो पति-पत्नी प्रेमालाप करे तो ये रामकथा का एक अंग बन जाएगा। आप रामकथा जी रहे हैं। कृष्णमूर्ति 'परमात्मा' शब्द का उपयोग कम करते हैं। वो कहते हैं, मैं बगीचे में किसी युवक-युवती को भाव से, पवित्र मन से, मर्यादा से एक-दूसरे के भाव में डूबते देखता हूं तभी मुझे उसमें परमात्मा का दर्शन होता है। और कोई दो व्यक्ति प्रेम से बात करे तो हम सह भी नहीं सकते! आदर्श दांपत्य की एक सीख भगवान अपने जीवन में से हमें देते हैं। मर्यादा नहीं टूटनी चाहिए। प्रेम स्वयं मर्यादा का रक्षण करता है। मोह और केवल कामना हो तो फिर उच्छृंखल बन जाता है।

इन्द्र का बेटा जयंत चित्रकूट में घूमने आया और रामजी सीताजी का शृंगार कर रहे हैं, ये देखकर इन्द्र के बेटे को लगता है कि ये तो कामी लगते हैं। भगवान राम कामिन्ह का काम बढ़ाते हैं और धीरजवान की धीरता दृढ़ीभूत करते हैं। लेकिन इन्द्र स्वर्ग का मालिक है। इतने बड़े बाप का बेटा राम-सीता को भाव में देखकर उसको कुबुद्धि सूझी। इन्द्र के बेटे ने भगवान के बल नापने की कोशिश की। उसने कौए का रूप धारण किया और सीयाजु के चरण में चोंच मारकर भागा। चंचूपात करके भागा। किसी ने पूछा, इतने बड़े बाप के बेटे को तुलसी ने कौआ क्यों बनाया? तो तुलसी ने जवाब दिया, दूसरे के पवित्र और प्रसन्न दांपत्य में मूढ़ता के कारण जो चंचूपात करे वो कभी हंस नहीं बन सकता, कौआ ही बन सकता है। हम इन्सान है। दूसरे के जीवन में अकारण चंचूपात मत करना। आपको किसी की बात अच्छी न लगे तो कलवाला सूत्र, मैं इस गांव का कहां हूं? लेकिन किसी के पवित्र दांपत्य में दीवारें मत बनाना। यदि हम ये करने गए तो कितने ही सुंदर वस्त्र में हम हो, हम कौए हैं। भगवान राम ने देखा, माँ जानकी के चरण में चंचूपात के कारण रुधिर की धारा निकली है। और भगवान ने एक तिनका लेकर उसीको बाण बनाया और मंत्र के द्वारा ये बाण ब्रह्मशर बन गया और कौए के पीछे छोड़ दिया।

भगवान के कालरूपी धनुष से छूटा प्रचंड बाण इन्द्र के बेटे के पीछे जा रहा है। इन्द्र के पास गया जयंत और कहा, पिताजी मुझे बचाओ। इन्द्र ने दरवाजा बंद कर दिया कि ये बाण यहां आयेगा तो मेरा इन्द्रासन चला जाएगा! स्वार्थी आदमी का कोई भरोसा नहीं होता। ब्रह्माजी के पास जयंत गया, तो ब्रह्माजी ने कहा, मुझे साधना करने दे। तू भाग यहां से! शिवलोक गया। वहां से भी निकाला गया। तुलसी कहते हैं, उसी समय हाथ में वीणा लेकर नारदजी आये। जैसे सुदर्शनचक्र को देखकर ऋषि दुर्वासा भागे वैसे जयंत भागता है! राम के द्रोही को कौन रखता है? और जब कोई नहीं रखता है तब कोई संत रख लेता है।

बिकल जयंत को नारद ने देखा और देखते ही उसकी पीड़ा समझ गए और उसकी दया आई क्योंकि संत का चित्त अत्यंत कोमल होता है। संत मिल गए तो जयंत रुक गया। चमत्कार नहीं, परचा नहीं लेकिन संत को देखकर जैसे भागा हुआ जयंत रुक गया और संत के प्रभाव से राम का काल बाण भी रुक गया। तब वो उर्दू शे'र याद आता है -

कज़ा को रोक देती है, दुआ रोशन ज़मीरों की।
भला मंजूर है अपना तो कर खिदमत फ़कीरों की।

नारदजी को सारा वृत्तांत सुनाया जयंत ने। नारद ने कहा, जिसका अपराध किया उसीसे शरणागति और माफ़ी मांगनी चाहिए। हम अपराध समाज में करते हैं और माफ़ी मांगने राममंदिर में जाते हैं! हम शोषण यहां करते हैं और साल में एक बार हरिद्वार जाते हैं! जहां वस्तु खो गई हो वहां खोजो। नारदजी कहते हैं, माँ का अपराध किया है तो माँ की माफ़ी मांग। जयंत माँ के चरणों में गिर पड़ा है और माँ तो करुणा की मूर्ति होती है। जयंत प्रभु की शरण में कृतार्थ होकर चला गया।

रामजी ने सोचा, अब यदि मैं चित्रकूट में रहूंगा तो मेरा प्रभुत्व लोग जानने लगेंगे। राम, लक्ष्मण, जानकी तेरहवें साल में अत्रि-अनसूया के आश्रम में गए। अत्रि ने राघव की स्तुति की।

नमामि भक्त वत्सलं। कृपालु शील कोमलं।
भजामि ते पदांबुजं। अकामिनां स्वधामदं।।

ये स्तुति चित्रकूटी स्तुति है। ये स्तुति अकेले गाओगे तो महसूस होगा कि आप चित्रकूट में हो। सीताजी ने पतिव्रताधर्मा के आचार्या सती अनसूया को प्रणाम किया। अनसूयाजी ने दिव्य वस्त्राभूषण अर्पण करके नारीधर्म का उपदेश दिया। रामायणी लोग इसको 'अनसूयागीता' कहते हैं। स्त्री के उत्तम, मध्यम, नीच, निकृष्ट चार प्रकार है।

उत्तम के अस बस मन माहीं।
सपनेहुं आन पुरुष जग नाहीं।।

'उत्तम स्त्री वो है जिसे अपने पति के सिवा कोई परपुरुष नहीं दिखता।' 'मेरे तो गिरिधर गोपाल दूसरो न कोई।' 'मध्यम परपति देखहि कैसें। भ्राता पिता पुत्र निज जैसें।' मध्यमपुरुष की स्त्री वो है जो दूसरे पुरुष को देखती तो है पर बड़ा है तो बाप जैसे, समान है तो भाईबुद्धि से और छोटा है तो पुत्रबुद्धि से देखती है। 'धर्म बिचारि समुझि कुल रहई।' तीसरे प्रकार की स्त्री के मन में खोट आने लगती है तब कुलधर्म के कारण गलत राह पे नहीं जाती। 'बिनु अवसर भय भय तें रह जोई।' जिसको कुलमर्यादा की पड़ी नहीं, धर्म की चिंता नहीं है, लेकिन गलत सोचने से रह जाती है, अवसर नहीं मिलता और भय लग रहा है। ये चौथे प्रकार की स्त्री है।

यहां अनसूयाजी सीताजी को उपदेश दे रही है। मगर समय होता तो अत्रिजी के पास जाकर राम पूछते, पुरुष कितने प्रकार के हैं? तो अत्रिजी कहते, उत्तम पुरुष वो है जिसे अपनी पत्नी के सिवा कोई ओर स्त्री नज़र ही न आए। मध्यम वो है जो कोई भी स्त्री देखे तो माँ दिखे, बहन दिखे, पुत्री दिखे। धर्म और कुल का विचार करके जो पुरुष गलत मार्ग पे जाने से रुक जाए वो मध्यम पुरुष। भय और समय के अभाव के कारण जो पुरुष रुक जाए वो अधम पुरुष। यहां अत्रि बोले नहीं लेकिन ये इक्कीसवीं सदी है। अत्रि ने छोड़ दिया ये मोरारिबापू पूरा कर रहा है। पुरुष का दायित्व तो ज्यादा है। और वेदांती की भाषा में कहूं तो प्रकृति के भी धर्म होते हैं और पुरुष के भी धर्म होते हैं। प्रकृति याने स्त्री। भाईलोग मूछ पर हाथ न रखे तभी संसार ठीक चलेगा। आदम और ईव की कथा है उसमें पुरुष और स्त्री मिलकर एक शरीर बना था। जैसे हमारे यहां अर्धनारेश्वर है ही। फिर आदम-इव के समय में आधे-आधे में आनंद नहीं आया तो दोनों को बिलग कर दिया। तब से हमारे में रहा आधा पुरुष हमारे में रही आधी स्त्री को खोज रहा है। और बहनों में रही आधी स्त्री खो गया है वो आधा पुरुष खोज रही है। क्योंकि पूर्णता तो तब आएगी जब दोनों पचास प्रतिशत अपनी जिम्मेवारी समझे। सुंदर सीख दी। सीता ने माँ के चरणों में प्रणाम किया और राम, लक्ष्मण, जानकी वहीं से आगे निकले। रास्ते में शरभंगमुनि मिले। फिर रामप्रेमी संत सुतीक्ष्णजी मिले। और सुतीक्ष्ण के कहने पर प्रभु कुंभजऋषि के आश्रम में पधारे। कुंभज ऋषि ने मार्ग दिखाया कि आप गोदावरी के तट पर पंचवटी में जाओ।

कुंभजऋषि के आश्रम से प्रभु आगे बढ़े। रास्ते में गीधराज जटायु मिले। जटायु से संबंध जोड़ा। गोदावरी में पर्णकूटी बनाकर प्रभु निवास करते हैं। एक दिन पंचवटी में लक्ष्मणजी को लगा कि आज प्रभु प्रसन्न है और लक्ष्मणजी ने पांच प्रश्न पूछे, जिसे संत लोग 'लक्ष्मणगीता' कहते हैं।

भक्ति क्या है? ज्ञान क्या है? माया क्या है? जीव किसको कहते हैं? ईश्वर किसको कहते हैं? ऐसे पांच प्रश्न पूछे। भगवान ने पांचों प्रश्न के उत्तर दिए।

एक बार रावण की बहन शूर्पणखा आई। और राम-सीता के मधुर दांपत्य को, राम की शोभा को, सीता की शोभा को देखा। शूर्पणखा ने सुंदरी का रूप लिया। दोनों राजकुमारों को देखकर आकर्षित हो गई। शूर्पणखा सोचती है, सीता बगल में बैठी है इसीलिए मैं जा नहीं सकती। भक्ति पास में हो तो आसक्ति दूर भागती है। तो मैं भक्ति को ही खा जाऊं। शूर्पणखा ने सीता पर हमला किया तब रामजी ने लक्ष्मणजी को संकेत किया कि तू योग्य कर। शूर्पणखा के नाक-कान कट गए और रक्तधारा बहने लगी। नाक का अर्थ है स्वर्ग। स्वर्ग की कामना कामी को निष्काम करती है। शूर्पणखा विकराल बनकर भागी। खर-दूषण को कहा, तुम्हारे जैसे भाई और आपकी चौदह हजार सेना और यहां मेरी ये स्थिति? खर-दूषण ने पूछा, 'तेरा ये हाल किसने किया?' तो शूर्पणखा ने कहा, पंचवटी में दो राजकुमार आये हैं, उन्होंने मेरी ये दशा की।

सुबह में रावण मारीच के पास आया। और कहा, तू स्वर्णमृग बन, मुझे सीता का अपहरण करना है। रावण आए उससे पहले भगवान ने युक्ति बना ली। भगवान के अवतारकार्य में मदद करने के लिए, पराम्बा अग्नि में समा जाती है। प्रतिबिंब रूप रखा। भगवान मारीच को मारने के लिए जाते हैं, पीछे से लक्ष्मणजी जाते हैं और शून्यता देखकर रावण संन्यासी के वेश में आकर जानकी का अपहरण करता है। सीताजी कल्पांत कर रही है। रास्ते में जटायु मिले। जटायु से मुठभेड की। आखिर में रावण ने जटायु की पांख काट दी। असहाय जटायु गिर पड़ा।

मृग को मारकर प्रभु लौटे। मानवलीला करते प्रभु रोने लगे। सीता की खोज करके प्रभु आगे बढ़े। जटायु ने सब कथा सुनाई और प्रभु ने जटायु को अपने अंक में लेकर, पितातुल्य आदर देकर अग्निसंस्कार किया। वहीं से प्रभु सीताखोज में आगे बढ़े। कबंध नामक राक्षस को गति दी। प्रभु शबरी के आश्रम में आये। शबरी ने नव प्रकार की भक्ति की चर्चा सुनी। शबरी जहां से लौटना न हो, ऐसे स्थान में लौट गई। भगवान पंपा सरोवर आए। नारदजी मिलने आए। संवाद हुआ। संतों के लक्षण की चर्चा हुई। उसके बाद 'अरण्यकांड' पूरा हुआ।

'किष्किन्धाकांड' के आरंभ में राम-लक्ष्मण ऋष्यमूक पर्वत के निकट गए। वहां सुग्रीव अपने सचिवों के साथ रहता था। दूर से राम को देखकर भयभीत हो गया कि ये कौन है? हनुमानजी, आप जाओ। वाली का भेजा हुआ कोई मनमैला है तो मुझे संकेत करो, मैं भाग जाऊं। यहां से 'रामचरित मानस' में स्थूलरूप में हनुमानजी का प्रवेश होता है। ब्राह्मण का रूप लेकर हनुमानजी राम-लक्ष्मण के सामने सिर झुकाकर पूछते हैं, आप कौन है? बातों-बातों में हनुमानजी भगवान को पहचान गए और मूल रूप में आकर ठाकुर के चरण पकड़ लेते हैं। गले लगाया और हनुमानजी को कहा, 'तू मुझे लक्ष्मण से भी ज्यादा प्रिय है।' हनुमानजी ने कहा, 'पर्वत पर सुग्रीव है। आप उससे मैत्री कीजिए। सीताखोज में वो आपको सहयोग करेगा।' सुग्रीव और राम का मिलन करवाया। वालि आया, प्रभु ने वालि को निर्वाण दिया। सुग्रीव को राज, अंगद को युवराजपद दिया। प्रभु चातुर्मास करते हैं। सुग्रीव भोग में भगवान का वचन भूल गया और प्रभु ने थोड़ा भय दिखाया। सुग्रीव आया। जानकीजी खोज की योजना बनी। पूर्व, पश्चिम और उत्तर में बंदर-भालूओं को भेजे। अंगद को नायक बनाया, जिसमें मार्गदर्शक जामवंत है। हनुमानजी भी इस टुकड़ी के सदस्य है। उसको दक्षिण में भेजते है। हनुमानजी पीछे है और प्रभु को प्रणाम करके जाते हैं, प्रभु ने मुद्रिका दी। यात्रा आगे बढ़ी। तृषा लगी। स्वयंप्रभा मिली। वहां से समंदर तट पर गये। वहां संपाति मिला। संपाति ने कहा, सीता अशोकवाटिका में अशोकवृक्ष के नीचे बैठी है। मैं देख सकता हूं, पर पांख नहीं है, कार्यशक्ति नहीं है। मेरी दृष्टि पर भरोसा करके कार्य आप करो, जानकी तक पहुंच जाओगे। शतजोजन सागर पार करने के लिए हनुमानजी महाराज का आह्वान किया। जामवंत ने कहा, रामकार्य के लिए मारुति, आपका अवतार है। आप चुप क्यों हो? और हनुमानजी पर्वताकार हुए। मित्रों की शुभकामना लेकर हनुमानजी तैयार होते हैं। 'किष्किन्धाकांड' पूर्ण होता है और 'सुन्दरकाड' का आरंभ होता है -

जामवंत के बचन सुहाए।
सुनि हनुमंत हृदय अति भाए।।
तब लगि मोहि परिखेहु तुम्ह भाई।
सहि दुख कंद मूल फल खाई।।

बीचवाले विघ्नों को पार करके हनुमानजी लंका में प्रवेश करते हैं। सभी जगह सीताजी को खोजा। रावण सोया पाया फिर विभीषण के भवन जाते हैं। दो वैष्णवों का मिलन हुआ है। विभीषण को कहते हैं, तू मेरा भाई है, मुझे बता, हमारी माँ कहां है? भक्ति तक पहुंचने की युक्ति विभीषण ने बताई। हनुमानजी जानकी तक पहुंच जाते हैं। बीच में रावण आता है। फिर हनुमानजी प्रकट होते हैं। मुद्रिका देकर हनुमानजी ने खुलासा किया तब माँ को यकीन हो गया कि ये राम का दूत है। आशीर्वाद दिया। हनुमानजी ने फल खाए, वृक्ष तोड़े। राक्षस रोकने आए उसे मारे-पीटे। अक्षय का क्षय किया। मेघनाद आया और हनुमानजी को बांध लंका गया। रावण का ऐश्वर्य देखकर राजी हुए क्योंकि हनुमान तो शंकर है। फिर हनुमानजी को जलाने की चेष्टा की। हनुमानजी ने पूरी लंका जला दी। हनुमानजी माँ के पास आए। माँ ने चूडामणि दी। हनुमानजी लौट आए और प्रभु को खबर दी। भगवान ने कहा, अब विलंब न करे। पूरी सेना लेकर ठाकुर समुद्र के पास आए। रावण को समझाने विभीषण गया तो उसको त्याग किया। भगवान की शरण में विभीषण आया। उसके बाद प्रभु पूछते हैं, विभीषण, ये शतजोजन सागर बीच में है, तो क्या करे? विभीषण ने कहा, सुना है, आपके कुल का ज्येष्ठ सागर है। आप तीन दिन उपवास करो। समुद्र यदि उपाय दे तो हमें बल का प्रयोग न करना पड़े। समुद्र जड़ता के कारण माना नहीं। प्रभु ने समुद्र के उपर बाण चढ़ाया। जलने लगा! मोती का थाल लेकर प्रभु की शरण में आया, 'आप तीर मारोगे तो असंख्य जलचरों का नाश होगा! महाराज! आप सेतु बनाओ।' यहां 'सुन्दरकांड' पूरा हुआ।

'लंकाकांड' के आरंभ में सेतु की रचना हुई। प्रभु ने कहा, मेरी इच्छा है, कल यहां शिव की स्थापना करो। ऋषिमुनियों को बुलाये गए और भगवान राम के हाथों से शिवजी की स्थापना हुई और नामकरण हुआ रामेश्वर। त्रिभुवन में जयजयकार हुआ। शैव और वैष्णवों के बीच में सेतु बनाया। रामकथा जोड़ने की कथा है। सबने सागर पार किया। सुबेल के उपर भगवान का डेरा। यहां रावण मनोरंजन के लिए अपने अखाडे में आया। प्रभु ने रसभंग करके अपने आगमन का संकेत किया। दूसरे दिन अंगद को प्रस्ताव लेकर भेजा। रावण माना नहीं। युद्ध अनिवार्य हुआ। युद्ध का एलान हुआ। कुंभकर्ण और इन्द्रजित को वीरगति मिली। आख़िर में रावण आया। विभीषण के संकेत पर आसूरीवृत्ति के नाश के लए इकतीसवा बाण रावण की नाभि में और जीवन में पहली बार और अंतिम बार रावण 'राम' बोला। वो धरती पे गिरा! उसका तेज प्रभु में समा गया। त्रिभुवन में जयजयकार हुआ। मंदोदरी ने राम की स्तुति की। रावण का संस्कार हुआ और विभीषण को राजतिलक हुआ। हनुमानजी जानकीजी को खबर देते हैं। सीयाजु अग्नि में अपना प्रतिबिंब का रूप जलाकर मूल रूप में प्रकट हुई और प्रभु पुष्पक विमान में निकले हैं। सेतुबंध रामेश्वर का दर्शन किया। हनुमानजी को अयोध्या भेजा। और प्रभु का विमान शृंगबेरपुर केवटों की बस्ती में उतरा। केवटगण रो पड़े। उनको भी साथ लिया विमान में और 'लंकाकांड' पूरा होता है।

'उत्तरकांड' के आरंभ में अयोध्या में सब बिकल है। एक दिन बाकी है। भरत ने फ़ैसला किया, प्रभु न आए तो मैं मेरा जीवन समाप्त करूंगा। जैसे डूबने को जहाज मिले वैसे हनुमानजी ब्राह्मण के रूप में आये। भरत को मिले। हनुमानजी ने कहा, 'मारुतसुत मैं कपि हनुमाना।' मैं

कोई भी बुद्धपुरुष सेवा करेगा। सेवा की अपनी-अपनी रीत होती है। रामदेवपीर बाबा ने घोड़े पर बैठकर सेवा की, इसका मतलब वो बहुत सक्रिय है। धर्म-धजा को लिए हुए, संयम-नियम के तीर अथवा तो भाले को लिए हुए, मन को नियंत्रित करते हुए वो सेवा में लगे और परम का सुमिरन और फिर समाधि, जिसको साक्षात्कार कहते हैं। सेवा, सुमिरन और साक्षात्कार केवल तीन अध्यायों में हम उनके आदि, मध्य और अंत का दर्शन कर सकते हैं। रामदेवपीर ने रामरूप में सेवा की, देवरूप में सुमिरन किया और पीररूप में परम का साक्षात्कार किया। ये है रामदेवपीर।

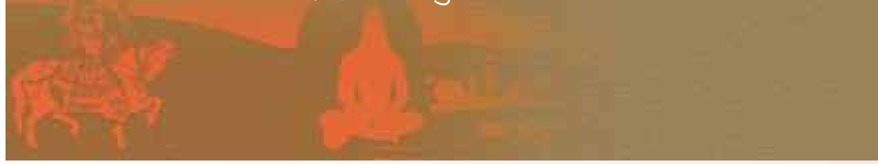

पवनपुत्र हनुमान हूं। अयोध्या में बात फैल गई। प्रभु का विमान सरजू के तट पर आया। बंदर, भालू, असुर सब विमान से ऊतरे। जब के विमान में बैठे तब बंदर, रींछ, असुर थे। अयोध्या में सुंदर मनुज शरीर में ऊतरे। इसका मतलब ये हुआ कि रामकथा आसुरीवृत्ति को मानव बनाने की प्रक्रिया है। सबने जन्मभूमि को प्रणाम किया। गुरुदेव को दंडवत् किया। भरत और राम भेंटे। कोई निर्णय नहीं कर पाया कि दोनों में से कौन वनवासी है? सभी भाईयों को मिले। एक-एक व्यक्ति को ऐश्वर्यरूप लेकर प्रभु ने ब्रह्मसाक्षात्कार करवाया। सबसे पहले प्रभु ने कैकेयीभवन जाकर माँ का संकोच निवारण किया कि माँ, तुने मुझे वन नहीं भेजा होता तो मुझे पता नहीं लगता कि जीवन क्या है? सुमित्रा और कौशल्या को मिले। तुरंत आज्ञा हुई। जानकीजी को स्नान करवाके शृंगार किया। भाईयों को रामजी ने स्नान करवाया। राम ने खुद स्नान किया।

वशिष्ठजी ने ब्राह्मणों को कहा, आज ही राजतिलक कर दें। ब्राह्मणों ने कहा, अब विलंब न करे। दिव्य वस्त्रालंकार धारण किए। दिव्य सिंहासन मंगवाया। पृथ्वी को प्रणाम करके, सूर्य को प्रणाम करके, दिशाओं के देवों को प्रणाम करके, सखाओं को प्रणाम करके, ब्राह्मणवृंद को प्रणाम करके, अपनी जनता को प्रणाम करके भगवान राम सीतासह सिंघासन पर बिराजमान हुए। सबसे पहले विश्व को रामराज्य देते हुए वशिष्ठजी ने राम के भाल में तिलक किया। त्रिभुवन में जयजयकार हुआ। चारों वेद बंदीजन के रूप में आए और भगवान की स्तुति की। भगवान कैलासपति धूर्जटि शिव अपने मूल वेश में आए और राम की स्तुति करने लगे। भगवान की भक्ति लेकर शिव कैलास गए। छः मास के बाद प्रभु ने हनुमानजी को छोड़कर सभी मित्रों को बिदा दी। दिव्य रामराज्य की स्थापना हुई। समयमर्यादा पूरी हुई। जानकीजी ने दो पुत्रों को जन्म दिया। ऐसे ही तीनों भाईयों के घर दो-दो पुत्र हुए। यानी रघुवंश के वारिश के नाम देकर तुलसी ने रामकथा विराम कर दी। जानकी का दूसरी बार का त्याग का विवाद, अपवाद और दुर्वादवाली बात को तुलसी ने छुआ नहीं। संवाद की बात रखी। उसके बाद बाबा कागभुशुंडिजी का जीवनदर्शन है। गरुडजी ने सात प्रश्न पूछे। उसके उत्तर है और आख़िर में भुशुंडिजी गरुड के सामने कथा को विराम देते हैं। याज्ञवल्क्य ने विराम दिया कि नहीं, पता नहीं। शिव ने कथा पूरी की। गोस्वामीजी कथा को विराम देते हुए कहते हैं -

जाकी कृपा लवलेस ते मतिमंद तुलसीदासहूँ।
पायो परम बिश्रामु राम समान प्रभु नाहीं कहूँ।।

तुलसी ने कहा, जिसकी लवलेश कृपा हुई तो मेरे जैसा मतिमंद आज परमविश्राम को प्राप्त कर रहा है।

बाप! इन परमाचार्यों की आशीर्वादक छाया में बैठकर रामदेवरा तीर्थ में रामदेव बाबा की जीवित समाधि के निकट बैठकर मेरी व्यासपीठ मुखर हुई थी, उसको मैं विराम देने की ओर हूं तो लगता है अब कुछ शेष नहीं है। कथा में मदनभैया और उसका परिवार केवल 'स्वान्तः सुख' के लिए निमित्त बन गए। पूरा आयोजन पवित्रता के साथ संपन्न हो रहा है, उसकी व्यासपीठ को बड़ी खुशी है। मेरा अभिनंदन आप सबको है कि एक दिन भी मुझे नहीं कहना पड़ा कि शांति रखो। ये राजस्थान का शील है। मेरे युवान भाई-बहन जो हर कथा में विशेष रूप में सुनते हैं, आपको भी मेरी शुभकामना। जीवन में कई मोड़ आते हैं। कथा सुनने से कोई जीवनमंत्र आपको मिल गया हो तो उसे संजोए रखना।

प्रसन्नता और पवित्रता के साथ आज कथा विराम ले रही है तब आशीर्वाद तो मैं क्या दूं? प्रसन्नता व्यक्त करता हूं कि खुश रहो बाप! देवदिवाली की शुभकामना। नानकजी की पूर्णिमा है तो 'वाहे गुरुजी का खालसा' 'वाहे गुरुजी की फतेह।' ये प्रेमयज्ञ का जो सुक्रित प्रकट हुआ है वो रसयुक्त फल भगवान रामदेवजी की समाधि को समर्पित करूं। लेकिन बाबा को कहूं, तू तो भगवान है, तुझे फल की क्या जरूरत? जैसे नारियल चढ़ाए तो पूजारी वो वापस देता है। एक पूजारी के रूप में ये पूरी कथा का फल समाधि पर चढ़ाकर के मेरे देश के बी.एस.एफ. के जवानों को अर्पण करता हूं। खुश रहो बाप!

सितारों को आंखों में महफ़ूज़ रखना।
बहुत दूर तक रात ही रात होगी।
मुसाफ़िर है हम भी मुसाफ़िर हो तुम भी,
किसी मोड पर फिर मुलाकात होगी।

मानस-मुशायरा

मोहब्बत से ही तेरी नज़रे नज़ारा छिन लेती है।
वो रास्ता कब देखती है, वो रास्ता छिन लेती है।
-विजेन्द्रसिंह परवाज़

वो अब हमें याद आने लगे हैं,
जिसको भुलाने में जमाने लगे हैं।
-खुमार बाराबंकवी

तेरे हाथ में इमदाद है।
तेरी आंखों में उन्माद है।
-मासूम गाज़ियाबादी

कभी रोती कभी हंसती कभी लगती शराबी-सी।
महोब्बत करनेवालों की निगाहें ओर होती है।
-राज कौशिक

पहुंचे किसी दर पे तो दस्तक ही नहीं दी।
आगाज़ के डर से कभी अंजाम के डर से।
छोड़ा न गया मुझ से अंधेरों को अकेला,
पैगाम तो आये थे कई सूरज के घर से।

•

प्रेम परिचय को पहचान बना देता है।
प्रेम वीराने को गुलिस्तां बना देता है।
मैं आपबीती कहता हूं, गैरों की नहीं,
प्रेम ईन्सान को भगवान बना देता है।

समाधियां ये हमारी रात्रि की अंतिम प्रहर की हुंकारी हैं

ध्यानस्वामी बापा एवोर्ड (२०१८) समारोह में मोरारिबापू का अवसरोचित उद्‌बोधन

सबसे पहले जिसकी कृपा और आशीर्वाद से जो कुछ हो रहा है ऐसे पूज्य ध्यानस्वामीबापा की समाधि को और साथ ही साथ जितने समाधिस्थानों से आये हुए महापुरुष हैं, उन सभी समाधियों को इस स्थान से तलगाजरडा पग लगता है। अभी कहा गया वैसा पूज्य बापा की समाधि पर यह त्रिवेणी कार्यक्रम, पाटोत्सव, समूहलग्न और जबसे ये एवोर्ड शुरू हुआ है उस क्रम में इस बार का अपना प्रणाम, अपनी वंदना जहां हम समर्पित कर रहे हैं, ऐसे भाणतीर्थ की पूरी पावन प्रवाही परंपरा को प्रणाम करके, वर्तमान गद्दी पर बिराजित पूज्य जानकीदास बापू को प्रणाम करके, प्रतिवर्ष हमारे साथ जिनकी आशीर्वादक उपस्थिति होती ही है ऐसे पूज्य सायला से पधारे हुए बापू, कच्छ से पधारे हुए बापू, पूज्य दलपतसाहब बापू, शांतिरामजी बापू, इस ट्रस्ट के पूज्य वसंतदासबापू और अपने-अपने स्थान से हमारी प्रसन्नता बढ़ाने आये सभी पूज्य संत-महंत के चरणों में मेरा प्रणाम। साधु समाज के सभी भाई-बहनों, अन्य सभी भाई-बहनों को मेरा जय सीयाराम। तुलसी ने ऐसा वाक्य लिखा है कि-

रामहि सुमिरत रन भिरत देत परत गुरु पायँ।
तुलसी जिन्हहि न पुलक तनु ते जग जीवत जायँ।।

इन तीन जगहों पर जिनके रोमरोम में प्रसन्नता न प्रगट हो, इन तीन घटना में जिसके आठों कोठों में दीवा न प्रगट हो वो जगत में जन्मा, न जन्मा कहलायेगा। उसमें पहला 'रामहि सुमिरत' करने में जिसे प्रसन्नता न हो। जो आनंद से न छलके वो पृथ्वी का बोझ है। अठ़ारह बोझे वनस्पति का भार पृथ्वी को 'रामचरित मानस' में नहीं लगा; सप्त सागर का भार पृथ्वी को 'रामचरित मानस' कथा में नहीं लगा, नव कुल नाग और इतने पर्वतों, उसका भार पृथ्वी को न लगा। पृथ्वी को उनका वजन लगा जिसको ये तीनों करने में प्रसन्नता नहीं होती थी। पृथ्वी गाय का रूप लेकर रंभाई कि अब मुझे किसके पास जाना चाहिए? इसलिए जिन्हें इस तीन वस्तुओं से प्रसन्नता न हो साहब! वे 'मनुष्य रूपेण मृगा: चरन्ति।' ऐसा श्लोक अपने यहां आया है।

तो 'रामहि सुमिरत संत', संत आंतर और बाह्य का संचालक होता है। अंतर्मुखी साधना करनी है उसका भी वो संचालक होता है और समाज में बहिर्मुखी जो घटना घटती है, जिससे समाज अथवा अस्तित्व पूरे का पूरा डोल जाये उसकी व्यवस्था भी कोई न कोई युगपुरुष करता होता है। तब 'रन भिरत', रण में जो आमने-सामने युद्ध लड़े और उसे यदि आनंद न हो, आठों कोठा दीवा न हो। परंतु वो केवल स्थूल युद्ध नहीं; वो भी हो। अपने जवान सरहद पर लड़ रहे हैं; वो भी हो सकता है। परंतु मेरे और आपके अंदर इतने द्वैतों के संघर्ष चलते हैं! उसके सामने भजन द्वारा, संतों के आशीर्वाद द्वारा जो तैयार होता हो, समाज में निंदा-स्तुति के समक्ष उसका संघर्ष करने के लिए तैयार होता हो और ऐसे समय में जिसको प्रसन्नता न होती हो वो जगत में जीया न जीया बराबर है। परंतु तीसरा है अपने गुरु के चरण में प्रणाम करते हुए जिसके रोमरोम में आनंद न होता हो वो आदमी क्या जीया साहब? ऐसी अपनी सभी समाधियां, जिन्हें हमने सेंजळ में बुलाकर मतलब यहां बुलाकर आरती उतारने का मौका मिलता है। वंदन करने का ये उपक्रम है। ये भी जब तक चलेगा तब तक चलेगा, नहीं तो नहीं खेलते! ये तो सब जगह अपनी स्पष्टता है। कोई ऐसा न मान ले कि ये चलता ही रहेगा! न भी चले। ये श्वास भी कहां कायम चलेगी? ये अचानक बंद हो जाय, वैसे ये भी अचानक बंद हो जाय। रूखड़ का कहीं कुछ निश्चित नहीं है। परंतु समाधि की कृपा और आशीर्वाद और आप मेरे परम पूजनीय मुझ पर इतना स्नेह आदर रखते हैं उनकी कृपा से ये सब चल रहा है उसका भी एक आनंद है।

बाप! 'समाधि' स्वतंत्र शब्द है शब्दकोश में। 'समाधि' ये एक पूरा स्वतंत्र शब्द साहित्य की दृष्टि से है। परंतु हम अधिक समझ सके तो इस शब्द को तोड़ना हो तो सविनय, क्योंकि शब्द के साथ क्रीडा करें, उसके लिए भजन चाहिए। मैं कल ही कह रहा था 'रामचरित मानस' को जैसे-तैसे नहीं छूते हैं! वो आग है। वो अग्नि है। जैसे-तैसे स्पर्श नहीं किया जा सकता। वो अग्नि है। इसलिए सविनय तोड़कर अपने जैसे सामान्य आदमी को उसका विशेष अर्थ जानना हो तो सम+अधि इसका नाम समाधि। ऐसा हो सकता है। सम तो समझ में आता है। 'सम: सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम्।' 'तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनी संतुष्टो येन केनचित्।' सबमें 'सम' 'सम' 'सम'। यह तो समझ आया, समानता। ये संतों ने की है। पूरी परंपरा ने की है। किसी को पराया नहीं जाना। 'अधि' शब्द का अर्थ मैं खोज रहा था। अधि उपसर्ग है उसका व्याकरण की दृष्टि से स्वतंत्र अर्थ क्या होगा? फिर एक बार स्पष्ट करता हूं। जो भाषाविद हैं उन्हें अड़चन न हो इसलिए कहता हूं कि इस बापू ने इस समाधि को ऐसे क्यों तोड़ डाली? समाधि को किसी की ताकत नहीं की तोड़ सके! शंकर की टूटे बापू, साधु की नहीं टूटे। बहुत जिम्मेवारीपूर्वक कह रहा हूं। शंकर की समाधि टूटेगी पर साधु की नहीं टूटेगी। वहां ही समाधि का शिखर है। इसलिए भाषाविदों को तकलीफ़ न हो इसलिए 'समाधि' स्वतंत्र होने पर भी, जैसे 'उपाधि' स्वतंत्र है सबकी अपनी-अपनी! उसका संधिविच्छेद नहीं किया जाता। फिर भी 'अधि' का अर्थ शब्दकोश में जो प्राप्त हुआ है, थोड़ा 'भगवद्‌गोमंडल', थोड़ा संस्कृत शब्दकोश उसमें अधि का अर्थ है अधिक, जैसे कि अधिग्रहण अधिनियम, अधिदैवत। विशेष और अधि का एक अर्थ है ऐश्वर्य। जिस समाधि स्थान पर समानता का ऐश्वर्य चमकता हो उसका नाम समाधि है। जहां कोई विषमता नहीं होती।

इसमें से कोई एक स्थान बताइए, जिसने किसी दिन विषमता की हो। कोई भी आया हो उसका सम्मान, उसको भोजन अपनी कक्षा अनुसार दिया है। मतलब समानता का ऐश्वर्य है जगत में ऐसा ऐश्वर्य निरंतर ज्योति में जहां चमकता है। ऐसी समाधियां जहां-जहां है उसकी आरती उतारने के लिए, ये समाधि पुरुषों को प्रणाम करने के लिए, कोई न कोई प्रतिनिधि यहां आता है। और बापू, कन्या के माडो में वरराजा को ही आना पड़ता है। भले बाप कमजोर हो, मजूरी करके माडो छवाया हो साहब! तीन जोड़ी कपड़ा छोटी-सी बैग में तैयार किया हो परंतु वरराजा को ही आना पड़ता है। ये तो हमारा कन्या का माडो है। आपसे यहां हम विनंती करेंगे, आप पधारिए ये हमारे लिए बहुत ही बड़ा अहोभाव, परमआनंद का विषय है। फिर समाधि के साथ बहुत से शब्द आये। उसमें एक शब्द है 'चेतन समाधि'; समाधि का चैतन्य। उसके साथ यह एकदम एकरूप शब्द है चेतन समाधि अथवा समाधि का चैतन्य।

दूसरा समाधि का धूप। ये उसके साथ जुड़ा हुआ है उसका धूप। कालक्रम के अनुसार मुझको और आपको और समाज को जड़ता की शरदी हुई इसलिए धूप की सुगंध हम नहीं ले सकते! होती तो है, जैसे शरदी हो उसे सुगंध नहीं आती। चोला तो होगा, बहुत सुंदर होगा। सोलह शृंगार किया होगा। आदमी आने के साथ ही प्रमाणित हो जायेगा पर आत्मा खत्म हो जायेगी। मेरे कहने का अर्थ जड़ता। मेरे तुलसी की चौपाई है-

जड़ता जाड़ बिषम उर लागा।
गएहुँ न मज्जन पाव अभागा।।

एक जड़ता है। आज जगत में नाना प्रकार की क्राइसिस हैं। उसमें समाज की बहुत बड़ी आपत्ति है जड़ता। रामेश्वर में कथा थी। और मैं तो समाधिवाले प्रेरणा करते हैं तो बोल डालता हूं। फिर जो होना हो वो होवे। बादल जाने और वसुंधरा जाने। समाधिवाला जाने। हमें क्या लेनादेना? माँ-बाप ने सिखाया हो वही बालक बोलता है। हमें समाधि ने जो सिखाया है वो बोलते हैं। इसमें उन्हें नातज होने की जरूरत नहीं। इसलिए अचानक मेरे मगज में आया इसलिए कहा। जिसस क्राइस्ट। एक वो कहलानेवाली चरित्रहीन स्त्री, जिसे उसने धर्म के नियम अनुसार ऐसी कोई चरित्रहीन स्त्री हो उसे खुलेआम पत्थर मारके पीटपीट कर मार डालना चाहिए। और ईसाई धर्म के तथाकथित धर्मावलंबी उस स्त्री पर पत्थर फेंक रहे थे और उसी समय जिसस वहां से निकले। इसलिए सबने जिसस को टोका कि तुम इस धर्म के नडे हो, तुम भी पत्थर मारो। अब यदि जिसस ना कहते कि पत्थर नहीं मारूंगा तो उसने शास्त्र विरुद्ध निर्णय लिया और यदि पत्थर मारते हैं तो तुम कहां

के बुद्धपुरुष थे? समान दिखना चाहिए। तुम कैसे पत्थर उठा सकते हो? अस्तित्व बहुत बार बुद्धपुरुष को मदद करता है। और इसलिए उन्होंने निर्णय किया कि मैं भी पत्थर मारूंगा; तुम भी पत्थर मारो। वो पापी है अवश्य। उसे पत्थर मारो। परंतु पत्थर वही मारे जो जिंदगी में किसी दिन एक भी पाप न किया हो। मैं भी मारु, तुम भी मारो। पत्थर मारना ही चाहिए। अपने धर्म का आदेश है। उठाइये पत्थर। जिसने उठाया भी था उसने डाल दिया नीचे! किसीने दूसरा पत्थर नहीं लिया! ये जिसस की बात है।

अभी ही मनोजभाई को याद किया हरीशभाई ने कि 'अमारे तो शब्दो ज कंकु ने चोखा।' मनोजभाई खंडेरिया। हम सब लालढोरी पर बैठे थे शिवरात्रि को और मनोजभाई आये। जिसस की बात निकली। तब उन्होंने ग़ज़ल का एक शे'र कहा। बापू, जिसके घर दुधैल हो उसे दीपतैल भरने का अधिकार है। इसमें जिसस ही भर सकते हैं ऐसा नहीं। मनोज भी भर सकते हैं। दुधैल होना चाहिए। जिसका भजन बिसुक गया है उसको अधिकार नहीं है, पर जिसका दुधैल अभी बटलोई भर देता है उसे दीपतैल भरने का अधिकार है। इसलिए हम सब राममंदिर, कृष्णमंदिर सभी जगह गृहस्थ बाबा हम सोमवार को जब आटा लेने जाते साथ में कटारी लेते जाते। उसमें से जिसके घर दुधैल होते वो मक्खन और घी देता क्योंकि अधिकार है उसे। उसके घर दुधारू भवेशी हैं। दुधैल न हो वो देगा भी क्या? तलछट भी नहीं देगा! छाछ भी नहीं देगा! इसलिए मनोजभाई भी उसमें सूर मिला सकते हैं। मेरे कहने का अर्थ ये है, कोई ऐसा न कहे, कहां जिसस? कहां मनोजभाई? नहीं कभी-कभी चेतना एम बहती रहती है। इसलिए मनोजभाई ने ऐसा कहा कि मैं अपना सांच बताने के लिए भी किसी को पत्थर नहीं मारूंगा। मुझे अपना सत्य सिद्ध करने के लिए किसी को पत्थर मारना पड़ेगा? यह तो ठीक नहीं है। इसे मैं इस तरह से लेता हूं। फिर मुझको जो कहना था कि जिसस को जब शूली पर चढ़ाया तब उसने इतना कहा, प्रभु इन लोगों को माफ़ कर देना क्योंकि ये लोग नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं? ये जिसस कहते हैं। मुझे इतना ही कहना है, परमात्मा, इस सबको माफ़ कर देना। क्योंकि इन्हें पता है कि वे क्या कर रहे हैं। इतना ही फ़र्क पड़ता है पचीस सौ वर्ष के बाद। जिसस कहते हैं, इन्हें खबर नहीं वे क्या कर रहे हैं। मुझे कहना है कि सबको खबर है। परंतु हमें धूप की सुगंध नहीं आती उसका कारण है हमारी जड़ता। और जानकार भी सहयोगी नहीं बनते! कुछ नहीं हो तो प्रसन्नता व्यक्त करते हैं! मेरे लिए ये शब्द प्रयुक्त होता है, बापू भी लागन थे! धर्मजगत का मुझे बहुत बड़ा आशीर्वाद है! मेरा कहना ये है, समाधि के साथ जुड़ा हुआ शब्द 'धूप' है। धूप होता है। पर मुझको और आपको बास नहीं आती क्योंकि कहीं जड़ता हमारे फेफड़े को जकड़ रखती है। बड़ी से बड़ी क्राइसिस है समाज की जड़ता। जानने के बावजूद जड़ता।

बापू, मुझे ये कहते आनंद होता है कि मैंने तलगाजरडा की गली में समाधि में से निकलनेवाली गंध को, धूप को सूंघा है। जगत प्रमाण मागे तो जगत की ऐसी-तैसी! कोई प्रमाण नहीं देना। परंतु वास आयी है। धूप आया है, आया है। इस नाक से सूंघा हूं, सूंघा हूं, सूंघा हूं। मैंने अपनी माँ सावित्री को पुकारा है कि माँ धूप हो गई है। मेरी माँ घूंघट काढ़ के पग लागी है, लागी है, लागी है! इससे विशेष कोई प्रमाण नहीं है जाओ! इससे विशेष कोई प्रमाण नहीं है। तो समाधि के साथ लगा शब्द है धूप, चैतन्य। बापू, दूसरी बड़ी बात, समाधि के साथ लगा हुआ दूसरा शब्द हम जो प्रयुक्त करते हैं वो है 'समाधि भाषा।' संहिता में सभी 'भागवत'कार कहते हैं, 'भागवत' की भाषा समाधि की भाषा है ऐसा हम सब स्वीकार करते हैं। इन समाधियों की एक भाषा है और वो भाषा सुलझाने का ये एक परिश्रम है। कोई कहीं बैठकर सुलझाता है तो कोई कहीं बैठकर सुलझाता है। जैसे अशोक के शिलालेख को सुलझाने के लिए निष्णात चाहिए। अमुक लिपि को समाज में स्थापित करने के लिए उसके मर्मज्ञ चाहिए, वैसे ही ये स्थान है। ये समाधि की भाषा को सुलझाने का विनम्र प्रयत्न कर रहे हैं कि ये भाषा खुले। किसी भी भाषा में नहीं आती। सभी भाषा से अलग है। कुछ अलग ही उसकी लिपि है। और मुझे लगता है कि इसका शिक्षण तो गुरुपरंपरा में ही होगा। अन्य कहीं नहीं दिया जा सकता है। तो समाधि भाषा। ऐसी तो बहुत-सी वस्तु है, जो समाधि के साथ जुड़ी है। विस्तार होगा। परंतु मुझे कहना है, उस समाधि के साथ जुड़ी है। विस्तार होगा। परंतु मुझे कहना है, उस समाधि के साथ जुड़ता है वो गृहस्थ परंपरा में नहीं कि भाई, तुम शादी करो फिर समाधि की जगह जाकर गुरुबंधन छोड़ दो। वहीं की वहीं छोड़नी होती है। समाधि का काम है समाज की गांठे छोड़ना। और उपनिषदों में ऐसी पांच गांठे हैं। मुझको गाते-गाते जो समझ में आया गुरुकृपा से, इन संतों के आशीर्वाद से वो पांच गांठों को छोड़ता है वो समाधि कायम रहती है। वह माटी का पिंड नहीं है। वह चैतन्य समाधि है। उसमें से धूप होता है। उसकी अपनी भाषा है। उसका अपना एक शब्द है। उसकी अपनी एक महक है।

'महेकादिश्च प्राणआदिश्च इच्छाआदिश्च सत्त्व आदिश्च पुण्य आदिश्च एतां पंचगतां।' उपनिषदों ने पांच गांठ कहा है। और जहां-जहां गांठ छूटती है, कोई भजनानंदी होता है। उसमें पहली, मन की गांठ छूटती है। समाधियां मन की गांठ छोड़ती है। समाज में जहां-जहां मतभेद हुआ, मनभेद हुआ, समाधि की सतही बातें नहीं पर जनम-जनम से मन की कोई अलग बात ही करती है। हम जानते हैं कि कोई भी वस्तु में गांठ आ जाय तब सूत्र क्यों न हो? रूप बदल ही जाता है। एक सामान्य धागा हो, सीधा, सरल, धवल; एक ऐसी गांठ मारो तो दिखता ही नहीं पर थोड़ा छोटा तो हो ही जाता है। गांठ पड़ी यानी सूत्र छोटा ही होगा। गांठ आ जाती है तब सूत्र का रूप बदल ही जाता है। उसे हमें दूसरा ही नाम देना पड़ता है। ऐसी हमारी मन की गांठ खोलने का काम अभी तक ये समाधियां ही करती रही हैं। भाणसाहब ने क्या किया? एक तरफ़ इतना बड़ा कर्मकांड, इतना बड़ा विधिविधान! मैं तो एक ही शब्द पर इस महापुरुष को दंडवत् करता हूं कि 'तुम्हें कुछ करने की जरूरत नहीं।' मेरे लिए किसी विधि की जरूरत नहीं है। भजनानंदियों के लिए किसी विधि की जरूरत नहीं, विश्वास की जरूरत है। विधि तो उसके पीछे-पीछे आयेगी। विश्वास है दुल्हा और विधि है कन्या। फेरा फिरती ही रहेगी पीछे-पीछे। पर दृढ़ विश्वास ये जरूरी होता है। मेरे कहने का अर्थ ये है बाप कि मन की गांठे छोड़ने का काम इन समाधियों ने किया है और करती रहेगी।

दूसरा, प्राण की गांठ छूटती है। प्राण तो बहुत जरूरी है। मन भी जरूरी है। मन न हो तो सुख-दुःख की अनुभूति न हो। तुलसीदास ने मन को केन्द्र में रखकर रामकथा कही है। मध्यकालीन संतों ने कहा है, 'मोरे मन प्रबोध जेहि होई...' परंतु उस मन की जो गांठे हैं, उन्हें छोड़ने का काम इन समाधियों ने किया है। दूसरा प्राण गांठ है। प्राण हो तो जीया जायेगा, उसे गांठ क्यों कहते हैं? प्राण बिना तो जीया न जायेगा। और जीना चाहिए, ये मेरा मत है। जीना चाहिए। साधुक्षेत्र में आता है उसे बूढ़ा होने का अधिकार नहीं है। बापू, शरीर तो शरीर का काम करेगा, परंतु जिस गद्दी पर महंत बूढ़ा हो जाये तो मुझे पसंद नहीं! शरीर तो होगा। भले लकड़ी लो। पर उसके विचार युवान होने चाहिए। और आज वो रूप मेरे और आपके समक्ष आया है इसलिए उसके पग लागने से प्रसन्नता होती है ये सब आ गया है। प्राण जरूरी है। और उपनिषदकार कहता है, प्राण गांठ है। और गांठ छूटनी चाहिए। केन्सर की गांठ जहां तक निकलती नहीं वहां तक आदमी थोड़ा जी सकता नहीं है। पांच-पांच केन्सर की गांठ उपनिषदकारों ने एक्स-रे करके हममें से निकाली हैं। पांच-पांच गांठ! प्राण तो जरूरी है। प्राण है इसलिए तो मैं बोल सकता हूं। आप सभी आये हैं। हम सब आनंद कर रहे हैं।

प्राण तो जरूरी है। तो ये गांठ समझकर उसका ओपरेशन करा डालना चाहिए? नहीं। तलगाजरडा ऐसा कहना चाहता है, प्राण गांठ है उसका नाश नहीं करना पर उसमें जो जिजीविषा बढ़ती जाती है, अभी मैं ऐसा कर लूं, अभी ऐसे कर लूं! केन्सर बढ़ना नहीं चाहिए। थोड़ा बहुत होता है वो पड़ा होता है। जिजीविषा ये भयंकर है। ये समाधियां तो कहती है, हम हजार वर्ष जी सके ऐसे थे पर लो ये बैठ गये! ये भाणबापा बैठ गये एक मेपा के वचन पर। मुझे समझ नहीं आता। बापू, ये घटना क्यों घटती है? ये घटना इस भूमि पर ही घटती है। अपने भारत में ही घटती है। चमत्कार-चमत्कार करके जो छोटे संप्रदाय चलते हैं, छोटे-छोटे धर्म चलते हैं उन्हें दूर से ही प्रणाम! ये तो हाल की कथाएं कि जाओ तो राम दुहाई! और वहीं के वहीं खड़े हो जाते हैं। मेपा का माप कैसा? कितना माप होगा? पर मेपा की अपेक्षा जो खड़े रह गये हैं उसका माप तो आकाश से भी ऊंचा है। और वहां समाधि लेना। जिजीविषा का अंत हो गया। अस्तित्व किसी के मारफ़त बुलाती है कि बैठ जाओ बाबाजी! सब कुछ प्रत्यक्ष हो ये जरूरी नहीं है। थोड़ी आंखें बंद करने की आदत डालो। कितने अंडर करंट चलते हैं? कितनी आंतर चेतनाएं ऐसे अंदर से स्पर्श कर रही है? कितनी बड़ी बात है कि भाणसाहब बैठ जाए!

तीसरी गांठ उपनिषदकारों ने कही है और वो है इच्छा। इच्छा बहुत बड़ी गांठ है! उसमें भी पुत्रेषणा और वित्तेषणा। ये सब लोकेषणा। जितनी अधिक वाह-वाह होती है उतना बड़ा टेक्स चुकाना पड़ता है! इस बज़ट में मुझे खबर नहीं है! हमें कुछ लेना-देना नहीं है! जेटली साहब क्या करेंगे, ये मुझे खबर नहीं है! परंतु जो अधिक करोड़ों रूपया कमाता होगा उसका टेक्स अधिक होगा न? उसी तरह समाज में जिसे अधिक प्रतिष्ठा मिलती है उसे अधिक टेक्स चुकाना पड़ता है। खुशी से चुकाना पड़ता है। इसमें दूसरे नंबर की बही नहीं चलती! इसलिए इच्छा बहुत बड़ी गांठ है, उसे कैसे काटना है? मुझे ऐसा लगता है, मुझको और आपको गृहस्थ होने पर भी किसीने वैरागी मन दे दिया हो वो इन समाधियों ने इच्छा की गांठ छोड़ी है। ये सभी (साधु-संत) लग्न में जाते हैं। समाज के प्रसंगों में जाते

हैं। सभी प्रसंगों को बनाये रखते हैं। मैंने अभी ही कहा, इस दुनिया में बुद्धपुरुष का संबंध संबंधमुक्त संबंध होता है। तो बाप! इच्छा एक गांठ है।

चौथी गांठ है सत्त्वगांठ। सत्त्व गांठ कहलाय बापू? रजोगुण को गांठ कहा जाएगा। तमोगुण को तो बहुत भयंकर गांठ कहा जाएगा पर सत्त्व गुण तो जरूरी है। सत्त्वगुण भी गांठ है। मेरा राम कैसा है?

गुनातीत सचराचर स्वामी।
राम उमा सब अंतरजामी।
क्रोध मनोज लोभ मद माया।
छूटहिं सकल राम कीं दाया।
उमा कहउं मैं अनुभव अपना।
सत हरि जन जगत सब सपना।

ये सत्त्व की गांठ यानी कौन-सी गांठ? सत्त्वगुण तो रहना ही चाहिए। मैं आप के साथ मुंह बनाये रखूं ये ठीक नहीं कहलायेगा। मुझे आपके समक्ष हंसना चाहिए। मुझे आपका स्वागत करना चाहिए। मुझको खुश होना चाहिए। ये सत्त्व तो रहना चाहिए। व्यवहार में हैं तब तक हम कहीं गुणातीत थोड़े हो गये हैं? 'गुणातीत' शब्द प्रयुक्त करना बहुत सरल हो गया है। गुणातीत था मेरा राम। 'गुणातीत अरु भोग पुरंदर।' तुलसी के शास्त्र प्रमाण के साथ बोल रहा हूं। और ऐसे शास्त्रों का प्रमाण है जो जगत का आखिरी शास्त्र है मेरी दृष्टि से। जरूरत होगी तो दूसरा उतरेगा। उसका स्वागत होगा। उसी 'रामायण' से मैं उसकी आरती उतारता हूं। 'रामायण' की आरती कर दूं लेकिन अभी तो आरती इसकी ही उतारनी पड़ेगी ऐसा मुझे लगता है। तो बाप! सत्त्व की गांठ यानी मैंने इतना 'हनुमानचालीसा' का पाठ किया है ये दूसरे को कहने की इच्छा हो वह गांठ है। मैं रोज इक्कीस हजार छः सौ जाप करता हूं उस जप का जितना आनंद नहीं आता पर वह जप करने की दूसरें को खबर पड़े ये सत्त्वगुण की गांठ है कि दूसरे को पता तो चलना चाहिए न! बापू, माला कितनी फेरते हो? तो कहते हैं जैसी भीड़! ये है सत्त्वगुण की गांठ। हमने इतनी सत्यनारायण की कथा पूनमों को करायी हैं। वो कराया बहुत अच्छा पर ये गांठ छोड़! विज्ञापन करने जैसी बात नहीं है! तो सत्त्व ये गांठ है।

पांचवीं और अंतिम गांठ है पुण्य की गांठ। ये उपनिषद सिवाय, ये शंकराचार्य के सिवाय जगत में किसी की ताकत नहीं कि कह सके। अथवा मैं जिसकी कृपा से इस जगत में दौड़ रहा हूं आप के आशीर्वाद से ये 'रामचरित मानस' के सिवाय किसी की ताकत नहीं है।

पुण्यं पापहरं सदा शिवकरं विज्ञानभक्तिप्रदं
मायामोहमलापहं सुविमलं प्रेमाम्बुपुरं शुभम्।
श्रीमद्रामचरितमानसमिदं भक्त्यावगाहन्ति ये
ते संसारपतंगघोरकिरणैर्दह्यन्ति नो मानवाः।।

पुण्य गांठ है, निश्चित। इसका मतलब पुण्यकर्म बंद नहीं करना है। पुण्यकर्म, सत्कर्म करने ही चाहिए। पर ये गांठ तो है ही इसीलिए शंकराचार्य कहते हैं, 'न पुण्यं न पापं न सौख्यं न दुखं।' तो पुण्य भी गांठ है। समाधि का मेरा विचार थोड़ा गुरुकृपा से ये है कि जहां समानता का ऐश्वर्य है। सम+अधि ये शब्द है। समाधि के साथ इतने शब्द जुड़े हुए हैं। समाधि चैतन्य, समाधिभाषा, समाधिशब्द, समाधिधूप। और ऐसी समाधि मेरी और आप की पांच-पांच गांठें छुड़ाने का काम करती है। छेड़छाड़ छूट जाना चाहिए यार! इन पांच-पांच जगहों पर जो हम बंधे हैं वो छूट जाना चाहिए। ये काम समाधियों का है। ऐसी समाधियां अभी भी हमें आधी रात को हुंकार देती है। कहते हैं न फलाना भाई, ये तो हमारी आधी रात की हुंकार हैं। समाधियां ये हमारी रात्रि की अंतिम प्रहर की हुंकार है। वे जवाब न देंगी तो कौन देगा? उसकी भाषा अलग है। उनके उच्चारण अलग है। लेकिन आंख थोड़ी मोतियावाली हुई हो, नंबर बढ़ा हो तो ज्योति थोड़ी मंद दिखेगी। ज्योति मंद नहीं हुई है पर मोतिया आया है! और उसका धूप गया नहीं पर जड़ता की शरदी हुई है! बाप! अभी जस के तस चमक रहे हैं। और उसमें ये युवा चेतनाएं चमकता रखने में प्रामाणिक प्रयत्न कर रहे हैं उन्हें बार-बार पग लागने की इच्छा होती है। इस समाधि स्थान पर आप सभी दुधैल थोड़ी-थोड़ी दीप तैल लेकर आये हैं इसलिए ये सब कुछ चल रहा है। ऐसे ही आशीर्वाद देते रखिएगा। मैं वहां न आ सकूं तो आप आकर दीये में घी भरते रहएिगा। हम लहर करेंगे। आप के बालक हैं बाप! 'हम आप के अंग कहलाते हैं, जीवन किसके आसरे जीएंगे?' अंग बिना का अंगी विकलांग लगेगा। इसलिए आप के साथ जुड़े हैं इससे आप सुंदर लगते हैं। जो नहीं पधार सकते हैं उनका भी आशीर्वाद है। इसका आनंद मुझमें नहीं समाता है। अपने शब्दों को विराम देता हूं। जल्दी एक वर्ष पूरा हो और फिर किसी समाधि के पग लागने का हमें मौका मिलें।

(ध्यानस्वामीबापा एवोर्ड-२०१८ अर्पण समारोह में सैंजळधाम (गुजरात) में प्रस्तुत वक्तव्य)

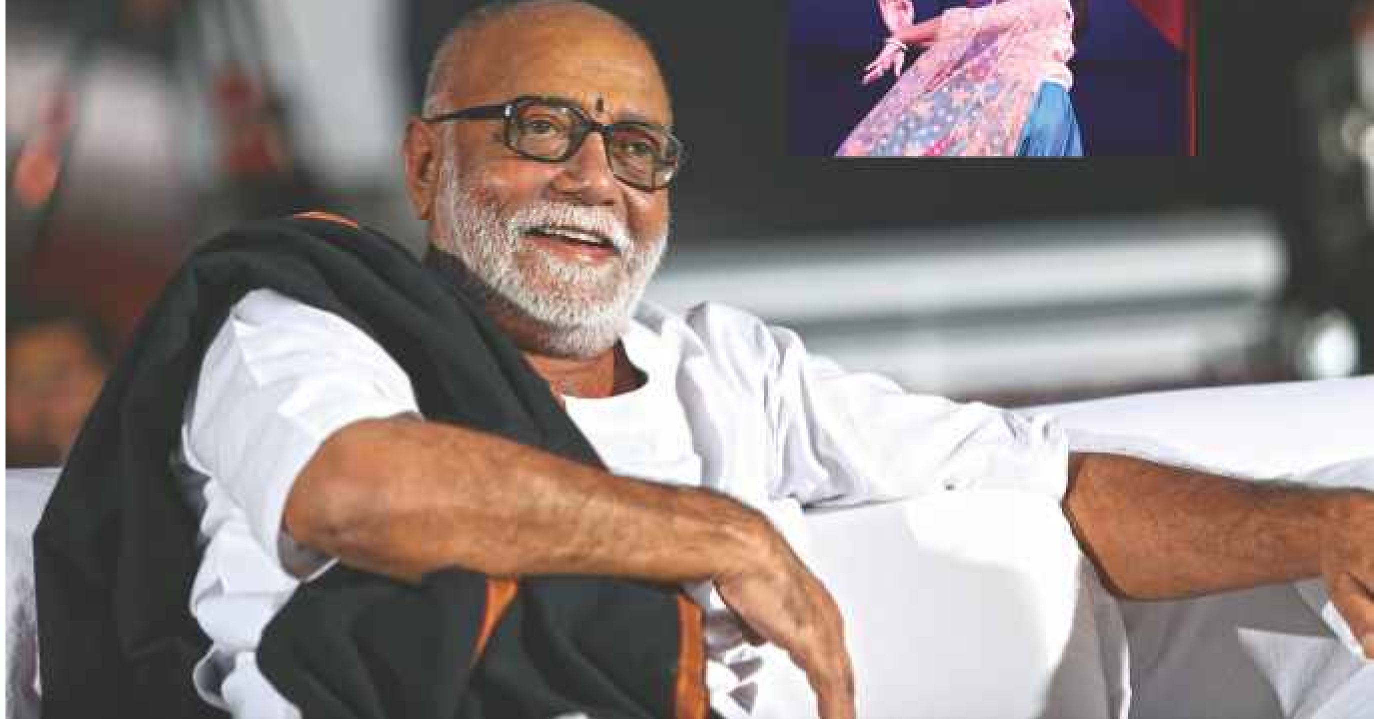

॥ जय सीयाराम ॥